आलमगीर

[ऐतिहासिक उपन्यास]

आचार्य चतुरसेन शास्त्री

दी प्रचारक पुस्तकालय
वाराणसी-१
फोन : २११४

[मूल्य १००

अगस्त १९६५
[२१००]

•

मूल्य
६ ०० मात्र

प्रकाशक
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
पो. बॉ. नं ७०, पिशाचमोचन
वाराणसी-१

मुद्रक
न्यू किरण प्रेस
बनारसेय
वाराणसी-१

आलमगीर

परिच्छेद-सूची

क्रम		पृष्ठ
१	दिल्ली में उत्साह की लहर	क से ङ
२	आम-खास का दरबार	१
३	तख्ते-ताऊस	३
४	बादशाह सलामत	४
५	अमीर नौरजुमंदा	८
६	बड़ी-बहू	११
७	जहाँ-आरा	२१
८	शाही परिवार	२७
९	दिल्ली का लाल किला	२९
१०	हरम	३०
११	महान् साम्राज्य	३३
१२	मुकमए-शाहजहाँ	४२
१३	खानसाह	५२
१४	पिता पुत्री और पुत्र	५४
१५	बेगम की सवारी	६१
१६	बेगम की बारहदरी	६९
१७	हुगली के कैदी	७८
१८	क़ौल-करार	८९
		९२

		पृष्ठ
१९	दरबारे-खिलवत	९६
२०	वसित कुसुम	९९
२१	रोशन-आरा	१०३
२२	मीरजुमला का कूच	१०८
२३	मुग़ल तख़्त ख़ज़ाना	११२
२४	औरंगज़ेब	११६
२५	औरंगज़ेब का हरम	१२१
२६	हीराबाई	१२४
२७	मराठों का उदय	१२८
२८	औरंगज़ेब का कूटचक्र	१३६
२९	पहली चाल	१३९
३	शिकार	१४२
३१	मीरबाबा से मुलाक़ात	१४७
३२	मीरजुमला की शह	१४९
३३	औरंगज़ेब की दूसरी चाल	१५१
३४	फ़ूरत	१५३
३५	ज़ीनतुन्-निसा	१५७
३६	कूच का नक़्क़ारा	१६३
३७	मुस्लमाने का दरबार	१६७
३८	औरंगज़ेब की कठिनाइयाँ	१७२
३९	मुताशिब फ़क़ीर	१७६
४०	अपनी-अपनी डफ़ली अपना-अपना राग	१७९
४१	बहादुरपुर का युद्ध	१८३

		पृष्ठ
४२	दरबारे-खिलवत	१८८
४३	क्षिप्रा के तट पर	१९१
४४	धरमत का युद्ध	१९९
४५	सफ़ेद डाकू	२०५
४६	पाप का खर्चा	२०९
४७	वली-अहद की सेवा में	२११
४८	बुरी खबर	२१५
४९	चम्बल के तीर पर	२१८
५०	चम्बल के पार	२२०
५१	समूग गढ़ का युद्ध	२२५
५२	धमासान युद्ध	२३०
५३	मुराद का संकट	२३२
५४	दारा का पलायन	२३५
५५	माण्डू का हेर-फेर	२३७
५६	आगरे में बदहवासी	२४०
५७	आगरे में	२४२
५८	क़ैद में	२४९
५९	शह-मात	२५५
६०	बेअदबी	२५७
६१	अमला क़दम	२५८
६२	सुनहरा जाम	२६२
६३	पहिला शिकार	२६७
६४	आलमगीर ग़ाज़ी	२७१
६५	सुलेमान शिकोह की दुर्दशा	२७६

पृष्ठ

६६ खजुआ की लड़ाई २७६
६७ औरंगजेब की उमंगें २८२
६८. खुजा की शामत २८४
६९ औरंगजेब का नया हुक्म २८८
७० दौराई की लड़ाई २९०
७१ विश्वासघाती के हाथ में २९४
७२ दिल्ली के बाजारों में २९७
७३ कत्ल २९९
७४ शाही कैदखाना ३०१
७५. खुजा की समाप्ति ३०४
७६ आखिरी शिकार ३०६
सिंहावलोकन दृष्टि ३०९

प्रवचन

– १ –

मुहीउद्दीन मुहम्मद औरंगजेब, शाहजहाँ और मुमताज महल की सातवीं सन्तान था। उसका जन्म दोहद में जो बम्बई सूबे के पंचमहल जिले में इसी नाम के ताल्लुके का प्रधान नगर है, २४ अक्टूबर सन् १६१८ में हुआ।

वह साहसी, तीव्र बुद्धि, गम्भीर और विलक्षण स्मृति का मुबक था। उसका कुरान का ज्ञान तथा हदीस का अध्ययन सम्पूर्ण था। वह बात-बात में उनका उल्लेख करता था। अरबी, फारसी का वह पण्डित था। वह इन भाषाओं को विद्वान की भाँति लिख और बोल सकता था। उन दिनों मुगल हरम की परेहू भाषा हिन्दवी थी, औरंगजेब को भी उसका अच्छा ज्ञान था। वह हिन्दी की लोकप्रिय कहावतों का बातचीत में बहुधा प्रयोग करता था। शृंगारिक काव्य-साहित्य से उसे घृणा थी। उपदेशात्मक वाक्य, कविताएँ उसे पसन्द थीं। धार्मिक ग्रन्थ और कुरान की टीकाएँ, मुहम्मद के जीवनवृत्त वह चाव से पढ़ता था। इमाम मुहम्मद गजनवी की कविताएँ, मुनीर निवासी शेख शर्फुद्दीन और शेख नेजुद्दीन कुब्रवमुद्दी शीराजी के चुने हुए पत्र वह प्रेम से पढ़ता था। चित्रकारी भी उसे पसन्द न थी और गान विद्या का भी उसे शौक न था। न उसे स्थापत्य से प्रेम था। हाँ, चीनी के सुन्दर बर्तनों का उसे शौक था।

इसी औरंगजेब ने आलमगीर प्रथम के नाम से मुगल तख्त पर बैठकर पचास वर्ष अबाध शासन किया।

— २ —

बादशाह शाहजहाँ के फीलखाने में दो दिग्गज हाथी थे। एक का नाम था 'सुधाकर' और दूसरे का 'सूरत सुन्दर'। १८ मई सन् १६३३ के दिन प्रभात में बादशाह ने इन दोनों हाथियों की लड़ाई का आयोजन आगरा में यमुना के समतल तट पर किया। दो भिन्न दिशाओं से दौड़ते हुए वे दोनों हाथी किले के उस झरोखे के नीचे, जहाँ मुख में बादशाह प्रजा को दर्शन देता था आपस में भिड़ गए। हाथियों की यह लड़ाई देखने को उत्सुक शाहजहाँ तीव्रता से वहाँ पहुँचा। उसके तीनों बड़े पुत्र उससे कुछ कदम आगे घोड़े पर सवार खड़े थे। उत्सुकतावश औरंगजेब हाथियों के बहुत निकट पहुँच गया था।

कुछ देर बाद दोनों हाथी एक दूसरे को छोड़कर पीछे हटे। 'सूरत सुन्दर' एक ओर को भाग गया। अपने प्रतिद्वन्द्वी को पास न पाकर 'सुधाकर' ने पास खड़े औरंगजेब पर हमला कर दिया। उस समय औरंगजेब की अवस्था चौदह वर्ष की थी। परन्तु वह निडर अठारहवर्षीय शाहजादा हाथी से नहीं डरा, अपने घोड़े को सम्हाले वहीं डटा रहा और अवसर पाकर उसने निश्शंक आगे बढ़कर हाथी के सिर पर भाले का वार किया। लोग घबरा कर इधर उधर भागने लगे। हाथी को डराने के लिये पटाखे छोड़े गए, पर हाथी बढ़ता ही चला आया। उसने अपने बड़े-बड़े दाँतों की टक्कर से औरंगजेब के घोड़े को गिरा दिया। परन्तु बहादुर शाहजादा फुर्ती से उठ खड़ा हुआ और तलवार खींच कर क्रुद्ध हाथी पर वार करने लगा। इसी समय उसका भाई शुजा घोड़ा दौड़ा कर वहाँ आन पहुँचा और हाथी पर भाले से चोट करने लगा। महाराज जयसिंह भी फुर्ती से आ गए और हाथी पर पिल पड़े। फिर भी हाथी पीछे न हटा। इसी समय 'सूरत सुन्दर' भी झूमता हुआ आ गया। भालों और तलवारों से

घायल और पत्थरों की आवाज से बौखलाया हुआ 'सुधाकर' चिंघाड़ता हुआ भागा। 'सूरत सुन्दर' ने उसका पीछा किया और शाहजादा औरंगजेब बच गया। बादशाह ने दौड़कर उसे छाती से लगा लिया—और 'बहादुर' की पदवी देकर उसकी प्रशंसा की। पर इस घटिया सी साहस के लिए प्यार से उसे डाँटा। तब औरंगजेब ने कहा—'इस लड़ाई में मैं यदि मारा भी जाता तो शर्म की क्या बात थी। मौत तो बादशाहों पर भी परदा डालती है।'

— ३ —

१३ दिसम्बर १६३४ को जब कि औरंगजेब केवल पन्द्रह बरस का था उसे दस हजार घोड़ों का शाही मनसब मिला और इसके एक वर्ष बाद उसे तीन सेनाओं का अधिपति बनाकर बुन्देलखण्ड पर आक्रमण करने भेजा गया। इस मुहिम को उसने एक ही मास में जब किया, ओरछा का प्रसिद्ध मन्दिर ढहा दिया और एक करोड़ का लूट का माल ले वह पीछे फिरा।

— ४ —

१४ जुलाई १६६६ को औरंगजेब को दक्षिणी सूबों का सूबेदार बनाया गया। वहाँ की स्थिति बहुत पेचीदी थी। अहमदनगर के निजामशाही राज्य के अन्तिम सुलतान हुसैन शाह कैद कर लिए गए थे। पर, बीजापुर और गोलकुण्डा के सुलतानों ने अपने राज्यों से संलग्न अहमदनगर राज्य के कुछ प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। शिवाजी के पिता शाहजी ने बीजापुर राज्य की सहायता से एक नए निजाम शाह सुलतान को अहमदनगर राज्य के सिंहासन पर ला बैठाया था, जो वास्तव में उनके हाथ की कठपुतली था। वास्तव में शाहजी ही तब अहमदनगर के अवशिष्ट प्रदेशों पर शासन कर रहे थे।

बादशाह शाहजहाँ ने सुव्यवस्था के विचार से दौलताबाद और अहमदनगर को खानदेश से पृथक करके स्वतन्त्र सूबा बना दिया था। सन् १६३६ में स्वयं बादशाह ने ३० हजार मुगल सैन्य लेकर बीजापुर और गोलकुण्डा पर आक्रमण किया था। दोनों राज्यों ने पराजित हो मुगल राज्य की आधीनता स्वीकार कर ली थी। इस प्रकार दक्षिण में मुगल राज्य की सीमा निर्धारित कर तथा बीजापुर, गोलकुण्डा और अहमदनगर राज्यों को आधीन कर शाहजहाँ ने सन् १६ में औरंगजेब को दक्षिण का सूबेदार बनाया था। औरंगजेब ने औरंगाबाद नगर बसा, उसे राजधानी बना, वहाँ का चातुर्यपूर्ण शासन किया।

— ६ —

२१ जनवरी सन् १६४० में औरंगजेब को बल्ख और बदख्शां का सूबेदार तथा प्रधान सेनापति नियत किया गया। ये दोनों प्रान्त हिन्दुकुश पर्वत के उस पार काबुल के ठीक उत्तर में मुसलमान राज्य के आश्रित थे। वहाँ का शासक सुलतान नजर मुहम्मद खाँ एक कमजोर और अयोग्य शासक था। उसके राज्य में निरन्तर विद्रोह होते रहते थे। ये दोनों प्रान्त तैमूर की राजधानी समरकन्द की राह में थे और कभी इन पर बाबर का अधिकार रहा था। इसी दावे पर शाहजहाँ ने उन पर अधिकार करके अपनी सेनाएँ भेजी थीं। पहले वहाँ मुराद बख्श को भेजा गया। पर वह मध्य एशिया में रहना नहीं चाहता था और उजबकों का सामना करने से हिचकता भी था। वह दो महीने वहाँ रहकर बिना बादशाह की आज्ञा लिए वहाँ से भाग आया और तब औरंगजेब को वहाँ भेजा गया।

औरंगजेब को कभी न थकनेवाले चपल उजबकों से कठिन मोर्चा लेना पड़ा। और निरन्तर युद्ध करना पड़ा। कष्ट और कठिनाइयाँ बहुत थीं। एक-एक रोटी का मूल्य दो रुपया हो गया था और पानी भी ऐसा ही महँगा मिलता था। पर औरंगजेब ने वीरत्व, दृढ़ता और

नियन्त्रण से सेना को निरन्तर में रखा। अन्त में नजर मुहम्मद से संधि हो गई। इस युद्ध में धन-जन की बहुत हानि हुई। चार करोड़ रुपया खर्च हुआ और एक इंच जमीन भी न मिली।

— ६ —

सन् १६४८ से ६२ तक वह सिन्ध और मुलतान का सूबेदार रहा। मुलतान और सिन्ध के प्रान्तों में बसनेवाली अफगान और बलूच जातियाँ बहुत ही चंगली और पिछड़ी हुई थीं। मुगल साम्राज्य के इन सीमान्त प्रदेशवासियों को औरंगजेब नाम मात्र को साम्राज्य के आधीन कर सका। फिर भी उसने इस प्रान्त को बहुत व्यवस्थित किया और सिन्धु नदी के निचले भाग में एक नया बन्दरगाह स्थापित किया।

— ७ —

इस बीच वह ईरानियों से कन्धार छीनने दो बार वहाँ भेजा गया। भारतवर्ष में पश्चिमी दिशा से आनेवाले मार्ग के मुख-द्वार पर स्थित दक्षिण से काबुल को आनेवाली राह को रोकने वाला, कन्धार का यह किला, इन दो महत्त्वपूर्ण मार्गों की निगहबानी करता था। कन्धार से आगे पूरे १६० मील तक समतल मैदान चला गया है। और उस मैदान के पश्चिमी छोर पर हिरात का प्रसिद्ध किला था। हिरात के पास ही हिन्दुकुश की पर्वतश्रेणी की ऊँचाई कम होने लगती है जिस से मध्य एशिया और फारस से भारत पर आक्रमण करनेवालों को हिन्दुकुश पार करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी। हिरात से भारत को आनेवाली इसी राह पर स्थित होने के कारण कन्धार का यह किला सैनिक दृष्टि से बहुत महत्त्व रखता था। उन दिनों काबुल का सूबा दिल्ली साम्राज्य में सम्मिलित था, इसलिए भारत की सुरक्षा के लिए कन्धार का किला सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और अत्यावश्यक मोर्चे की श्रेणी में गिना जाता था।

इन दिनों हिन्द महासागर पर पुर्तगालियों की जल-सेना का एकाधिपत्य था, जिसके कारण भारत से फ़ारस की खाड़ी तक के जल मार्ग प्रायः बन्द से ही रहते थे। भारतवर्ष और मलाक्का उत्पन्न करनेवाले द्वीपों से पश्चिमी देशों में जानेवाला सारा व्यापारी सामान स्थल-मार्ग ही से मुलतान, पेशिन और कन्धार की राह ही फ़ारस और मेसोपोटामिया जाता था। उन दिनों प्रतिवर्ष विभिन्न माल से लदे हुए कोई १४ हज़ार ऊँट इस मार्ग से फ़ारस जाते थे। इसी कारण कन्धार शहर उन दिनों अत्यन्त सम्पन्न और व्यापार का केन्द्र भी बन गया था और उसका व्यापारिक महत्त्व भी उतना ही था जितना सामरिक। इस प्रकार इस भौगोलिक, आर्थिक और सामरिक स्थिति के कारण कन्धार का किला भारतवर्ष और फ़ारस के महाराज्यों के बीच कशमकश का एक प्रधान कारण बन गया था। सन् १६२६ में जहाँगीर के अन्तिम दिनों में ईरान के शाह अब्बास ने ४५ दिन घेरा डालकर इसे जब्त किया था। इसके बाद वहाँ के ईरानी सूबेदार अलीमर्दानखाँ ने अपने स्वामी से विश्वासघात करके यह किला चुपचाप शाहजहाँ को सौंप दिया था। परन्तु ईरानियों ने ५७ दिन घनघोर युद्ध कर उसे फिर कब्जे में कर लिया था।

परन्तु केवल सामरिक और आर्थिक महत्त्व के ही कारण नहीं, अपनी प्रतिष्ठा और मर्यादा के विचार से भी अब यह आवश्यक हो गया था कि वह किला फिर मुग़लों छीन लें—शाहजहाँ के पुत्रों ने कन्धार के तीन घेरे डाले, पर सफलता नहीं मिली। पहिला घेरा था सन् १६४८ में औरंगज़ेब और वज़ीर सादुल्ला खाँ के सेनापतित्व में डाला गया था उसमें ३० हज़ार मुग़ल सेना थी। जिसके साथ तोपख़ाना भी था। पर शाही सेना के सारे ही प्रयत्न विफल हुए। दूसरी बार किला लेने की तैयारियाँ और भी बड़े पैमाने पर की गईं—औरंगज़ेब और सादुल्ला खाँ ने सन् १६५२ में फिर किले को जा घेरा।

हाथियों को ढकान को तोपें काम में लाई गईं, और लाइनों तक सुरंगें खोदी गईं तथा लाई का पानी सुखाने के प्रयत्न किए गए। 'चेहल तीना' लगाकर दुर्गों पर चढ़ने की चेष्टा की गई। परन्तु ये सभी प्रयत्न व्यर्थ हुए और दो महीने बाद शाही फौज पीछे फिर आई। निस्संदेह यह औरंगजेब की असफलता थी और बादशाह इस पर असन्तुष्ट भी हुआ। परन्तु इस असफलता का कारण दूषित युद्ध नीति ही थी।

— ८ —

कन्धार से काबुल लौट आने पर औरंगजेब को दूसरी बार सन् १६५२ में दक्षिण का सूबेदार बनाया गया।

सन् १६४४ में उसने जब दक्षिण की सूबेदारी छोड़ी थी तब से वहाँ की शासन-व्यवस्था बहुत ही खराब थी। यद्यपि इन सूबों में शान्ति बनी रही। किन्तु बहुत-सी उपजाऊ जमीन पड़ती रहकर जंगलों में बदल गई। किसानों की संख्या कम हो गई। उनकी आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। इससे सूबों की आय भी कम हो गई। वहाँ कभी पूरी बसती नहीं हुई, पर शाही लश्कर का बहुत धन दक्षिणी सूबों पर खर्च होता था। सम्पूर्ण दक्षिणी सूबों की वार्षिक आय तीन करोड़ साठ लाख रुपये थी, पर बसूल होता था एक करोड़ रुपयों से भी कम। इसलिए इन प्रान्तों में सुव्यवस्था बनाए रखने को अन्य समृद्धिशाली प्रान्तों की आय खर्च करनी पड़ती थी।

औरंगजेब को दक्षिण पहुँच कर सबसे प्रथम इस कठिन आर्थिक परिस्थिति का सामना करना पड़ा। उसे खेतीबाड़ी सुधारने उसे बढ़ाने और किसानों की दशा को सुधारना था, पर इसके लिये पर्याप्त धन चाहिए था। निरन्तर युद्धों के कारण प्रान्तों में अराजकता फैली हुई थी, और देश उजाड़ हो गया था। दस वर्षों से भी अधिक काल से शासन प्रबन्ध अव्यवस्थित था।

परन्तु औरंगजेब का साहस और धैर्य तथा बुद्धिबल सर्वत्र व्यर्थ करता था। उसने नए सिरे से जमीन का बन्दोबस्त किया और मालगुजारी व्यवस्था स्थापित की। इस काम में खुरासान के मुर्शिद कुली खाँ ने—जो कन्धार से वहाँ के ईरानी सूबेदार अलीमर्दान खाँ के साथ ही भाग आकर भारत में बस गया था—औरंगजेब की भारी सहायता की। यही विचक्षण प्रबन्धक पुरुष दक्षिण में औरंगजेब का दीवान था।

इससे पहिले दक्षिण में मालगुजारी की कोई स्थायी व्यवस्था न थी। जमीन को अलग-अलग विभागों में बाँट कर उनकी सीमाएँ निश्चित करना, खेतों का क्षेत्रफल मापना, प्रतिबीघा के हिसाब से मालगुजारी निर्धारित करना, अथवा मालगुजार और किसानों के बीच कुल उपज के बटवारे आदि के तरीके-कायदे निश्चित करना इन सब बातों को औरंगजेब ने दक्षिण में जारी किया। पहिले वहाँ का किसान एक हल और एक जोड़ी बैल से मनचाही जमीन जोत-बो लेता था और प्रति हल के हिसाब से राज्य को थोड़ा-सा कर दे देता था। मालगुजारी की दर भिन्न-भिन्न थी, जो शासकों के इच्छानुसार होती थी। किसान बरसों तक लगातार वर्षा के अभाव और निरन्तर युद्धों के साथ होते रहते युद्धों से पूरे बर्बाद हो चुके थे। वे घर-बार छोड़ भाग गए थे, गाँव उजाड़ पड़े थे। खेत जंगल हो गए थे। औरंगजेब ने इस नए सुधार को योग्य हाकिमों की देखरेख में व्यवस्थित किया। सब जगह चतुर अमीनों तथा ईमानदार पैमाइश करने वालों, जमीन नापनेवालों—खेतों के रकबे आदि का ठीक लेखा-जोखा रखने तथा खेती की जमीन को पहाड़ी भूमि से तथा नदी-नालों से पृथक निश्चित करने के लिए उपयुक्त कार्यकर्त्ता नियुक्त किए। गाँव के मुखिया मुकद्दम वहाँ के चरित्रवान जनों को बनाया। शाही लश्करों से, खेती के पशु, बीज और तकावी दी। इससे देखते

ही-देखते दक्षिण के उजाड़ गाँव आबाद हो गए और खेत लह-लहाने लगे।

उसने दक्षिण में राज्यशासन में भी भारी सुधार किए। अयोग्य—बूढ़े लोगों को हटा कर महत्त्वपूर्ण पदों पर विश्वसनीय और योग्य अधिकारी नियुक्त किए। सैनिक संगठन के कुप्रबन्ध को दूर किया और अनुभवी सेनानायकों की नियुक्ति की। किलों के शस्त्रागारों, अन्न भण्डारों का सुव्यवस्थित किया तथा उन्हें सम्पन्न किया। बढ़िया तोपची और गोलंदाज नियुक्त किए। अयोग्यों को अलग किया। इससे जहाँ फौज व्यवस्थित हो गई वहाँ साल में ५० हजार रुपया सालाना की बचत भी हुई।

— ९ —

अन्त में वह समय भी आया जब वह अपनी सबसे बड़ी मुहिम पर संसार का सबसे बड़ा बादशाह होने को दक्षिण से चला। विजय ने उसके चरण चूमे और उसने भाइयों के रक्त से सने हाथों को धो-पोंछ कर पचास वर्ष उन्हीं हाथों से मुगल साम्राज्य का महान् चक्र चलाया।

— १० —

इस महान् बादशाह का चरित्र ही सत्रहवीं शताब्दी के पिछले पचास वर्षों का भारतवर्ष का इतिहास है। भारत के इतिहास में उसका शासन-काल बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसके आधिपत्य में ही मुगल साम्राज्य की सीमाएँ अपनी अन्तिम हद को पहुँच गई थीं। गजनी से लेकर चटगाँव तक और काश्मीर से लेकर कर्नाटक तक भारत महादेश इसी एक शासक के आधीन था। इस्लाम ने अपना आखिरी जोश इसी शासन-काल में पूरा किया। इस अभूतपूर्व विस्तृत साम्राज्य की राजनैतिक एकता अक्षुण्ण थी। इसके साम्राज्य में

विभिन्न प्रान्तों का प्रबन्ध छोटे-छोटे स्वाधीन राजाओं के हाथ में न रहकर सीधा बादशाह द्वारा नियुक्त कर्मचारियों द्वारा ही होता था। और इसी से इतिहासकार इसके साम्राज्य को अशोक, समुद्रगुप्त या हर्ष के साम्राज्य से कहीं अधिक विशाल और परिपूर्ण कहते हैं। इसी बादशाह के शासनकाल में दो महान् घटनाएँ हुईं—एक दक्षिण में अठारहवीं शताब्दी में मराठा राजवंश के प्रभावशेषों से मराठा-राष्ट्रीयता का उदय हुआ और दूसरे उत्तर में सिख सम्प्रदाय ने सैनिक रूप धारण कर मुगल साम्राज्य के विरुद्ध तलवार उठाई। इस प्रकार अठारहवीं उन्नीसवीं शताब्दियों में विकसित प्रमुख भारतीय ऐतिहासिक घटनाओं का प्रारम्भ भी इसी महान् सम्राट के राज्यकाल में हुआ।

इसी सम्राट् के जीवन-काल में मुगल तख्त डगमगाने लगा। साम्राज्य के खजाने और गौरव का दिवाला निकल गया। शासन व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई और मुगल राजसत्ता देश में शान्ति और राज्य की एकता बनाए रखने में असमर्थ हो गई। भारत के भावी शासकों के पैर भारत में जम गए। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सन् १६५३ ई० में मद्रास प्रान्त, १६८० में बम्बई और १६९० में कलकत्ता प्रेसिडेन्सी की नींव डाली। जिससे उन योरोपीय आश्रय स्थानों ने साम्राज्य के भीतर दूसरे स्वाधीन राज्य का रूप धारण कर लिया। सत्रहवीं शताब्दी के आखीर में मुगल साम्राज्य की जड़ें खोखली हो चली थीं। खजाना खाली पड़ा था, मुगल सेना दुश्मनों से पराजित व अपमानित हो चुकी थी। देश में स्वतन्त्र राज्य स्थापित होने लगे थे। मुगल साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो रहा था। साम्राज्य का नैतिक पतन हो चुका था। लोगों की निगाह में मुगल साम्राज्य के प्रति आदर का भाव नाम मात्र को भी न था। सरकारी कर्मचारी ईमानदारी व कार्यकुशलता खो चुके थे, न मन्त्री शासनपटु थे, न राजा। सेना निस्तेज-निर्बल और अनियन्त्रित थी। आगे चलकर नादिरशाह और

अहमदशाह ने मुगलों की महिमामयी राजधानी दिल्ली और मुगल सम्राट् की इज्जत खराब करके उनकी महत्त्वहीनता सिद्ध कर दी।

औरंगजेब निर्बुद्धि, आलसी और व्यसनी न था। उसकी मानसिक सतर्कता प्रसिद्ध थी। वह गम्भीर मनन और गहरी लगन से राजकाज देखता था। मानवीय ज्ञान उसका सम्पूर्ण था। युद्ध और कूटनीति का भी वह विशारद था; फिर भी इस बड़े बादशाह के पचास वर्ष के शासन का परिणाम निकला अव्यवस्था-अशान्ति-पतन !!!

— ११ —

यह राजनैतिक वैषम्य भारतीय राजनीति और इतिहास के विद्यार्थी के लिये मनन करने योग्य है। औरंगजेब की जीवनी एक ऐसे भाग्य-हीन मनुष्य की जीवनी है जो जीवन भर निष्ठुर भाग्य के साथ लड़ता और पराजित होता रहा। उसके पचास वर्ष के कठोर शासन का अन्त घोर अव्यवस्था में हुआ। उसके जीवन के प्रारम्भिक चालीस वर्ष इस महान् साम्राज्य के योग्यतम सम्राट् बनने वाले आत्मशिक्षण में बीते। एक वर्ष तख्त-ताऊस के लिए कठिन युद्ध में बीता जिसमें उसकी सारी शक्तियों की परीक्षा हो गई। यद्यपि उसके शासन के प्रारम्भिक २६ वर्ष शान्त और समृद्ध व्यतीत हुए। जब कि वह उत्तर भारत की राजधानियों में ठाट से रहा। उसके सब शत्रु नष्ट हो चुके थे। उसके सतर्क शासन के संकेत पर भारत का विशाल साम्राज्य-चक्र चल रहा था। धन धान्य बढ़ रहे थे और वह दुभागा बादशाह कीर्ति और ऐश्वर्य के सर्वोच्च शिखर पर पहुंच गया था।

परन्तु मुगल खून का प्रभाव ही उसका दुर्भाग्य बन गया और उसी का पुत्र मुहम्मद अकबर उसका विद्रोही बन बैठा। इस विद्रोही शाहजादे ने मराठा राजा की शरण ली और वह औरंगजेब को दक्षिण सीमा से गया। वहाँ उसके २६ वर्ष व्यतीत हुए। साम्राज्य का

खजाना, सेना का संगठन और बादशाह का स्वास्थ्य दक्षिण के अतफल युद्ध में बर्बाद हो गया।

अभी भी ऊपरी दृष्टि से सब ठीक-सा लग रहा था। बीजापुर और गोलकुण्डा मुगल साम्राज्य में मिल गए थे। मराठा राजा मार डाला गया था, और उसकी राजधानी जब्त हो चुकी थी। तथा उसका सारा कुटुम्ब बन्दी बना लिया गया था। प्रगट में औरंगजेब एक विजयी सम्राट् ही प्रतीत होता था। परन्तु उसके अन्तिम जीवन के १८ वर्ष अपने विरुद्ध एकत्रित जटिल शक्तियों से संघर्ष करने में और उनमें निरन्तर असफल होने में बीतते चले गए। उसने बहुत चालें बदलीं, अनेक नए साधनों और उपचारों का प्रयोग किया। वह ८८ वर्ष की आयु में स्वयं युद्धस्थल में उतरा, परन्तु बेकार !!!

अन्त में मृत्यु ने उसका दामन पकड़ा और अहमदनगर में उसकी जिन्दगी का सफर खत्म हुआ !!!

चतुरसेन

शाहदरा
दिल्ली शहादरा
प्रथम नवम्बर
सं० २००८

: १

दिल्ली में उत्साह की लहर

सन् १९५६ की सावनी बुधाई को दिल्ली की सब शाही कचहरियाँ बन्द थीं। कुल दफ्तरों की छुट्टियाँ थीं। बादशाह साहबों की आज्ञा से तमाम हिन्दू मन्दिरों में विशेष आरती हो रही थी। उनके शंख और घड़ियालों के सुमधुर नाद से नगरनिवासी उस दिन बहुत खुश हो गए थे। सारे नगर में एक चहल-पहल मच गई थी, तमाम मस्जिदों में सामूहिक प्रार्थनाएँ हो रही थीं, सारा शहर कई दिन से सजाया जा रहा था। बाजार की सफाई हो गई थी, और तमाम आम रास्ते रङ्ग-बिरङ्गी झण्डियों से सजाए गए थे। सड़कों पर पिछली रात से ही छिड़काव हो रहा था। सरकारी बरकन्दाज और प्यादे दौड़-धूप करके बन्दोबस्त कर रहे थे। अमीर उमराव सज-धज कर लवाजमे के साथ भाँति भाँति की सवारियों पर किले की ओर जा रहे थे। किले की सड़क हाथियों, पालकियों, और घोड़ों की सवारियों से भरी हुई थी। रङ्ग-बिरङ्गी पोशाकें पहने झुण्ड के झुण्ड नागरिक किले की ओर तेजी से जा रहे थे। किले में आज एक बड़ा भारी दरबार होने वाला था, जिसमें शरीक होने के लिये बादशाह सलामत ने हर ख़ासोआम को हुक्म दिया था। इस खुशी के कारण का ठीक-ठीक पता किसी को न था। लोग आपस में पूछ-ताछ कर रहे थे, बहुत लोग बहुत तरह की बातें कर रहे थे। गप्पी लोगों को गप्प उड़ाने का काफी मसाला मिल गया था। जो जिसके मन में आता था बकता था। कोई कहता था, हजरत शाहजादा दारा शिकोह आज बड़ी भारी मुहिम फतह करने के लिए कूँच करने वाले हैं। कोई कहता था, जी नहीं पनाहे आलम

आम खास का दरबार आज खासतौर पर सजाया गया था। उसका प्रत्येक खम्भा जरी के काम के बहुमूल्य परदों से मढ़ा गया था। छत में रेशमी चँदोवे लगे थे, जिसमें रेशम और जरी के फुँदने टँके हुए थे। फर्श पर बहुत बढ़िया नर्म रेशमी कालीन बिछे थे। बाहर एक बड़ा भारी खीमा खड़ा था जो सहन में काफी दूर तक फैला हुआ था। उसके चारों ओर चाँदी की पत्तियों से मढ़ा हुआ कटहरा लगा था। इस खीमे में लकड़ी के तीन बड़े खम्भे खड़े थे जो दूर से जहाज की मस्तूल की भाँति दीख पड़ते थे। इस खीमे के बाहर की ओर लाल रङ्ग का कपड़ा लगा था और भीतर मछलीपट्टम की छींट थी। यह छींट इसी काम के लिए तैयार कराई गई थी। उसके बेल बूटे ऐसे प्राकृत थे और उनका रङ्ग ऐसा चटकीला एवं स्वाभाविक था कि देखते ही बनता था।

अमीरों को खास तौर पर इस अवसर पर हुक्म दिया गया था कि आम खास के चारों ओर की महराबें अपने खर्च से सजावें। उन्होंने शाही कृपा प्राप्त करने के लिए एक-से-एक बढ़कर अपनी-अपनी महराब सजाई थी। आम खास की सारी दीवारें कमखाब और जरी के काम के दुशालों से ढक गई थीं और जमीन बहुमूल्य सुन्दर कालीनों से भर गई थी।

: ३ :

तख्ते-ताऊस

सम्राट् अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ ने तीन पीढ़ियों में बहुत से रत्न हीरे-मोती जमा किए थे। बादशाह ने सोचा इन रत्नों को यदि लोगों ने नहीं देखा तो फिर बात ही क्या? उस समय बादशाह के पास ५ करोड़ रुपयों के जवाहरात थे। इनमें दो करोड़ रुपये मूल्य के

जवाहरात हरम में हाथियों के पास रहते थे, शेष तीन करोड़ रुपये मूल्य के रत्न बाहर कीमत दासों के पास रहते थे। इनके सिवाय दो करोड़ मूल्य के रत्न शाहज़ादों, शाहज़ादियों तथा अन्य लोगों के पास थे।

बादशाह ने कीमत दासों के पास जो रत्न थे उनमें से कुछ उत्तम रत्न जिनका मूल्य सोलह लाख रुपया था—चुनकर निकाल लिए और सरकारी सुनारों को बुलवाकर वे सब रत्न तथा एक लाख तोला सोना जिसका मूल्य उन दिनों सिर्फ चौदह लाख रुपया था, देकर सुनारों के प्रधान बेदादल खाँ को हुक्म दिया कि ठोस सोने का एक ऐसा रत्न जटित सिंहासन तैयार करो जैसा पृथ्वी पर किसी बादशाह के पास न हो।

बेदादल खाँ ने दो सौ चुने हुए कारीगरों की सहायता से आठ वर्ष में यह तख़्ते ताऊस तैयार किया था। यह सिंहासन साढ़े तीन गज लम्बा और सवा दो गज चौड़ा तथा पाँच गज ऊँचा था। सिंहासन की छतरी के नीचे के हिस्से में मीनाकारी की हुई थी। छतरी के भीतर बहुत कम हीरे जड़े थे परन्तु ऊपरी हिस्से में असंख्य बहुमूल्य पत्थर लगाए गए थे। पन्ने के बारह खम्भों पर सिंहासन की छत थी। उनके ऊपर मणि-मुक्ता के दो मोर बने हुए थे। इन मोरों के बीच में हीरे जड़ा एक वृक्ष बना था। गद्दी पर चढ़ने को तीन सीढ़ियाँ थीं, सीढ़ियाँ रेलिंग से घिरी थीं। केवल सम्राट की बैठक के सम्मुख रेलिंग नहीं थी। रेलिंग के भीतर सम्राट के बैठने का मसनद था। इस बैठक के बनाने में दस लाख रुपए खर्च हुए थे। इसमें एक ऐसी मणि जड़ी थी जिसका अकेली का ही मूल्य एक लाख रुपया था। इस मणि को फ़ारस के शाह अब्बास ने सम्राट जहाँगीर को उपहार में दिया था। इसमें तैमूर, मीर शाहरुख, मिर्ज़ा उलुग बेग, शाह अब्बास, जहाँगीर और शाहजहाँ के नाम खुदे हुए थे। सिंहासन के भीतर हाजी मुहम्मद जान कुन्दहारी की बनाई हुई चालीस पंखुड़ियों

की एक कविता मीनाकारी के अक्षरों में खुदी हुई थी। कविता के शेष तीन शब्द थे—ओरंग ए शाहंशा-ए-आदिल, अर्थात् न्यायपरायण राजाधिराज का सिंहासन।

मुनारों के वेतन को छोड़कर केवल सिंहासन बनाने के मसालों को खरीदने में एक करोड़ रुपया खर्च हुआ था।

विश्व के महार्घ रत्नों से निर्मित वह अप्रतिम सात करोड़ रुपये मूल्य का सिंहासन वास्तव में आत्मीयों के रक्त से निर्मित हुआ था।

आज पहली बार ही बादशाह सलामत इस अलौकिक सिंहासन पर बैठकर दरबार करने वाले थे। इस अलौकिक तख्त को देखने के लिए छोटे-बड़े सब लोग बहुत उत्सुक थे। तख्त पर तीन मसनद निहायत नर्म मलमल के पड़े थे। एक बड़ा था जो पाँच बालिश्त गोल था, वह बादशाह की पीठ के सहारे के लिए था। दो गोल और थे जो दोनों बाजुओं में रखे थे। नीचे एक अति बहुमूल्य चटाई पर कारचोबी काम की गद्दी बिछी थी। तख्त के इर्द-गिर्द एक कदम के फासले पर एक ऊँचा सुनहरी जंगला था जिसमें केवल शाहजादे ही जा सकते थे। इसी स्थान पर वे लोग तसलीमात बजाकर तख्त के नीचे खड़े हो सकते थे। तख्त के पीछे बहुत से कद्दावर गुलाम छाते, छतरियाँ, पीकदान, हुक्का, पानदान, तलवार, चौरी आदि लिये मुस्तैद खड़े थे। तख्त से नीचे वजीर और बड़े-बड़े उमराओं के लिए जगह थी जो एक रुपहले कटहरे से घिरी थी। अमीर और वजीर अपनी जगह पर चुपचाप सारी-सारी बगलें पहने नीचे सिर झुकाए और दोनों हाथ कुहनियों पर रखे खड़े थे। कटहरे के चारों ओर गुर्जबरदार लोग मुस्तैद थे। उनके हाथों में सुनहरे गुर्ज थे, वे बड़ी फुर्ती से शाही अहकाम शाहजादों, वजीरों और सिपहसालारों तक पहुँचा रहे थे। इससे एक कदम पीछे हटकर खुला स्थान था, जहाँ फौज के अफसर

रवारी आज्ञाओं को सूबों के हाकिमों, सिपहसालारों और शाहजादों तक उसी भाँति पहुँचा रहे थे। इनके चारों तरफ सिंगरफी रङ्ग का तकाशी के काम का लकड़ी का बंगला था जो सारे दरबार को चारों ओर से घेरे हुए था।

जिस जगह पर वह तख्त बिछा था, उसमें बीस बड़ाऊ स्तून थे, जिन पर उस आमखास की छत थी। यह छत उस तमाम जगह पर फैली हुई थी जिसमें कपड़ों बंगला लगा था। इसके आगे भाग में जरबफ्त का एक कीमती शामियाना लगा था जो सोने के स्तूनों पर खड़ा था। लकड़ी के बंगले के बाहर एक विस्तृत मैदान था, जहाँ तरह तरह के घोड़े एक तरफ और जो ही दूसरी तरफ खड़े थे। इनके बाद ही चार बड़े-बड़े हाथी खड़े थे जो सिर से पैर तक सुनहरी झूलों से सजे थे, ये हाथी बादशाह सलामत को सलाम करने की रस्म अदा करने के लिए लाए गए थे। इनके बाद बहुत से पहरेदार सिपाही सफ बाँधकर खड़े थे। सबके अन्त में एक बड़ा भारी दालान था जहाँ ८० प्रकार के बाजे वाले मुस्तैद खड़े थे। बादशाह के आते ही ये बाजे बजाए जानेवाले थे। कुछ अफसर सब व्यवस्था की निगरानी मुस्तैदी से कर रहे थे। दरबार में आश्चर्यजनक सन्नाटा और व्यवस्था थी। प्रबन्ध के लिए जो जमादार फिर रहे थे, उनके हाथ में सुनहरी डण्डे थे, वे कपड़ों बंगले के भीतर भी आ-जा सकते थे। ये लोग अत्यन्त सावधानी से देख रहे थे कि कोई ऐसा काम, जिससे बादशाह अप्रसन्न हों, न होने पाए।

तख्त के बिलकुल निकट सुनहरी कटहरे से घेरकर, तख्त के नीचे और एक छोटा-सा तख्त था जो शाही तख्त के समान ही इस समय सूना था। यह तख्त बादशाह के बड़े पुत्र शाहजादा दारा के लिए था—जिनके वली अहद होने की घोषणा बादशाह कुछ दिन प्रथम कर चुके थे, और जिसे आगे से ही केवल बादशाह के दरबार में बैठने का सम्मान प्राप्त था।

बादशाह सलामत

दरबार में हजारों आदमी आ चुके थे। फिर भी भीड़ बढ़ती ही जा रही थी। इतना होने पर भी सर्वत्र गजब का सन्नाटा था। सब व्यवस्था एक जादू की भाँति हो रही थी और सब लोग बादशाह सलामत के आने की प्रतीक्षा में चुपचाप खड़े थे।

एकाएक तमाम बाजे बड़े जोर से बज उठे। कटहरे के बाहर खड़े हाथियों ने महावतों का संकेत पाकर सूँड़ें उठा उठाकर बादशाह सलामत को सलाम करना प्रारम्भ किया। धीरे-धीरे बादशाह हवादान पर सवार होकर रङ्गमहल से निकलते दीख पड़े। तातारी युवतियाँ हवादान को उठा रही थीं। आगे-पीछे सोने मढ़ी तलवार लिए चल रहे थे। उनके पीछे गुलाम-खासे, छतरियाँ, पानदान, पीकदान, तलवार और चौरी लिए आ रहे थे। नकीबों ने ललकार कर आवाज लगाई "अदब होशियार—निगाह बराबर" सब लोग जमीन पर दृष्टि दिए झुककर तस्वीर की भाँति खड़े रहे। बादशाह तख्त पर आकर बैठ गए। बादशाह की पोशाक एक बहुत सुन्दर फूलदार रेशम की बनी थी और उस पर बहुत अच्छा जरी का काम किया हुआ था। सिर पर जरी का मन्दील था, जिस पर बड़े-बड़े बहुमूल्य हीरों का तुर्रा लगा था। उसमें एक पुखराज तो ऐसा था जिसकी जोड़ का पत्थर संसार में न था, वह सूर्य की भाँति चमक रहा था। उनके गले में बड़े-बड़े मोतियों का कण्ठा था जो पेट तक लटकता था।

बादशाह ने इस समय अपने सिर, गले, बाँह और कमर में जो रत्न धारण किए थे उनका मूल्य दो करोड़ रुपए था। पगड़ी के तरपेच

में बहुत दाम के अलभ्य रत्न लगे हुए थे। इसमें ५ बड़ी-बड़ी चुन्नियाँ और चौबीस मोती थे। बीच वाली का ही वजन २१८ रत्ती और मूल्य २ लाख रुपए था। सरपेंच का मूल्य सब वस्तुओं के साथ १२ लाख रुपये प्रथम ही था, आज इस दरबार की खुशी में बादशाह ने इसमें चालीस हजार रुपये मूल्य का एक देदीप्यमान मुक्ता बढ़वाया था, यह मुक्ता सरपेंच की सबसे बड़ी चुन्नी से कुछ छोटा था। इस दरबार के उपलक्ष्य में एक अलौकिक चुन्नी को ४७ रत्ती वजन की थी और मूल्य में ५१ लाख रुपये की थी—मुसव्वर दारा ने बादशाह को नजर की थी और बादशाह उस सूर्य के समान देदीप्यमान चुन्नी को सरपेंच में लगाकर सिंहासन पर सुशोभित हुए थे। सम्राट के रत्नागार का सबसे बड़ा हीरा जिसका वजन ४३० रत्ती और मूल्य दो लाख रुपया था वह भी सरपेंच में लगा हुआ था। सम्राट के हाथ में जो तसबीह थी उसमें ५ चुन्नी और तीस मोती पिरोए हुए थे। प्रत्येक दो दानों के बीच में एक-एक बालूल था। तसबीह के सुमेरु का वजन १२ रत्ती और मूल्य ४० हजार रुपये था। तमूची माला का मूल्य बीस लाख रुपये था।

बादशाह का चेहरा अत्यन्त गम्भीर और प्रभावशाली था। बादशाह की आयु सत्तरह वर्ष की थी। उनके सिर और दाढ़ी के सब बाल सफ़ेद हो गए थे किन्तु चेहरा सुर्ख और दीप्ति सतेज थी। सबसे पहिले शाहजादा दारा ने सहमते-सहमते सामने आ, बंगले के पास खड़े होकर झुककर आदाब बजाया। फिर दूसरे कटहरे से कुछ कदम आगे बढ़कर सुनहरे बंगले के पास पहुँचकर तीन बार सलाम किया, और पीछे हटकर अपनी जगह पर बैठ गया।

एकाएक दरबार के बाहर बहुत-सा शोर हुआ। कदम बढ़ाते बहुत से गुलामों ने आगे बढ़कर रास्ता दिया। मसनद से हाथ ऊँचा करके आदाब लगाई और एक सतेज वृद्ध बहुमूल्य श्वेत वस्त्र पहने धीरे-

धीरे दरबार में आगे को बढ़ा। यह आदमी ठिगना-पतला और फुर्तीला था। उसका रङ्ग गोरा, नाक उभरी हुई और माथा चौड़ा था। वह एक बहुमूल्य हीरों का तरपेच पगड़ी में लगाए था। उसके गले में भी हीरों का एक अमूल्य कण्ठा था। उसका कमरबन्द कीमती रत्नों से जड़ा था। उसके दरबार में आते ही हलचल मच गई। प्रत्येक व्यक्ति उस प्रभावशाली वृद्ध पुरुष को कौतुक और आश्चर्य से देखने लगा। हजारों दृष्टि उसपर केन्द्रित हो गईं।

असल में यही वह व्यक्ति था जिसके स्वागत के लिए आज के दरबार की धूमधाम की गई थी। इस आदमी का नाम मीरजुमला था और यह गोलकुण्डा के बादशाह का प्रधान वजीर था। इसी के लिए बाजार, शहर, किला और दरबार ठीक उसी भाँति सजाए गए थे जैसे लाल बादशाह के लिए सजाए जाते हैं। मीरजुमला के पीछे कई शाही अमीर थे जो बादशाह के हुक्म से उसके स्वागत के लिए भेजे गए थे। मीरजुमला पहले चौखटे के निकट, बादशाह से कोई पचास फुट के अन्तर पर आकर खड़ा हो गया। फिर उसने तीन बार जमीन तक झुककर बादशाह को आदाबअर्ज किया। बादशाह ने नजर उठाकर मीरजुमला की ओर देखा और मुस्कुराया। मीरजुमला आगे बढ़ा और सुनहरी कटहरे के पास जाकर उसने फिर तीन बार झुककर बादशाह को सलाम किया। अन्त में झुककर तख्त को चूम लिया। फिर उसने साढ़े बारह लाख रुपये की अशर्फियाँ, कुछ अच्छे मोती और १ लाख बादशाह को नजर किया। जिसका मूल्य १ लाख रुपया था। इसके सिवा सोलह चुने हुए अरबी नस्ल के अरबी घोड़े, ६ चढ़ाऊ तलवारें और एक हीरों का हार बादशाह की सेवा में पेश किया। साथ ही बहुत से थाल जो फलों और मेवों से भरपूर थे, नजर किए। इसके बाद वह दस कदम पीछे हटकर रुपहले कटहरे के भीतर वजीरों की बगल में खड़ा हो गया।

तमाम दरबार में सन्नाटा छाया था। बादशाह ने धीमे स्वर से कहा—"अमीर मीरजुमला, तुम्हारी बहादुरी, वफ़ादारी और लियाक़त, जो तुमने बीदर के किले को फ़तह करने में प्रगट की है, को देखकर हम तुम्हारे निहायत मशकूर व ममनून हैं, और इस सैरसपाटी और लिहमत के सिले में हम तुम्हें बजोरे आज़म और गुलरज़म खाँ का ख़िताब अता फ़र्माते हैं।"

मीरजुमला कुछ क़दम फिर आगे बढ़ा और फिर तीन बार बादशाह को सलाम करके बोला—"जहाँपनाह की क़द्रदानी और नज़रे इनायत का यह ख़ादिम तहेदिल से शुक्रिया अदा करता है। और अपनी दिली आर्ज़ू अर्ज़ करता है कि हज़रत सलामत ताबीस्त इस ग़ुलाम का जाँनिसार ही पाएँगे।"

बादशाह कुछ देर चुपचाप मुस्कुराते रहे। फिर उन्होंने कहा—"बेशक, हमें यही उम्मीद है। और हमारी मन्शा है कि तुम्हारे पर कमान एक बड़ी फ़ौज वाले फ़ारस पर भेजें। हमने उस बादशाह से कन्धार छीनने का, मुद्दत हुई अज़्म किया था और अब वह वक़्त आया है कि हम तुम्हें इस मुहिम पर भेजें। इसके लिए उम्दा शाही तोपख़ाना और चुनींदा सिपाही हमने रवाना कर दिया है।"

मीरजुमला क्षण भर चुपचाप सिर नवाए खड़ा रहा। फिर उसने धीरे से अपने वस्त्रों में से एक तेजस्वी हीरा निकाला—जो मार्तण्ड के समान था। वह बिना तराशा हुआ जवाहर था। उसके प्रकाश से दरबार जगमगा उठा। और सब दरबारी उस अद्भुत रत्न को आश्चर्य और कौतुक की नज़र से देखने लगे। मीरजुमला ने आदब से आगे बढ़कर दोनों हाथों में वह रत्न उठाकर बादशाह की सेवा में पेश करके कहा—"जहाँपनाह, जिस तरह हुज़ूर तमाम दुनिया के बादशाहों में सबसे बड़े हैं, उसी तरह यह जवाहर भी तमाम दुनिया के जवाहरात का सरताज है। इसका वज़न १६० कैरट है और ऐसे जवाहरात हुज़ूर ही जैसे शहनशाहों की सेवा में रहने लायक़ हैं। कन्धार की राजधानी

में अगर इस किस्म के जवाहरात पैदा होते हों तो हुजूर जरूर ही वहाँ तशरीफ ले जाएँ या किसी मर-मिटने वाले खादिम को भेजने की तकलीफ गवारा करें। लेकिन इस गुलाम की तो आरजू यह है कि हुजूर उन मुल्कों को फतह करने का इरादा फरमाएँ, जहाँ ऐसे-ऐसे बेश कीमती जवाहर सचमुच पैदा होते हैं, गोलकुण्डा, बीजापुर, बंगीबार, सीलोन इस किस्म के मुल्क हैं।'

यह कहकर उसने एक बार अपना हाथ ऊपर को उठाया—जिसमें वैसे ही बड़े-बड़े हीरों के मुजर्रब बैठे थे। फिर उसने मेहमरी नजर से बादशाह की ओर देखकर धीरे धीमे स्वर में कहा—'आलमपनाह, बेअदबी माफ हो, कन्धार के संगदिल पत्थरों की बनिस्बत, जहाँ चढ़ाई करने का जहाँपनाह कस्द कर चुके हैं, गोलकुण्डा के राज्य पर, जिसकी खानों में ऐसे-ऐसे अनगिनत जवाहर भरे पड़े हैं कब्जा कर लेना ज्यादा मुफीद है। (धीरे से) जहाँपनाह, गुलाम तो यह भी कहने की जुर्रत करता है कि हुजूर को उस वक्त तक गोलकुण्डा के मुजाफिलों फौजकशी करनी चाहिए, जब तक कि कन्याकुमारी तक का मुल्क तख्ते मुगलिया के कब्जे में न आ जाय।' यह कहकर मीरजुमला ने वह अलौकिक हीरा बादशाह को नजर कर दिया।

मीरजुमला की प्रगल्भ बातें सुन कर बादशाह बड़ी देर तक उस हीरे को देखते रहे। कुछ ठहर कर उन्होंने वह हीरा मीरजुमला को देते हुए कहा—'अमीर मीरजुमला, यह नायाब जवाहर अमानतन अपने पास रखो और किसी उमदा कारीगर से कटवा दो, तुम्हारी बातें काबिले कद्र हैं और उन पर गौर किया जायगा। बिलफेल तुम्हें हुक्म होता है कि शाही महल के सामने जो बजीर सईदुल्ला खाँ का महल है उसमें मुकीम हो।'

मीरजुमला ने प्रथम बादशाह को और फिर दारा को तीन बार सलाम किया—और पीछे हट कर अपनी जगह पर खड़ा हो गया।

बाजे बजने लगे और बादशाह तख्त से उठे। नकीबों ने आवाज बुलन्द की। तमाम दरबारी जमीन तक झुक गए। धीरे-धीरे बादशाह सलामत और दारा दोनों महल में चले गए।

सब अमीर उमरा तितर-बितर हो गए। आज का दरबार बर खास्त हुआ।

५ :

अमीर मीरजुमला

पिछले परिच्छेदों में जिस महत्वपूर्ण घटना का वर्णन किया गया है—उससे २६ वर्ष पहिले सन् १६३० के वैशाख महीने में एक ईरानी घोड़ों का सौदागर गोलकुण्डा में कुछ अच्छी नस्ल के घोड़े बादशाह को बेचने के लिए आया था, उसी के साथ एक ईरानी नवयुवक नौकर था जो बड़ा चतुर, फुर्तीला और अच्छा शहसवार था। उसका नाम मुहम्मद सैयद था। वह आर्दिस्तान के इलाके का निवासी था और इसका बाप इस्फहान में तेल का कारोबार करता था। वह अपनी जन्मभूमि को छोड़ कर दक्षिण भारत के सुलतानों के दरबार में भाग्यपरीक्षा के लिए चला आया था। यहाँ की अच्छी जलवायु और धन कमाने की महत्वाकांक्षा ने उसे गोलकुण्डा ही में रख लिया। कुछ दिन तो वह यूं बचकर गुजारा करता रहा। परन्तु जल्द ही वह उस नगर का एक प्रतिष्ठित व्यापारी हो गया। अपनी मिलनसारी और उदारता से उसने अपने अनेक मित्र बना लिए। उच्च राजकर्मचारियों से साँठ-गाँठ करके इसने कई जहाज खरीदे। भाग्य ने उसका साथ दिया, ये जहाज समुद्र में सफलतापूर्वक आजा करते रहे और उसके पास बहुत-सा धन इकट्ठा हो गया। वह धार्मिक प्रवृत्ति का भी आदमी था और बुद्धिमान भी। अपनी उद्योगशीलता, व्यापार, चातुर्य और

बम्मबात तेजस्वी शक्ति के कारण मीरजुमला को अपने प्रत्येक काम में निश्चित सफलता मिलती गई। शीघ्र ही राजदरबार में उसकी पहुँच हो गई और वह देखते-ही-देखते शाह गोलकुण्डा अब्दुल्ला कुतुबशाह की नाक का बाल बन गया। उसके मित्रों ने उसे बादशाह के सामने बहुत बढ़ा-चढ़ा कर उपस्थित किया। अवसर पाकर उसने कई बढ़िया हाथी तथा योरोप और चीन के बने नायाब वस्त्रों के बहुमूल्य थान बादशाह को नजर किए। इस प्रकार उसकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई, और उसे गोलकुण्डा का प्रधान मन्त्री बना दिया गया, जिससे उसे अधिक आमदनी होने लगी।

उसने अपने कामों को खूब मन लगा कर किया और बादशाह का उस पर बहुत विश्वास बढ़ गया। राज्य-शासन और युद्ध-क्षेत्र दोनों ही में अपूर्व योग्यता के कारण वह गोलकुण्डा का वास्तविक शासक बन गया। अन्त में बादशाह ने उसे कर्नाटक का गवर्नर बनाकर भेज दिया। वहाँ आकर उसने अपनी खूब प्रतिष्ठा बढ़ाई और वह गोआ के पोर्तुगीज गवर्नर डामफ्रिलिप्त मस्करेनिया का गहरा दोस्त बन गया। दोनों बहुधा एक दूसरे को मूल्यवान तोहफे भेजते रहते थे। गोआ के गवर्नर की भेंट में चीन और योरोप की अद्भुत चीजें हुआ करती थीं। इनके बदले यह कर्नाटक की खानों से निकले मूल्यवान हीरे और जवाहरात उसकी भेंट करता था। कर्नाटक का हाकिम होने के बाद उसने इस सूबे के बहुत से हिन्दू मन्दिर और खजानों को लूट कर अटूट धन संग्रह कर लिया था फिर भाग्य और उद्योग की खूबी से उसे कई हीरे की नई खानें भी मिल गई थीं।

कर्नाटक के गवनर होने के बाद उसने शाह गोलकुण्डा की फौज के अलावा एक अपनी खास फौज भरती कर ली थी, जिसमें उत्तम श्रेणी का तोपखाना पोर्तुगीज तोपचियों और अफसरों के हाथ में था, जिसके बराबर अच्छा निशानेबाज उन दिनों भारत भर में नहीं था।

उसने बहुत-सी तोपें दगवाईं और अपनी सेना को सुनियन्त्रित किया तथा कड़पा जिले पर अधिकार कर लिया। साथ ही गंडीकोटा का दुर्गम दुर्ग भी जीत लिया। उसके सेनापति जय पर जय करते हुए अर्काट के उत्तर में तिरुपति और चन्द्रगिरि तक बढ़ते चले गए। उन्होंने जमींदोज खजाने का पता लगाया और लूट लिया—इन विजयों से उसके पास अकूत सम्पत्ति एकत्र हो गई और उसने अपनी कर्नाटक की जागीर को एक स्वतन्त्र राज्य में परिवर्तित कर लिया, और अपने स्वामी से पूर्णतया स्वतन्त्र होकर सचमुच कर्नाटक का बादशाह बन बैठा।

इन सबसे ऊपर एक बात यह थी कि शाह गोलकुण्डा की एक बेगम से इसकी आशनाई हो गई थी और वह सुन्दरी इस पर जान मारा करती थी।

धीरे-धीरे शाह गोलकुण्डा को ये सब बातें मालूम होने लगीं। उसकी इस बढ़ती के कारण उसके बहुत से दुश्मन दरबार में उत्पन्न हो गए थे। उन सबने भी बादशाह के कान भरे। अपनी बेगम का इससे गुप्त प्रेम भी बादशाह पर प्रकट हो गया, फलतः वह इसका जानी दुश्मन हो गया। परन्तु तब तक इसकी ताकतें बहुत बढ़ गई थीं। शाह उससे भय खाने लगा था। फिर भी वह उसे नष्ट कर देने की चिन्ता में लगा ही रहता था। इसी बीच एक और वाहियात घटना हो गई। मीरजुमला का पुत्र मुहम्मद अमीन कई वर्षों से मीरजुमला का प्रतिनिधि बनकर राज-शासन का काम करता था—वह खुलेआम दरबार में भी सुलतान का बहुत कम अदब करता था। एक दिन वह खूब शराब पीकर नशे में लड़खड़ाता हुआ दरबार में आया और खुद सुलतान की गद्दी पर जा लेटा और दे करके गद्दी को खराब कर दिया। इस बात से शाह गोलकुण्डा बहुत ही गुस्सा हो गया।

अन्ततः उसने मीरजुमला को दरबार में बुला भेजा—और भरे दरबार में उसे बहुत-से अपशब्द कहे, और उसे कड़ा दण्ड देने की धमकी दी। उस समय अवसर न समझ वह चिकनी-चुपड़ी बातें सुनकर वहाँ से चला आया। परन्तु उसे अपनी प्रेमिका बेगम तथा मुहम्मद अमीन खाँ और अन्य मित्रों से पता लग गया कि बादशाह उसकी जान का गाहक हो रहा है और उसे तुरन्त वहाँ से भाग जाना चाहिए। इसलिए वह रातों-रात वहाँ से भाग गया। इस पर शाह ने मुहम्मद अमीन और उसके सब बाल-बच्चों को कैद कर लिया। इस पर मीरजुमला ने गोलकुण्डा राज्य को विध्वंस करने और तख्त को उलट देने की ठान ली।

उन दिनों शाहजादा औरङ्गजेब औरङ्गाबाद में रहता था, जो वहाँ से १६ दिन का रास्ता था। औरङ्गजेब की आयु उस समय केवल २८ वर्ष की थी। वह दक्षिण का हाकिम था। मीरजुमला ने औरङ्गजेब को एक खत लिखा—खत का मजमून इस प्रकार था—

शाहजादे आलम,

मैंने गोलकुण्डा की वह बड़ी बड़ी खिदमतें की हैं कि जिनके नाम जमाना जानता है और जिनके लिए उसे मेरा बहुत ही ममनून होना चाहिए। मगर इतने पर भी वह मेरे खान्दान की बर्बादी की फिक्र में है। इसलिए मैं आपकी पनाह लेना और आपके हुजूर में हाजिर होना चाहता हूँ और इस दरखास्त की कबूलियत के शुकराने में, जिसकी पैरवी की आपकी जानिब से कामिल उम्मीद है, एक नजराना अर्ज करता हूँ जिसके जरिये से आप बजालानी बादशाह अब्दुल्लाह को गिरफ्तार करके उसके मुल्क पर कब्जा कर सकते हैं। आप मेरे वादे की सच्चाई पर एतबार और भरोसा फरमाएँ। इंशा अल्लाह यह मुहिम न तो कुछ मुश्किल ही होगी न कुछ खतरनाक ही। बानी आप ५ हजार चीदा सवारों के साथ बहुत जल्द बिला तवक्कुफ कूच

करते हुए गोलकुण्डा की तरफ से आवें, जिसमें आपको सिर्फ सोलह दिन लगेंगे और यह मशहूर कर दें कि शाहजहाँ का वकील शाह गोलकुण्डा से बाब करने मुआमिलात में गुफ्तगू करने को मागनगर (मागनगर अब हैदराबाद दक्कन है।) आ रहा है और यह फौज उसी की अदली में है। चूँकि वह वकील जिसकी मार्फत हमेशा अमूमी इत्तला बादशाह को हुआ करती है, मेरा करीबी रिश्तेदार है और उस पर मुझे कामिल यकीन है, इसलिए मैं वादा करता हूँ कि एक ऐसा हुक्म जारी हो जायगा कि जिससे आप बिना रुकावट मागनगर के दरवाजे तक पहुँच जायेंगे। और जब शाह गोलकुण्डा फर्मान के इस्तकबाल के लिए जो वकील के पास हुआ करता है—आवे, तो आप उसे बजाबानी पकड़ कर ऐसा मुनासिब समझें पेश आ सकते हैं अलावा अभी इस मुहिम का कुल खर्च मैं दूँगा और इसके इस्तकबाल तक ५० हजार रुपये रोज देता रहूँगा।

—आबमन्द मीरजुमला"

गोलकुण्डा बहुत ही उपजाऊ और सिंचाई के साधनों से पूरी तरह सुसज्जित देश था। यहाँ की जनसंख्या बहुत अधिक थी और निवासी परिश्रमी थे। इस राज्य की राजधानी यही मागनगर उस समय—केवल एशिया भर ही में नहीं—सारे संसार में हीरे के व्यापार की प्रधान मण्डी थी। देश-विदेश के व्यापारी यहाँ सदैव आते रहते थे। बंगाल की खाड़ी में मछलीपट्टम का बन्दरगाह इस राज्य का प्रधान शहर और महाबन्दरगाह था। यहाँ के जहाजों से हाथियों के बड़े-बड़े झुण्ड मिलते थे। जिससे राज्य की सम्पत्ति में वृद्धि होती थी। तम्बाकू और ताड़ यहाँ बहुत अधिक मात्रा में होते थे जिससे तम्बाकू और ताड़ी पर लगाए करों से ही राज्य को एक अच्छी खासी आमदनी हो जाती थी।

पूर्व की सन्धियों के आधार पर गोलकुण्डा राज्य प्रतिवर्ष २ लाख हून मुगल दरबार को वार्षिक कर देता था। परन्तु वर्षों से यह कर उस पर उदैव बकाया ही रहता था। प्रत्येक तकाजे के उत्तर के जवाब में वह मुगल सूबेदार को कुछ कारण बताकर अधिक समय की मोहलत माँग लेता था।

मुहम्मद अमीन की और मीरजुमला के परिवार की गिरफ्तारी की खबर बादशाह तक पहुँची। मीरजुमला औरंगजेब से सम्बन्ध भी स्थापित कर रहा है। यह खबर भी दारा के भेदियों ने वहाँ पहुँचा दी। दारा नहीं चाहता था कि मीरजुमला जैसा शक्तिशाली आदमी औरङ्गजेब से मिल जाय। उधर बजीर सईदुल्ला की आकस्मिक मृत्यु से मुगल साम्राज्य को एक ऐसे ही विलक्षण पुरुष को वजीरे आलम बनाने के लिए आवश्यकता थी जैसा मीरजुमला था। अतः बादशाह के फर्मान शीघ्र ही शाह गोलकुण्डा के पास पहुँच गए कि अमीर मीरजुमला और मुहम्मद अमीन को शाही दरबार में भेज दे। तथा उसकी सम्पत्ति आदि पर भी कोई प्रतिबन्ध न लगाए। साथ ही औरङ्गजेब को भी एक शाही फरीवा मिल गया कि यदि शाह गोल कुण्डा शाही हुक्म में दरेग करे तो उसपर आक्रमण कर देना।

अब अमीर मीरजुमला के इस खत को पढ़ते ही औरङ्गजेब की बाछें खिल गईं। वह अत्यन्त महत्वाकांक्षी आदमी था, और ऐसी ही किसी घटना से लाभ उठाना चाहता था। वह चटपट सब तैयारियाँ करके इस हेशियारी से चला कि किसी को तनिक भी शक नहीं हुआ। अपने बड़े शाहजादे को सैन्य सहित नान्देड़ के पास गोल कुण्डा की सीमा में प्रवेश कराकर उसे आदेश दे दिया कि "कुतुबुल मुल्क बहुत ही मुअदिब है। मुमकिन है वह सामना न करे, पर तुम लोग सीधा धावा बोल दो और उसके खिम को उसके सर के भार से दफ्ना कर दो।"

औरंगजेब सही-सलामत भागनगर के फाटक तक पहुँच गया, और बादशाह उसकी अगवानी के लिए वहाँ तक आ भी गया। यह बिल्कुल निकट था कि बाकिरवाना गुलाम—जो इसी काम के लिए मुस्तैद कर लिए गए थे—बादशाह को पकड़ लेते, कि एक अमीर के मन में पश्चात्ताप हुआ और उसने कहा—'जहाँपनाह, भागिए यह औरंगजेब है, असली नहीं।'

बादशाह घबड़ा कर एकाएक वहाँ से भागा और जो घोड़ा हाथ लगा—सवार हो, तीन मील के फासले पर गोलकुण्डा के किले की ओर तेजी से निकल गया।

शिकार फँसकर निकल जाने पर भी औरंगजेब निराश नहीं हुआ। उसने तत्काल हमला बोलकर भागनगर के महलों को लूट लिया और समस्त बहुमूल्य वस्तुएँ अपने अधिकार में कर लीं। फिर बादशाह को कैद करने की नीयत से गोलकुण्डे के किले की ओर उसने रुख किया। इसके पास तोपें नहीं थीं, और वह गोलकुण्डा के किले पर उनके बिना हमला नहीं कर सकता था। पर उसने किले के चारों ओर डेरा डाल कर उसकी रसद-पानी सब बन्द कर दी, किले में आवश्यक सामान काफी न था—वह दो महीने घेरा डाले पड़ा रहा। और निकट था कि किलेवाले आत्मसमर्पण कर देते पर उसी समय बादशाह शाहजहाँ का आज्ञापत्र मिला कि तुरन्त वह अपने सूबे को लौट जाय।

औरंगजेब बहुत खीझा। वह जान गया था कि यह सब कारस्तानी दारा और जहाँआरा बेगम की है, जो हमेशा उसके विरुद्ध बादशाह को भड़काते रहते हैं और बादशाह को अपनी मुट्ठी में रखते हैं। परन्तु उसने बादशाह की आज्ञा का उल्लंघन करना ठीक नहीं समझा, और किले का मुहासरा छोड़ देने को तैयार हो गया, परन्तु उसने शाह से सेना की सब क्षतिपूर्ति के एक करोड़ रुपये वसूल किए तथा रामगिरि का वालुका भी ले लिया। और शाह की तरफ से अपने बेटे सुलतान

मुहम्मद का विवाह करके प्रतिज्ञा करा ली कि उसी का लड़का राज्य का उत्तराधिकारी रहेगा। इन सबके साथ उसने अपने दोस्त मीरजुमला के कुटुम्ब और धन-दौलत की भी राज्य से बाहर जाने की आज्ञा ली और वह लौटा।

गोलकुण्डा के पड़ाव में जब अमीर मीरजुमला औरंगजेब की सेना में उपस्थित हुआ तो उसका ठाट-बाट बादशाहों से कम न था। उसके साथ ६ हजार घुड़सवार, १२ हजार पैदल, १५० हाथी और कई उम्दा तोपखाने थे। औरंगजेब ने उसकी खूब आवभगत की और कहा—कि बाबाजी, शाहजहाँ दारा के बाप हैं परन्तु मुझे आपसे बढ़कर मेहरबान बाप मिलना मुश्किल है। मेरी उम्मीदें आपसे वाबस्ता हैं, और मैं आप ही को अपना सरपरस्त समझता हूँ, और अर्ज करता हूँ कि मुझ पर और मेरे बाल-बच्चों पर रहम करें। मैं वादा करता हूँ कि तख्त नशीन होने पर मैं आपको दरबार में सबसे बड़ा और आपके लड़के मुहम्मद अमीन खाँ को आपसे दूसरा दर्जा दूँगा। और जो कुछ शाह जादों के हैं उसे दे दूँगा। बस, आप दारा से कोई ताल्लुक न रखें। इस प्रकार कौल-करार करके मीरजुमला शाही दरबार में दिल्ली को रवाना हुआ। बादशाह उसे वजीरे आजम बनाना चाहता था और दारा उसे औरंगजेब से दूर कन्धार की दुर्गम मुहिम पर दकेल देना चाहता था। ऐसी ही उन दिनों मुगलों की राजनीति थी।

परन्तु अमीर मीरजुमला को औरंगजेब पसन्द था। दोनों शीघ्र ही दिली दोस्त बन गए। यद्यपि दोनों बहुत कम साथ-साथ रहे फिर भी दोनों ने बड़े-बड़े साहस के काम किए। दोनों ने दौलताबाद में मिल कर भावी महत्त्वाकांक्षाओं के मनसूबे बाँधे। मुगल इतिहास में इन दोनों आदमियों की मित्रता एक निराली वस्तु है। यह निस्सन्देह कहा जा सकता है कि औरंगजेब को जो कुछ बड़प्पन और प्रसिद्धि मिली, वह मीरजुमला ही की बदौलत मिली।

बादशाह ने उसे बहुत आदरमान से दिल्ली बुलाया और रास्ते में सख्त हुक्म जारी कर दिए कि जहाँ जहाँ होकर वह गुजरे, उसकी पूरी आव भगत की जाय।

दिल्ली पहुँचने पर भी उसकी पूरी आव भगत हुई—पर दारा की चाल पूरी न हुई। उसने बादशाह को आते ही प्रभावित कर लिया और बादशाह का मन कन्धार की चढ़ाई से हटा दिया।

६

वली-अहद

बादशाह का सबसे बड़ा बेटा दाराशिकोह था। इस समय दारा की आयु ४२ वर्ष की थी। उसे शाही खजाने से एक लाख रुपया मासिक वेतन मिलता था। इसके सिवा उसे २ करोड़ रुपया वार्षिक आय की निजी जागीर भी थी। उसका महल पृथक् था और उसमें सैकड़ों दासियाँ, बाँदियाँ, मुगलानियाँ, कंचनियाँ भरी पड़ी थीं। उस महल में वह बादशाह की भाँति ठाठ-बाट से रहता था।

देखने में यह युवक रुआबदार, सुन्दर और सजीला जवान था। वह दिल का साफ, सच्चरित्र, मृदुभाषी और उदार था। परन्तु उसमें एक दोष यह था कि वह घमंडी और जिद्दी था। वह सदा यही समझता था कि उसे किसी की सलाह की आवश्यकता नहीं। सलाह देने वालों और मन्त्रियों को वह तुच्छ दृष्टि से देखता था, बहुधा उनकी हँसी उड़ाया करता था। तिरस्कार भी कर बैठता था। इस कारण उसके निकटस्थ और अति विश्वासी व्यक्ति भी उसे सम्मति देते भय खाते थे।

फिर, यह आदमी इतनी दृढ़ी तबीयत का था कि उसके संकल्प से विचलित होना अति साधारण बात थी। कदाचित् ही वह कोई बात गुप्त रख सकता था। उसे अपने भाग्य पर बड़ा भरोसा था, वह

सदा यही सोचा करता था कि उसका भाग्य सदा प्रबल रहा है और संसार की कोई आपत्ति उस पर आ ही नहीं सकती। उसे यह भी विश्वास था कि प्रत्येक व्यक्ति उसे प्रेम और आदर की दृष्टि से देखता है और वह उसका यथार्थ पात्र है। वह भाव-रङ्ग और आनन्द में मस्त रहने वाला जीव था।

वास्तव में वह बहुत विनोदी स्वभाव का आदमी था। बहुधा वह विनोद में मर्यादा से आगे बढ़ जाता था। पेशेवर मसखरे सदा उसे घेरे रहते, और एक-न-एक चुटकुला छिड़ता ही रहता। वे लोग जो मुसाहिब कहाते थे—बहुत भड़कीले और बहुमूल्य वस्त्र पहन कर प्रति दिन दरबार में आते जो प्रायः कमीने, खुशामदी और बेवकूफ होते थे और प्रायः दारा के सम्मुख मूर्खतापूर्ण हास्य किया करते थे। जिसे देखकर वह महान् मुगल-साम्राज्य का वली-अहद छुरियों की भाँति मुँह बनाकर हँस दिया करता था।

बहुधा इनका फूहड़ विनोद यह होता था कि जब कोई सिपाही या दूसरा व्यक्ति नौकरी की आशा से शाहजादा के दरबार में आता तो उसे फुसला कर ये लोग इस बात पर राजी कर लेते कि वह हाथ-पैरों के बल पशुओं की भाँति शाहजादा के सामने चल कर आए और जब वह बेचारा आपत्ति का मारा इनके चक्कर में आकर ऐसा करता तो शाहजादा खूब हँसता था।

बहुधा ये मसखरे लोग किसी अपरिचित सिपाही या शहर के किसी आदमी को खूब बनाते, और एक उनमें से कहता कि मैं बड़ा भारी हकीम हूँ। तुम्हें बड़ा भारी मर्ज हो गया है, इलाज न कराओगे तो मर जाओगे। वह बेचारा घबरा उठता—तब वे मसखरे उसे सलाह देते—बेहतर है कि तुम्हें भफारा दिया जाय और फिर वह बेवकूफ एक बड़े बर्तन में मय हथियार के बन्द कर दिया जाता। जब वह बर्तन शाहजादा के सामने लाया जाता और ढक्ना उठाकर्ने पर

उसमें से एक हथियारबन्द सिपाही नजर आता तो शाहजादा उसे देखकर बहुत हँसता और वह सिपाही घबराकर भाग जाता।

साम्राज्य में कुछ राज्य के सच्चे शुभ-चिन्तक विद्वान् और वृद्ध पुरुष भी थे जो शहनशाहे-हिन्द के बली-जहद के ऐसे छिछोरे चरित्र को देखकर उससे कुढ़े रहते थे।

परन्तु इतना होने पर भी वह अच्छा विद्वान् था। अरबी, फ़ारसी की तो उसने उत्तम शिक्षा पाई ही थी, हिन्दी, संस्कृत का भी वह अच्छा पण्डित था। उसने संस्कृत के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद कराया था। बहुधा वह विद्वानों के साथ धर्म-सम्बन्धी बहस भी किया करता था। परन्तु सब लोग यह जानते थे कि वह न हिन्दू है न मुसलमान। उसका कोई दीन ही न था। वह बहुधा मुल्लाओं और ईसाई पादरियों से शास्त्रार्थ कराया करता और इसमें उसे बड़ा मज़ा आता था।

वह फ़िरङ्गियों का बहुत शौक़ीन था। उन्हें उसने बहुत से ओहदे दे रक्खे थे। वह प्रायः उनकी बातें सुना करता, उनके देश के हालात पूछा करता, और उन्हें दिल खोलकर इनाम दिलाता था। दारा के दरबार के तीन पादरी बहुत प्रसिद्ध थे—जिनमें एक फ़्रान्सीसी और दूसरा पर्तुगीज़ था, इनसे दारा बहुत प्रेम करता था और बहुधा इनके साथ शराब पीता—और जब ये विदा होते तो इन्हें पचास हज़ार और एक-एक दुशाला भेंट देता था।

दारा में एक दोष यह भी था कि वह बहुत जल्द क्रुद्ध हो जाता था और कभी-कभी बहुत नीच और अपमान्य काम कर बैठता था।

महाबत ख़ाँ एक बूढ़ा और महान् सेनापति था। वह एक प्रतिष्ठित राजिब कुल का व्यक्ति था और मुसलमान हो गया था। उसके एक सेवक ने किसी कारण वश दारा के एक नौकर को मार डाला। इस पर दारा ने क्रोध में अंधा हो कर हुक्म दे दिया कि महाबत ख़ाँ को

बाँध कर घसीटते हुए उसके हुजूर में ले आया जाय। परन्तु यह हँसी खेल न था। महाबत खाँ मुकाबिला करने को तैयार हो गया। बादशाह ने जब यह सुना तो उसने शाहजादे को बुला कर समझा-बुझा कर ठण्डा किया। परन्तु महाबत खाँ ने यह मिला मन में रखा और समय पर बैर लिया।

औरंगजेब के पक्षपाती होने के सन्देह पर शाह ने सल्तनत के प्रधान वजीर सईदुल्ला खाँ को जहर दे कर मरवा डाला था। यह वजीर प्रतिष्ठा भर में बड़ा भारी विद्वान और राज्य का भारी शुभचिन्तक था। बादशाह और सारा दरबार उससे प्रेम करता था। आमेर के महाराज जयसिंह जो चालीस हजार सवारों और डेढ़ लाख पैदलों के स्वामी थे, उन्हें उसने मीरासी कह दिया था। जिसका बदला महाराज ने समय पर लिया।

पक्षी अहद के ऐसे ही कामों से दरबार के बहुत से योग्य वजीर उमरा उससे मन ही मन नाराज रहते थे। इतना होने पर भी अब तक वह बादशाह का बड़ा अदब करता था। वह उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करता और उनकी प्रतिष्ठा और शान के खिलाफ कोई काम नहीं करता था।

एक साधारण सिपाही को शाह ने तोपखाने का अफसर बना दिया था। इस सिपाही पर क्रुद्ध होने का कारण यह था कि एक बार एक उहदा दारा के महल पर बैठ कर बोलने लगा, इस सिपाही ने उसे तीर का निशाना बना दिया। एक बार उसने अपने उमरावों और सेनापति से कहा कि इतनी बराबरी का बहादुर आदमी हमारी सल्तनत में दूसरा नहीं है। इस बात से सब लोग बड़े असन्तुष्ट हुए तथा उन्होंने इसमें अपना अपमान समझा।

वह ज्योतिषियों का बड़ा विश्वासी था। उसके दरबार में अनेक ज्योतिषी थे, उनमें बहुत से अहमक थे। वह चिकनी-चुपड़ी बातों से

तथा पालन्य से उसे उल्लू बनाए रहते थे। बहुधा वे उल्टे-सीधे हिसाब लगाया करते और शाहजादे को अपने जाल में फँसाए रहते थे।

बादशाह ने कश्मीर-काबुल और लाहौर का इलाका दारा को जागीर में दे रखा था। जिसकी वार्षिक आय दो करोड़ रुपयों से भी अधिक थी। बादशाह ने इसे कुछ ऐसे भी अधिकार दे रखे थे जिन में कोई तत्व तो न था परन्तु वे बहुत सम्मान जनक समझे जाते थे। तथा मुगल-साम्राज्य में किसी दूसरे को प्राप्त न थे। जैसे हाथियों का लड़ाना, अपने सामने सोने-चाँदी के गुर्ज रखना, जो केवल बादशाह ही रख सकता था। इसके सिवा उसने शाही दरबार में उसे बैठने के लिए अपने तख्त के पास एक दूसरा तख्त रखवा दिया था। बादशाह ने अपने तमाम उमरा को हुक्म दिया हुआ था कि सुबह का सलाम पहिले दारा को देकर तब वे शाही हुजूर में आएँ।

इन तमाम बातों से दरबारे शाही में दारा की इज्जत बहुत बढ़ गई थी। इससे वह बहुधा उमरा के साथ घमंड और सख्ती से पेश आया करता था। और कभी-कभी वह अत्यन्त प्रतिष्ठित उमरा का भी अपमान करने में नहीं हिचकता था, जिनके एक-दो उदाहरण ऊपर दिए जा चुके हैं।

दारा की बड़ी बेगम से उसके दो बेटे थे—एक शाहजादा सुलेमान शिकोह और दूसरा सिपर शिकोह।

निस्सन्देह उसके आदर्श उसके दादा अकबर के समान ही उदार थे। हिन्दू और मुसलमानों में सांस्कृतिक समन्वय करने का वह पक्षपाती था। हिन्दू योगी लाल दास और मुस्लिम सूफी संत सरमद का वह शिष्य था। मुस्लिम फकीर मियाँ मीर को भी वह अपना धर्मगुरु मानता था। उसने अपने जीवन में इस्लाम के सिद्धान्तों की कभी अवहेलना नहीं की हाँ आदर सभी धर्मों के प्रति रखा। वास्तव में वह कट्टरपन्थी न था।

परन्तु उसकी सबसे भारी हानि का कारण उसके प्रति पिता का आवश्यकता से अधिक प्रेम था। उसे सदैव दरबार में रक्खा गया। केवल कन्धार के तीसरे अभियान को छोड़ कर उसने न तो कभी किसी युद्ध का संचालन किया, न कभी किसी प्रान्तीय शासन-व्यवस्था के लिए उसे कहीं भेजा गया। असल में उसे न तो राज्य करने का अनुभव था न युद्ध का। कठिनाई और खतरों से वह सदा दूर रहा। सेना के साथ भी उसका कभी संपर्क न रहा। इसके अतिरिक्त उसके एकछत्र प्रभाव और उसकी अतुल सम्पदा—उसमें शील-संयम—और दूरदर्शिता के बीज न उगा सकी। झूठे चापलूसों से घिरे रह कर मुगल साम्राज्य के उत्तराधिकारी होने की स्वाभाविक भावना ने उसे घमंडी और प्रमादी बना दिया। वह पण्डित अवश्य था, पर न नव-चरित्र को नहीं परख सकता था। कोई भी स्वाभिमानी और सुयोग्य व्यक्ति उस घमंडी और अविवेकी स्वामी से प्रसन्न न था। निस्सन्देह वह एक प्रेमी पति, प्यारा पुत्र और नेक पिता था—पर संकटापन्न प्रजा-पालक राजा नहीं। पुरखों से चली आती हुई शान्ति और सम्पदा ने उसके रक्त की उत्तेजना उसकी कर दी थी। कोई संगठन करने या साहस करने का खतरा वह नहीं उठा सकता था। न वह परिश्रमी और बुद्धिमान ही था। विराजित दृढ़ता तो उसमें थी ही नहीं, जो मृत्यु से विजय को छीन लाती है। न वह सेनापति था, न शासक। इस प्रकार युद्ध-कला, राजनीति, साहस, शौर्य और दूरदर्शिता तथा सावधानता से सर्वथा रहित इस सीधे-सादे नागरिक व्यक्ति का, प्रतापी मुगलतख्त के लिए खूनी लड़ाई पर आमादा औरंगजेब जैसे सेनानायक और कूट-नीति के पण्डित से पाला पड़ा था।

— ०१ —

७

जहाँआरा

बादशाह की बड़ी लड़की का नाम जहाँआरा था। परन्तु शाही हलकों में वह बड़ी बेगम के नाम से प्रसिद्ध थी। वह एक विदुषी, बुद्धिमती और रूपसी स्त्री थी। वह बड़े प्रेमी स्वभाव की थी। साथ ही दयालु और उदार भी। बादशाह ने उनके जेबखर्च के लिए तीस लाख रुपए साल नियत किए थे तथा उसके पानदान के खर्च के लिए सूरत का इलाका दे रखा था, जिसकी आमदनी भी तीस लाख रुपए सालाना थी। इसके सिवा दारा और बादशाह अपनी-अपनी गर्ज के लिए उसे प्रेम भेंट या रिश्वत जो कहा जाय बहुधा बहुमूल्य भेंट देते रहते थे। बादशाह का उसके प्रति आकर्षण देख यह प्रसिद्ध हो गया था कि बादशाह का उससे अनुचित प्रेम है। उपयुक्त कारणों से उसके पास धन-रत्न बहुत एकत्र हो गया था और वह खूब सज-धज कर ठाठ से रहती थी।

मुगलों के शाही खानदान की दो विशेषताएँ थीं। एक यह कि शाही खानदान की स्त्रियाँ पर्दे में रहती हुई भी राजनीति में पूरा भ- लेती थीं। दूसरे शाहजादियों की शादी नहीं हो सकती थी। यह उनके गुप्त प्रेम के बहुत से मामले आए दिन प्रकट होते रहते थे पर बादशाह किसी को भी दामाद नहीं बनाना चाहता था। शाहजादि की शादी न हो यह नियम बादशाह अकबर ने बना दिया था। इसी शाही शाहजादियों के गुप्त प्रेम के बड़े-बड़े झूठे-सच्चे किस्से लोगों के जबान पर चढ़ गए थे।

वह दारा का पक्षपातिनी थी और दारा ही को राज्य दिलाना चाहती थी। क्योंकि दारा ने इससे वादा किया था कि वह बादशाह

होने पर उसकी शादी मनचाहे दूल्हे से कर देगा। वह बादशाह को दारा पर कृपालु बनाए रखने में भी कुछ उठा न रखती थी। तथा सब अमीर उमरा को भी सन्तुष्ट रखती थी। उसने अपनी सारी चतुराई बादशाह को प्रसन्न रखने और उसकी सेवा करने में लगा दी थी। वह आँख मीच कर बादशाह की सब उचित-अनुचित इच्छाओं की पूर्ति करती थी। बादशाह उस पर ऐसा मिहरबान था कि लोग कहने लगे थे कि शाहजहाँ के शासन-काल में वही तमाम साम्राज्य पर शासन करती थी। इसीसे उसका नाम 'बड़ी बेगम' प्रसिद्ध हो गया था।

दारा चाहता था कि उसकी शादी सिपहसालार नजाबत खाँ से हो जाय जो बलख के शाही खानदान से सम्बन्ध रखता था। वह पुरुष वीर और सुन्दर भी था। परन्तु बादशाह के साले शाइस्ता खाँ ने बादशाह के कान भर दिये थे कि यदि ऐसा किया जायगा तो उसे अवश्य ही शाहजादों की बराबरी का रुतबा देना पड़ेगा। इसके सिवा यह भी बात थी कि बादशाह शाहे बलख पर चढ़ाई करने के मंसूबे भी बाँध रहा था।

फिर भी शाहजादी जी-जान से बादशाह की सेवा करती रही और अपने चाहने वालों ही पर सन्तुष्ट रहती रही।

वह राज्य के बड़े-बड़े जिम्मेदारी के काम करती, पर शाम को नाच रङ्ग में मस्त हो जाती। वह अंगूरी शराब की बहुत ही शौकीन थी जो काबुल, फारिस और काश्मीर से मँगाई जाती थी। वह बहुधा अपने हम्मामखाने में बढ़िया शराब बनवाती, जो अंगूरों में गुलाब और मेवाजात डालकर एवं बहुत-सी चीजें डालकर बनाई जाती थी। रात को वह कभी-कभी नशे में इतनी गड़-गप्प हो जाती थी कि उसका खड़ी हो सकना भी सम्भव न होता और उसे प्राय उठाकर बिस्तर पर डाला जाता था।

इस शाहजादी की ज्यादा इज्जत इसीलिए की जाती थी कि बादशाह से वह सब कुछ करा सकती थी और अमीर उमरा अपने अपने स्वार्थों के लिए उसे प्रसन्न रखना प्रत्येक मूल्य पर बहुत आवश्यक समझते थे। शाही मुहर इसी के हाथ रहती थी, और उसे महान् मुगल साम्राज्य में सब कुछ स्याह सफेद करने की शक्ति थी। यह एक बड़ी ही अनोखी बात थी कि पर्दे में रहने वाली एक महिला किस तरह उस काल में उस बड़े साम्राज्य का शासन-सूत्र चलाती थी जब कि यातायात की सुविधाएँ भी नहीं थीं।

: ८

शाही परिवार

बादशाह का दूसरा बड़ा सुलतान शुजा दारा से अधिक विनयी और दृढ़ विचार वाला था। वह कूटनीति में भी कुशल था। इसने धन और विनय से अनेक प्रसिद्ध अमीरों और राजाओं को अपना मित्र बना लिया था। वह बड़ा बुद्धिमान था। परन्तु उसका सबसे बड़ा दुर्गुण यह था कि वह भारी विलासी, आरामतलब और पियक्कड़ था। जब वह नाच-रंग में मस्त होता तब उसका कोई भी दरबारी कितना ही जरूरी काम होने पर भी कुछ कहने का साहस नहीं कर सकता था। इस दोष के कारण उसकी प्रबन्ध-व्यवस्था खराब रहती थी। वह छिपा पापी था। पर इस धर्म को भी उसने एक गूढ़ उद्देश्य से ग्रहण किया था। वह जानता था कि दरबार के बड़े बड़े ईरानी पदाधिकारी शिया हैं और उनसे बहुत काम निकल सकता है। वह इस समय बंगाल और उड़ीसा का सूबेदार था।

तीसरा शाहजादा औरंगजेब था। वह गौरवर्ण का एक अत्यन्त आग्रही और दृढ़ विचार का युवक था। वह एक पुख्ता आदमी था और उसके मन की बात का पता लगाना टेढ़ी खीर थी। आदमी को

सुनना उसे आता था, वह उन्हीं लोगों को पास फटकने देता जो उसके काम के होते। वह उन्हें भरपूर इनाम देकर खुश रखता था। वह अपने भेद छिपाकर रखने में एक था। वह ईमानदारी और फकीरी का ढोंग रखता था।

बादशाह और दारा इससे बहुत भय खाते थे और इस बला को दूर ही रखना चाहते थे, इसी से बादशाह ने इसे दक्षिण भेज दिया था। उसका चित्त कुछ रोगी-सा था और वह हमेशा कुछ-न-कुछ करता ही रहता था। वह तिर्फ वहीं खर्च करता जहाँ अत्यन्त आवश्यकता होती। वह सदा इस बात में प्रयत्नशील रहता था कि दुनिया की नजर में वह न्यायी और धर्मात्मा एवं चतुर प्रतीत हो। बादशाह की दूसरी बेटी रोशन आरा इसी के पक्ष की थी। वह आगरे के रङ्गमहल में बैठी हुई शाही दरबार में उसी का हित साधन करने में संलग्न रहती थी। उसके द्वारा औरङ्गजेब को अपने विपक्षियों का भेद-रत्ती हाल निरन्तर मिलता रहता था। वह भी अत्यन्त सुन्दरी, चञ्चल और हावभाव में एक ही थी। दारा और बड़ी बहिन को वह घृणा की नजर से देखती थी। पर न तो इसका शाही दरबार में उतना रुतबा ही था न इतने अधिकार जितने कि जहाँआरा बेगम को थे। इसके सिवा बादशाह और बेगम दोनों ही इस पर सन्देह करते थे। परन्तु वह अपने भेद गुप्त रखने में खूब चौकस थी और निष्कंटक सब गुप्त हालात औरङ्गजेब को भेजती रहती थी।

शाहजहाँ का सबसे छोटा बेटा मुराद एक बाँका लड़ैया था परन्तु वह मूर्ख, विलासी और क्रोधी आदमी था। केवल अच्छे खाने-पीने, नाच-रङ्ग, शिकार, हथियार चलाने में ही वह मस्त रहता था। तीर का निशाना लगाने में वह एक था। भाला और बर्छा फेंकने में अद्वितीय था। वह चारों भाइयों में सबसे बढ़कर लड़ाकू था। अपनी ताकत का उसे बहुत ही घमण्ड था। लड़ाई की चर्चा उठाने पर वह

बड़ा खुश होता। वो अपनी तलवार और बर्छामारी का उसे बड़ा घमण्ड था। वह सब को तुच्छ समझता था। परन्तु सैन्यसंचालन की उसमें कुछ भी योग्यता न थी। चरित्र उसका बहुत ओछा था।

बादशाह शाहजहाँ ने उसकी अयोग्यता को समझ कर अलीनकी नामक एक बाज़ और ईमानदार अफ़सर को उसका माल हाकिम तथा प्रधान सलाहकार बना कर भेजा था। परन्तु उसके खुशामदी दरबारी कृपापात्र शीघ्र ही अलीनकी के शत्रु बन गए। उन्होंने ऐसा एक चाल रचा कि जिससे इस निर्बुद्धि शाहज़ादे ने नशे की झोंक में क्रुद्ध होकर उसे भाले से मार डाला।

६

दिल्ली का लाल किला

किले के भीतर एक से बढ़कर एक शोभनीय लाल महल थे। उनकी पंक्तियों का चंचल प्रतिबिम्ब चन्द्रमा की स्निग्ध उपेक्षा में यमुना के स्वच्छ जल में अपारावार शोभा विस्तार करता था। इन महलों में जो मुख्य वस्तु थी वह दीवाने आम की इमारत थी। जिस पर देखने वाले की सबसे पहिले दृष्टि पड़ती थी। इसके बाद ही दीवाने खास था, जिसमें बादशाह खास-खास दरबारियों से महत्वपूर्ण विषयों पर गुप्त मन्त्रणा करता था। इसके बाद एक-से-एक बढ़ कर गुम्बजों वाले महलों का ताँता चला जाता था, ये सब बेगम महल कहाते थे। इनके भीतर सौन्दर्य की जो सुधा वर्षा होती थी, आनन्द का जो स्रोत बहता था, सम्पदा का जो अटूट भण्डार वहाँ एकत्र था—उसकी मानवीय मस्तिष्क कल्पना भी नहीं कर सकता।

इन सब संगीन इमारतों के बीच स्फटिक संगमर्मर की बनी मोती मस्जिद चन्द्रमा की चाँदनी की मूर्ति की भाँति देदीप्यमान थी। उसके अहाते में ही उसका पूरक्रूद्ध का सादा लाल शाही महल था। जिसमें

वह प्रतापी जगद्विख्यात सम्राट् निवास करता था। इस सम्राट् क
इसके इस वैभव को एक बार देख लेने पर फिर किसी को इस सं
में और कुछ देखने की इच्छा ही नहीं रह जाती थी। अथवा जगत
उसे और कुछ दर्शनीय ही न रह जाता था।

बेगम महल की बनावट ऊपर से संगमर्मर की थी। पर भी
उसकी छत पर सोने का निहायत मूल्यवान् कारीगरी का काम कि
गया था। खम्भों और दीवारों पर सच्चे जवाहरात की पच्चीकारी इ
भव्य और कलापूर्ण थी कि हम उसे उस युग की स्थापत्यकला का
आदर्श नमूना कह सकते हैं। खास बेगम महल के बीचों-बीच
छोटी सी चित्रशाला थी और उससे सटा हुआ शाही नजरबाग
जिसमें देश देश के फूल फल, फुलवारी फल से संचित की गई थी
वहाँ पर जो क्रीड़ा-निकेतन बने थे, उन में चलता हुआ गुप्त प्रका
रंगीन आभा प्रकट करता था; और जब बेगम महल के अनगिन
हजारा फानूसों में काफूरी मामबत्तियाँ जल उठती थीं, उस समय
इन्द्रभवन सहस्रों तारागणों से सुशोभित-सा जान पड़ता था। प्राङ्ग
में सुनहरी फव्वारों से गुलाब, केवड़ा और बेदमुश्क के जल की सह
धाराओं का अजस्र वेग सदा बहता ही रहता था। बेगम महल
प्रधान कक्ष की सजावट और भी निराली थी। वह पूर्वीय सौन्दर्य औ
वासना की सजीव मूर्ति थी। आराम और सजावट के एक से
कर एक सामान वहाँ एकत्रित थे, जिनके मूल्य का वर्णन करना
असम्भव है।

फर्श पर ईरान और काश्मीर के बड़े-बड़े और अति कोमल म
मूल्यवान् कालीन बिछे थे। सोने के चौखटों में लगे कदेआदम आई
महल के प्रतिबिम्ब को—शत सहस्र गुण कर देते थे। जगह जग
भिन्न-भिन्न कौशल और कारीगरी से लगाई गई पुष्पमालाओं

इस रहस्यपूर्ण महल में बादशाह और शाहजादों का शोर और किसी मर्द का गुजर न था। दरवाजों पर भीमकाय खोजे और भीतरी ड्योढ़ियों पर शस्त्रधर तातारी बाँदियाँ भारी-भारी बल्लमें लिए रात दिन पहरा लगाती थीं। इसलिए किसी भी मनुष्य का उस रंग-महल में भीतर पहुँच जाना और पहुँच कर बाहर जीवित निकल आना एक प्रकार से असम्भव ही था।

१०

हरम

बादशाह के हरम में दो हजार से ऊपर स्त्रियाँ थीं। इस हरम के वैभव, विलास और ऐश-आराम की कहानियाँ अनेक रूप धारण करके देश-देशान्तर में विख्यात हो गई थीं। योरोप और एशिया के सभी देशों में मुगल ऐश्वर्य की धूम थी। कोई भी तत्कालीन विश्वसम्राट् शान-शौकत में मुगल-सम्राट् शाहजहाँ से स्पर्धा नहीं कर सकता था। उन्होंने दिल्ली, आगरे आदि नगरों को सुदृढ़, विशाल और भव्य भवनों से सुशोभित किया था। महल, मस्जिदें और मकबरे ऐसे बनवाए थे कि जिन्हें देख कर बड़े-बड़े स्थापत्य-कला-विज्ञान के विशारद भी चकित हो जाते थे। सब प्रकार के सम्पन्न और वैभवशाली राजभोग मुगल-बादशाह के अन्तःपुर में नित्य व्यवहार में आते थे। संसार भर की सुन्दरियाँ, मदिराएँ और इन्द्रिय भोग की वस्तुएँ वहाँ एकत्र थीं। वह शाही राज-प्रसाद उन सब भोगों का केन्द्र बना हुआ था और अपनी सीमा को उल्लंघन कर रहा था।

सम्राट् के हरम में बेगमात के अतिरिक्त बाँदियाँ, कंचनियाँ, मुगलानियाँ और उस्तादनियाँ रहती थीं। हरम का प्रबन्ध अत्यन्त सुव्यवस्थित था। जैसे राज्य के भिन्न-भिन्न शासन-विभागों का अनुशासन होता था वैसे ही हरम का भी होता था। मुगल महिलाओं

का समय आनन्द में शराब, संगीत और फूलों की महक में व्यतीत होता था। रसरंग, क्रीड़ा-लिप्त हरम के निवासी रात-दिन देश के करोड़ों दीन-हीन कृषकों की कमाई से निष्ठुरतापूर्वक उगाहे हुए धन को पानी की तरह बहाते रहते थे। यह कोई आश्चर्य की बात न थी—सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी की राजनीति ही ऐसी थी। उस समय साम्यवाद और समाजवाद की क्रान्ति का जन्म नहीं हुआ था। मुगल साम्राज्य में ही नहीं, सारे भूमण्डल में स्वेच्छाचारिता की तूती बोल रही थी। फिर भी मुगल हरम विविध षड्यन्त्रों के केन्द्र बने हुए थे। शाहजादे और शाहजादियाँ नाक तक विलास और ऐश्वर्य में डूबे रहने पर भी सुखी न थे। प्रेम पिपासु बेगमात को बहुधा गुलामों और खवासों के प्रपञ्च और कपट के कारण बड़े-बड़े खतरे और कष्ट उठाने पड़ते थे। कभी-कभी उन्हें जान से भी हाथ धोना पड़ता था।

शाही हरम में सब मिलाकर भिन्न-भिन्न जाति और नस्लों की लगभग दो हजार स्त्रियाँ थीं। जिनमें से प्रत्येक के कर्तव्य पृथक् पृथक् थे। किन्हीं का काम तो बादशाह की भिन्न-भिन्न उपाधियाँ करना था और किन्हीं का बेगमों, शाहजादियों और बादशाह की आज्ञाओं की खिदमत बजा लाना होता था। इनमें से प्रत्येक को पृथक्-पृथक् कमरे बेगम महल में मिले थे जिनकी निगरानी खवाजे पहरेदार करते थे। इनके सिवा इनमें से प्रत्येक को बहुधा दस या बारह बाँदियाँ भी मिली थीं। इन स्त्रियों को अपने अपने पदों के अनुसार सौ से लेकर पाँच सौ रुपये तक मासिक वेतन मिलता था तथा इनकी दासियों को पचास से लेकर दो सौ रुपये तक। इनके सिवा पाँच सौ गाने वालियाँ कंचनियाँ भी महल में थीं। उन्हें ऊँची तनख्वाह तो मिलती ही थी पर शाहजादों, शाहजादियों, बेगमों और बादशाह के भाँति भाँति के मनोरञ्जनों के अवसर पर तथा बहुमूल्य भेंटें भी मिला करती थीं। ये नाचने वालियाँ यौवन की मदमाती, इठलाती बिजली की भाँति महल में इधर-से उधर अपनी बनाना सफरदाइयों के साथ घूमा करतीं और

इच्छा करते ही तुरन्त चाहे जिस बेगम या शाहजादी की सेवा में उपस्थित होकर अपनी कला का विस्तार करती थीं। इनकी सुरीली तानों से सदैव ही बेगम महल तरंगित होता रहता था। ये सब बहुमूल्य कमखाब और जरी के वस्त्र पहनती थीं, जिन पर सच्चे जवाहरात जड़े रहते थे। इनके नाच के समय इनकी पोशाक से बहुधा जवाहरात टूट-टूट कर फर्श पर गिर जाते थे जिन्हें झुककर उठाना ये अपमान जनक समझती थीं। प्रातःकाल जब फर्राश फर्श पर झाड़ू देने आती तो उन्हें मुट्ठियाँ भरे हीरे, मोती, माणिक, पुखराज फर्श पर बिखरे मिलते थे, जो सब उनके बाप-दादों के थे। ऐसी ही एक कंचनी को बादशाह ने ऊँचा रुतबा देकर अपने हरम में रख लिया था, और जब एक वजीर ने बादशाह से कहा कि इस दर्जे की औरतों को महल में दाखिल करना अच्छा नहीं—तो उसने जवाब दिया था कि माल अच्छा हो दूकान चाहे जैसी हो।

बहुत सी स्त्रियाँ उस्तादनी मुकर्रर थीं जो बेगमों और शाहजादियों को पढ़ाया करती थीं। महल की खातूनें बहुधा गुलिस्ताँ और बोस्ताँ पढ़ा करती थीं। इनके सिवा प्रेम की बहुत-सी कविताएँ तथा अश्लील किस्से-कहानियों की पुस्तकें पढ़ा करती थीं।

हरम में जो स्त्रियाँ राज-काज में बादशाह की सेवा करती थीं उनके दर्जे पृथक-पृथक् थे। उनका मासिक वेतन उनकी पद-मर्यादा के अनुसार १६ से रुपये तक नियत था।

बादशाह की सेवा में जो औरतें नियत थीं उनके रुतबे अलग अलग थे। बाहर जिस तरह दरबारी मनसबदार अमीर उमरा होते थे, उसी भाँति महल के भीतर ये औरतें भी होती थीं और जब बादशाह सलामत बाहर से तशरीफ लाना चाहते तो इन्हीं बनाने ओहदेदारान के द्वारा बाहर के अहलकारों पर आज्ञाएँ प्रचारित करते थे। इन महत्त्वपूर्ण ओहदों पर जो स्त्रियाँ नियत की जाती थीं उन्हें बहुत सोच

बेगम महल का शाही खर्चा सालाना एक करोड़ रुपए था। इसमें वे खर्च सम्मिलित न थे जो समय-समय पर बादशाह या शाहजादियाँ प्रसन्न होकर दान, खिलअत, या भेंट के रूप में अपने कृपापात्रों को देते थे। बेगम महल के बड़े बड़े खर्च तो भाँति भाँति के इत्र और सुगन्ध द्रव्य में होते थे जिनकी सदैव ही महल में नदी बहती थी। पानों की मद भी बड़ी खर्चीली थी। जिसमें मोतियों का चूना काम में लाया जाता था। एक-एक बेगम हजारों रुपए रोज पान का ही खर्च रखती थी।

दीवाने खास से लगा हुआ एक चतुर और फुर्तीली स्त्री का दफ्तर था, इस स्त्री का नाम फीरोज बानू था। यह स्त्री हरम के खर्च की देखभाल करती थी तथा नकद रुपए और माल असबाब का हिसाब रखती थी। यदि कोई स्त्री ऐसी चीज माँगती थी जिसका मूल्य उसके वेतन से अधिक होता था तो उसे तहवीलदार से प्रार्थना करनी पड़ती थी। तहवीलदार मुन्शी के पास एक नोट भेजता था, मुन्शी इसकी जाँच करता था जिससे शाही खजाने से रुपया मिल जाता था। मुन्शी ही वार्षिक आय-व्यय का लेखा-जोखा रखता था। जिन्हें रकम देनी होती उसके नाम का एक प्रकार का चिक काट देता था। उस पर वजीरों के दस्तखत होते थे, इसपर एक मुहर लगती थी जो हरम संबंधी फर्मानों पर लगाई जाती थी। जब यह चिक सरकारी कोषाध्यक्ष के पास जाता था तब वह तहवीलदार को रुपया दे देता था और तहवीलदार अपने नायकों को रुपया बाँटने के लिए दे देता था।

हरम के भीतर रक्षा करने के लिए जो स्त्रियाँ सशस्त्र रहती थीं, वे बड़ी फुर्तीली और बहादुर होती थीं, तथा शराब नहीं पी सकती थीं। इनमें जो अति विश्वसनीय होती थीं वे बादशाह के शयनागार के निकट रहती थीं।

हरम चारों ओर तहखानों से घिरा था। तहखाने के बाहर हिजड़े और राजपूत सामन्त राजा लोग बारी-बारी से पहरा देते थे। दरवाजों

पर हरबान रहते थे। बेगम महल के चारों ओर अमीर, अहदी और शाही फौज का पहरा रहता था।

यदि किसी अमीर या राजा की कोई प्रतिष्ठित महिला हरम में आना चाहती थी, तो उसे पहिले हरम के दारोगा को इस बात की इत्तला देनी पड़ती थी। उस पर आज्ञा की कार्रवाई होने के बाद जब प्रार्थना स्वीकृत हो जाती थी तब वह स्त्री हरम में आने पाती थी।

यह सब प्रबन्ध रहते हुए भी बादशाह स्वयं हरम पर कड़ी निगरानी रखता तथा हरम से सम्बन्ध रखनेवाली छोटी-से बात की भी खूब मुस्तैदी से जाँच-पड़ताल करता था।

बहुमूल्य और दुष्प्राप्य जवाहरात तो मुगल हरम में भर कर गये थे, जिन्हें बेगमात सदैव पहने रहती थीं। इन बेगमात को अपने अपने जवाहरात का बड़ा घमण्ड था। वे बहुधा उन्हें बड़ी-बड़ी थिरितयों में सजाकर आने जानेवालियों को दिखाया करती थीं और उनकी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न हुआ करती थीं। वे हीरे और लालों को निर्दयता से चीर से बिंधवा कर उनकी मालायें गले में पहनती थीं। बहुधा वे लाल नारियल के बराबर होते थे। इन मालाओं को वे अपने कन्धे के दोनों ओर आदनी की भाँति पहनती थीं। उनके साथ दोनों तरफ मोतियों की तीन-तीन लड़ें लटकती थीं। ये मोतियों की लड़ें पेट तक लटकती थीं।

इन जवाहरात को बेगमात और शाहजादियों को छोड़ कोई दूसरा नहीं पहन सकता था। न वे वैसे बना सकते थे। साधारणतया बेगमात मोतियों का झूमर पहनती थीं, जिसका एक बड़े-बड़े मोतियों का गुच्छा माथे तक लटकता रहता था। प्रत्येक बेगम और शाहजादी के पास इन बहुमूल्य गहनों के छै-छै या सात-सात जोड़े रहते थे। जिन्हें वे इच्छानुसार पहनती थीं।

बेगमात और शाहजादियों की पोशाक इन में बराबर रहती थी। वे प्रतिदिन कई-कई पोशाकें बदलती थीं। ये पोशाक इतनी बारीक

होती थी कि कई कई पोशाक पहनने पर भी उनका भीतर का बदन दीखता रहता था। इनमें से प्रत्येक पोशाक का वजन आधी छटाँक से अधिक नहीं होता था। परन्तु इनका मूल्य पचास रुपए से पाँच हजार रुपए तक होता था। इन पोशाकों में वे सुनहरा लचका, गोटा, ठप्पा, और बहुमूल्य मोती-हीरे टाँकती थीं जिन्हें वे एक ही बार बदल कर दुबारा नहीं पहनती थीं। फिर वे जिसके भाग्य में बदा होता उसी किसी बाँदी के शरीर की शोभा बढ़ाती थीं।

रात का सारा रङ्गमहल रङ्ग-बिरङ्गी मशालों की रोशनी से जगमगा जाता था। सैकड़ों हजारों फानूसों की मद्धिम रोशनी से जो जगह-जगह लगे रहते थे, महल की शोभा शतगुणी दीप्त पड़ती थी। इन फानूसों में सुगन्धित मोमबत्तियाँ जलाई जाती थीं। मोम की बनी मशालों की भीनी सुगन्ध निकल कर रङ्गमहल के वातावरण को मस्त कर देती थी। कभी-कभी बेगमात रोशनी में लाख-डेढ़ लाख रुपया खर्च कर देती थीं। कुछ शाहजादियाँ बादशाह की खास आज्ञा से सिर पर पगड़ी भी बाँधती थीं जिन पर मोतियों और बहुमूल्य जवाहरों से जड़ा तुर्रा खास तौर पर लगाया होता था।

यद्यपि शाही हरम में हजारों बेगमात बाँदियाँ और कंचनियाँ थीं, फिर भी उसे इन पर सन्तोष न था। इस लाख खिराज के तौर पर साम्राज्य भर के सूबेदारों को एक नियत तादाद में रङ्गमहल के लिए खूबसूरत लड़कियाँ भेजनी पड़ती थीं। इतने पर भी बादशाह के अनुचित सम्बन्ध अनेक रईस और उमरा की औरतों से थे, जो छिपे नहीं थे। प्रकट में वे रईस और उमरा बादशाह के खिलाफ कुछ नहीं कर पाते थे। पर भीतर ही भीतर वे उससे जलते थे। अन्त में यही बादशाह के पतन और सर्वनाश का कारण हुआ।

इस प्रकार की आराधना औरतों में सबसे प्रमुख थी जाफर खाँ की पत्नी थी। उसके प्रेम में अन्धा होकर बादशाह जाफर खाँ की जान लेने पर तुला हुआ था। पर उस स्त्री ने बादशाह की अनुनय-विनय

करके उसे पटने का हाकिम बनवा कर भिजवा दिया था। यहाँ पाठकों को यह बता देना आवश्यक है कि इस प्रकार जो उमराव अधिकार देकर दूर देश में भेजे जाते थे तो उनके कबीले बादशाह अमानत के तौर पर दिल्ली या आगरे में ही रखते थे। बिना बादशाह की बिना अनुमति लिए कोई उमरा दिल्ली या आगरे से बाहर अपने स्त्री-बच्चों को नहीं ले जा सकता था। जिन स्त्रियों से बादशाह इतमीनान न रखकर किया चाहता था उनके पतियों को वह इसी प्रकार हाकिम बनाकर दूर प्रान्तों में फेंक देता था।

अमीर खलीलुल्ला खाँ एक और प्रभावशाली सिपहसालार था, जिसकी स्त्री से बादशाह का गुप्त सम्बन्ध था। वह स्त्री जो जूते पहनती थी उनमें बीस लाख रुपये कीमत के जवाहर जड़े रहते थे। अकबर खाँ और खलील खाँ की स्त्रियों के साथ शाहजहाँ का सम्बन्ध इस कदर प्रसिद्ध हो गया था कि जब वे दरबार में आतीं तो रास्ते में बैठे हुए मुँहफट फकीर पुकारने लगते कि ऐ नारंग ऐ सहनशाह, हमें भी याद रखना। ऐ हुक्मरुए शाहेजहाँ, हमें भी कुछ दे।

अपनी बढ़ी चढ़ी कामलिप्सा की पूर्ति के लिए बादशाह ने अपने रङ्गमहल में मीना बाजार की बुनियाद डाली थी। यह मेला आठ दिन तक रहता था। इसमें स्त्रियों का छोड़ और किसी का दाखला निषिद्ध था। नीच-ऊँच सभी जाति की स्त्रियाँ वहाँ अपना-अपना माल बेचने के बहाने आतीं और माल की आड़ में अपने आशिक ऊँचे-से ऊँचे मुहब्बत पर बादशाह तथा शाहजादों के हाथ बिकती थीं। बादशाह नित्य इस मेले में जाता। उसका छोटा-सा सुन्दर तख्त कुछ ताताती बाँदियाँ उठाए रहती थीं। आस-पास अनेक स्त्रियाँ हाथों में आला लिए होतीं। बहुत से खोजा-नपुंसक भी होते थे। बादशाह बड़े गौर से सुन्दरियों को ताकता जाता तथा उसे जो स्त्री पसन्द होती उसी को इशारा करता और उसी की दूकान पर जाकर खूब झगड़ झगड़ कर सौदा करता, फिर भूल से दामों के साथ अशर्फियाँ भी गिन दी जातीं

जो वास्तव में दूधमनदारिन या उसकी बेटी के रूप का भेष होती थी। इसके बाद वह एक मुकर्रिर इशारा करके आगे चल देता, अब साथ वाली स्त्री का यह काम होता कि वह उस स्त्री को किसी तरह फाँस-फुसलाकर बादशाह के शयनागार में पहुँचा दे। इन स्त्रियों में बहुत-सी तो ऐसे अवसरों की ताक में ही रहती थीं और बादशाह की इच्छा पूर्ति कर मालामाल होकर बाहर निकलती थीं। बहुत-सी हरम में सदा के लिए किसी-न-किसी पद पर बहाल करके रख ली जाती थीं।

इन आठ दिनों में रङ्गमहल में खूब नाच-रङ्ग होते। किला बन्द रहता और बादशाह के सिवा कोई दूसरा व्यक्ति भीतर नहीं रहने पाता था। इस प्रकार इस मेले में तीस हजार तक स्त्रियाँ आती थीं। बादशाह यद्यपि हर तरह बड़ी शानशौकत से रहता था, परन्तु इन मामलों में वह बहुत गिर गया था। दुनिया के इस सबसे बड़े बादशाह की नफ्सपरस्ती इतनी बढ़ गई थी कि वह इस प्रकार के गन्दे और बदनामी के काम कर बैठता था, जो न केवल उसकी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल थे, प्रत्युत् अन्त में उसके सर्वनाश का कारण बने। क्योंकि उसकी नफ्सपरस्ती और अमीरों की स्त्रियों से अनुचित सम्बन्ध की बातें इतनी प्रसिद्ध हो गई थीं कि बहुत से भारी भारी अमीर जो साम्राज्य के स्तम्भ थे बादशाह के दिल से बाहर शत्रु हो गए थे।

११

महान् साम्राज्य

यहाँ हम तत्कालीन राज्य की परिस्थिति का भी थोड़ा वर्णन करना आवश्यक समझते हैं।

यह वह समय था जब मुगलों के तेज और वैभव का सूर्य मध्याह्न को पहुँच चुका था तथा उस प्रतापी साम्राज्य की अलौकिक कीर्ति-कथा देश-देशान्तरों में फैल चुकी थी और वह वैभव और प्रतिष्ठा की

पराकाष्ठा को पहुँच चुका था। उस मध्यवर्ती युग में दिल्ली और आगरा पृथ्वी की सभी विभूतियों के केन्द्र होते थे। बादशाह के बेगम-महल से लेकर वहाँ के चौक बाजार की पान बेचने वाली तम्बोलिन की दूकान तक प्रत्येक गृह असाधारण सुखोपयोगी कौतूहलों और रहस्यों का क्रीड़ास्थल बना हुआ था। आमोद-प्रमोद और आनन्द विलास की धाराएँ वे रोक-टोक वहाँ बहा करती थीं। सारांश यह कि उस समय मुगल बादशाह का दरबार ऐश्वर्य और शानशौकत में पृथ्वी भर में अद्वितीय था।

इस बादशाह के राज्यकाल में गोलकुण्डा से गजनी और कन्धार तक जो ढाई हजार मील से भी अधिक लम्बाई का प्रदेश है और उस समय तीन महीने का मार्ग था—मुगल बादशाह का साम्राज्य फैला हुआ था। उस जमाने में जो चावल और गेहूँ इस देश में पैदा होते थे—मिस्र की जिन्सों से बढ़कर थे तथा रेशम, रुई और नील आदि जो यहाँ के हिस्से पैदा होते थे वे दूसरे देशों में पैदा होते ही न थे। कारीगरी की चीजों में कालीन, चिकन, कमखाब, कारचोबी, बरदोजी आदि के काम और हर प्रकार के सूती और रेशमी वस्त्र जो देश भर में बरते जाते थे तथा विदेशों को करोड़ों रुपयों के भेजे जाते थे—बहुतायत से तैयार होते थे। मुगल साम्राज्य की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि सोना चाँदी संसार भर में घूमघाम कर जब भारतवर्ष में पहुँचता था तो यहीं रुक जाता था।

अमेरिका से जो सोना आकर सारे योरोप में फैलता था उसमें से कुछ तो तुर्किस्तान से खरीद की हुई चीजों के बदले में यहाँ पहुँच जाता था और बहुत-सा स्मर्ना के बन्दरगाह से ईरान पहुँचता था, जहाँ से योरोप को रेशम बहुत बड़ी संख्या में जाता था। परन्तु तुर्क, यमन और ईरान का काम उन दिनों भारतवर्ष की चीजों के बिना चलता ही न था। तो मूसा बन्दर से—जो लाल समुद्र के किनारे बहुत प्राचीन के पास था, तथा बसरे से—जो फारस की खाड़ी के

सिर पर था, और अब्बास बन्दर से—जो हुरमुज टापू के पास था—सोना चाँदी भारत की ओर खिंचा चला आता था। इसके सिवा अब हिन्दुस्तानी पोर्तुगीज जहाज जो हर साल भारत का माल पेगु, तेनासरीम, सीलान अचीन, मगासिर, मलाया आदि द्वीपों में ले जाते थे उनके बदले में चाँदी सोना ही लाते थे और वह सब यहीं पर रह जाता था। जो सोना चाँदी जापान की खानों से निकलता था, उसका बहुत-सा भाग डच लोगों के द्वारा तथा फ्रांसीसी और पर्तुगीजों के द्वारा लाया हुआ भी सोना चाँदी लौटकर भारत से बाहर नहीं जाने पाता था।

अलबत्ता, उन दिनों ताम्बा, लौंग, जायफल, दारचीनी, और हाथी आदि वस्तुएँ डच लोग सीलोन, जापान, मलाक्का, इंग्लैण्ड आदि से लाते थे। सीसा इंग्लैण्ड से और बारूद फ्रान्स से आती थी। प्रतिवर्ष २५ हजार घोड़े उजबक देशों से या कन्धार होकर ईरान से आते थे। उसी भाँति सूखे और ताजा मेवे, समरकन्द, बलख, बुखारा और ईरान से आते थे। कौड़ियाँ मलद्वीप से आती थीं, जो पैसे और धेले के स्थान पर चलती थीं। अम्बर ईरान, मलाया, मोजाम्बिक से आता था। गैंडे के सींग तथा हाथीदाँत, गुलाम हब्श देश से आते थे। मुश्क और चीनी के बर्तन चीन से, मोती तूतीकारन और लंका से आते थे। अवश्य ही इन सबकी भारत को एक भारी रकम के रूप में कीमत चुकानी पड़ती थी। परन्तु वह कीमत चाँदी सोने के रूप में नहीं दी जाती थी। जो विदेशी व्यापारी इन वस्तुओं को देश-देशान्तरों से लाते थे, वे उनके बदले में यहाँ की तैयार चीजें ले जा के दूना नफा उठाते थे। इस प्रकार जो चाँदी-सोना यहाँ आता था वह मुश्किल ही से यहाँ से बाहर जाता था। यद्यपि समूचा भारतवर्ष मुगल सम्राट् के अधीन न था, तथापि उसका साम्राज्य-विस्तार, आय, और सैनिक सत्ता उस समय पृथ्वी भर में सबसे बढ़ चढ़कर थी। प्राच्य राजसिक ऐश्वर्य की गरिमा में उस समय भारतवर्ष का स्थान सर्वश्रेष्ठ था। समूचे

मुगल साम्राज्य में बीस करोड़ रुपये कर में वसूल होते थे। भेंट, नजरानों और मुनाफ़ाफ़िक मदों की आय पृथक थी। बादशाह के खास महल की आय १॥ करोड़ रुपया थी। इसी से बादशाह का निजी खर्च चलता था।

बादशाह बहुत सोच-समझ कर खर्च करता था और उसने अपने शासनकाल के चालीस साल बिना लड़ाई-भिड़ाई किए बिताए थे। इससे बेशुमार दौलत उसके खजाने में इकट्ठी हो गई थी। उसके खजाने में बड़े बड़े कीमती जवाहरात कंकड़-पत्थर की तरह ढेर-के-ढेर पड़े रहते थे, जिनकी कीमत ३ करोड़ रुपये थी। इसके सिवा दो करोड़ रुपये मूल्य के जवाहरात शाहजादों, शाहजादियों के पास थे। बादशाह ने सूरत के हाकिम को, जो साम्राज्य में सबसे बड़ा बन्दरगाह था—यह हुक्म दिया था कि कोई कीमती और असाधारण वस्तु जो विदेशी लावें—शाही खजाने के लिए अवश्य खरीद लिये जायँ। यद्यपि तब तक सोने-चाँदी की खानों का पता नहीं लगा था, फिर भी बादशाह के खजाने में सोने-चाँदी के अम्बार लगे थे। शाहजहाँ के काल तक मुगल बादशाहों का यह नियम रहा था कि जब कोई अमीर उमरा मर जाता था तो उसकी सब सम्पत्ति शाही खजाने में दाखिल कर ली जाती थी। इस मद से अटूट धन-दौलत शाही खजाने में आती रहती थी।

बादशाह को जो रकम अमीर उमरा से मिलती थी, उसे वह अपने खजाने में नहीं मिलाता था बल्कि इसके लिए उसके पृथक् खजाने थे। एक सोने के लिए एक चाँदी के लिए। सोने वाले खजाने का नाम अमीरा था और चाँदी वाले का मीना। वास्तव में ये कमरे बड़े बड़े होते थे जिनकी लम्बाई सत्तर फुट और चौड़ाई तीस फुट थी। इनके बीच में संगमरमर के खूबसूरत खम्भे थे। ये खजाने फाटकों से बन्द किए जाते थे। इनके ऊपर बड़े-बड़े कमरे थे जिनमें वह खजाना रहता था जिनसे से प्रतिदिन खर्च किया जाता था। सोने वाले खजाने में साढ़े सात मन के सिक्के थे, जो सात-सात पताके के बराबर

थे। और भी पुराने जमाने के सिक्के जिनका चलन उन दिनों बन्द था और जिनकी कीमत सात सौ से सात हजार पताका तक थी, खजाने में जमा थे। ये सिक्के बहुत सुन्दर होते थे, और बादशाह जब अपनी किसी चहेती पर अचानक खुश होता था तो कभी-कभी उसे इनमें से एकाध नजराने के तौर पर दे देता था।

बादशाह की अथाह आय का पता केवल एक इसी बात से लगता है कि वजीरे आजम असदुल्ला खाँ रोजाना तीस हजार रुपये रियासत के खर्च में डाल लेता था।

इस बड़े बादशाह ने अपने राज्यकाल में बड़े-बड़े खर्चीले काम भी किए थे। अपने राजत्व के प्रारम्भिक बीस वर्षों में शाहजहाँ ने दान तथा पुरस्कार में साढ़े नौ करोड़ रुपए खर्च किए थे, जिनमें साढ़े चार करोड़ नकद रुपए और पाँच करोड़ की चीजें थीं। आगरा, दिल्ली, लाहौर, काबुल, कश्मीर और कन्धार तथा अजमेर की शाही इमारतों और किलों की तैयारी में लगभग तीन करोड़ रुपया खर्च किया था। यह स्मरण रहे कि उस समय का रुपया आज के रुपए से सौगुनी वस्तु खरीद सकता था, अर्थात् एक रुपया आज के सौ रुपए के बराबर था।

इस महान् साम्राज्य की रक्षा तथा भारी राजकोष की हिफाजत के लिये बादशाह ने बहुत भारी सेना रखी हुई थी। वह अपने को ९ लाख सवारों का स्वामी कहता था। २ लाख सवार, आठ हजार मनसबदार, सात हजार तीरंदाज सवार, और चालीस हजार तीरंदाज तथा गोलंदाज प्रतिक्षण बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करते रहते थे। १० हजार तीरंदाज और गोलंदाज, तो हर समय बादशाह की सेवा में ही रहते थे। बाकी ३० हजार भिन्न-भिन्न दलों में थे। शाहजादों, राजाओं और उमराओं के अधीन एक लाख पचहत्तर हजार सवार और साढ़े चार लाख पलटन थी। भिन्न-भिन्न परगनों के फौजदारों, अमलदारों, आदि के अधीन जो पलटनें थीं, वे अलग थीं।

शाही सवारी के जो लाख घोड़े होते थे, उनके रङ्ग, कद या चाल को देखकर उन्हें भिन्न-भिन्न नाम दिए जाते थे। ये सब अरबी, फारसी या तुर्क नस्ल के होते थे। उन्हें लोहे से दाग दिया जाता था। ईरियार लाईस इनकी मलाई और खिदमत करते थे। सहर के तौर पर इन्हें मक्खन और लोंद मिलाकर रोटी दी जाती थी। शाम को चावल पका कर इन्हें मक्खन, मिर्च, घीया, लोंद और पान मिलाकर खिलाया जाता था, जिससे उनमें से रीह खारिज होती रहे। जब बादशाह किसी घोड़े पर सवारी करना चाहता था तो लाईसों का दारोगा बगैर जीन के २ घण्टा उस पर सवारी करता था, जिससे उसकी चाल ठीक हो जाय और पैर हल्का हो जाय। बादशाह प्रथम एक घंटा तख्ते रवाँ पर सवारी करता था, फिर हाथी पर, फिर घोड़े पर। वे घोड़े तोप-बन्दूक आदि की आवाजों पर बिदकते न थे। इसकी उन्हें शिक्षा दी जाती थी। जब बादशाह दरबार करते थे तो यह नियम था कि चार खासे घोड़े कसे हुआ गुलामखाने के निकट तैयार रहते थे। यह नियम तैमूर के समय से था और बादशाह जब किसी खानदाने या बड़े आदमी पर प्रसन्न होता था, तो अपने खासे घोड़ों में से एक घोड़ा उसे देता था, जिसके साथ २० या ५० घोड़े और होते थे।

बादशाह की खास सवारी में १०० बड़े-बड़े ऊँचे हाथी थे, इनके नाम भी पृथक्-पृथक् थे जो बादशाह ने उनके रूप गुणों को देखकर रखे थे। इन हाथियों को भी तोप-बन्दूक, पटाखा आदि की आवाज से न डरना सिखाया जाता था। बहुतों को शेर चीतों का शिकार करना सिखाया जाता था। जङ्ग में उन्हें मस्त करने के लिए शराब पिलाई जाती थी। शाही महल के ठीक नीचे वाले छोटे फाटक पर एक हाथी पहरे पर नियत रहता था। इन हाथियों में एक तजीरा होता था जो सबसे बड़ा होता था। जब वह बादशाह के सामने आता था तो उस पर सुनहरी झूल पड़ी होती थी तथा उसके साथ कई अन्य हाथी होते थे और उसके साथ ढोल नफीरी आदि बाजे बजते तथा झण्डे उड़ते

से अपार धन व्यय होता था, पर उसकी व्यवस्था बहुत ही खराब थी।

बादशाह के पास जल-सेना बिल्कुल थी ही नहीं, और समुद्रतटों की ओर से यह सोने और हीरों से भरा हुआ साम्राज्य सर्वथा अरक्षित था। कोई भी योरोप का बादशाह थोड़ी भी जल-सेना लेकर बंगाल को बिल्कुल आसानी से फतह कर सकता था, और उस अटूट धन का स्वामी बन सकता था, जो ब्रेंबिल और पेरू की सोने की खानों के मुकाबिले कहीं बढ़-चढ़ कर था।

मुगल राजनीति दोषपूर्ण और खोखली थी। सेना अव्यवस्थित और असंगठित थी। जल-सेना थी ही नहीं। सम्पूर्ण साम्राज्य में निरन्तर कहीं-न-कहीं विद्रोह होते ही रहते थे। नदियाँ और बन्दरगाह सब विदेशियों के लिए खुले थे। ऐसी हालत में यह समृद्ध साम्राज्य की सुखछाया में प्रविष्ट देश उसी प्रकार किसी भी योरोपियन शक्ति के द्वारा विजित किया जा सकता था जिस प्रकार अमेरिका के नंगे बंगालियों को उन्होंने विजित किया था।

इसके सिवा मुगल साम्राज्य की दो भारी त्रुटियाँ थीं। एक यह कि मुगल शासन, सैनिक शासन था। प्रबन्ध, दीवानी, फौजदारी एवं सेना व्यवस्था सब एक जगह थी। राजधानी से सुदूर प्रान्तों के सम्बन्ध शिथिल थे। समाचार देर से आते-जाते थे। मार्ग की असुविधाएँ थीं। एक केन्द्र में बैठकर शासन नहीं किया जा सकता था। इस कारण सुदूर प्रान्तों में वे उच्चाकांक्षी शाहजादे स्वतन्त्र बादशाह ही बन बैठे थे। लूटमार, अत्याचार से उन्होंने अधिक-से-अधिक धन संग्रह कर लिया था, और अपनी प्रबल स्वतन्त्र सेना बना ली थी। वे अपने प्रान्तों की आमदनी का स्वेच्छा से खर्च करते थे। कोई भी इस विषय में उनसे पूछने वाला न था। इससे उनकी शक्ति बहुत बढ़ गई थी।

दूसरी त्रुटि यह थी कि साम्राज्य की सारी व्यवस्था और राजनीति

में मुगल हरम का बराबर हाथ था। शाही हरम एक ऐसा मोरलधन्धा था कि वहाँ बेशुमार उलटी-सीधी बातें अन्धेरे में होती रहती थीं। हम बता चुके हैं कि इस समय शाही हरम में बादशाह की बड़ी बेटी जहाँआरा की तूती बोल रही थी। स्वयं बादशाह और दारा उसकी मुट्ठी में थे। चारों भाइयों के जासूस दरबार और हरम में घुसे बैठे थे। अमीर डमरा बेदिल, ईर्ष्या और द्वेष से भरे अवसर की ताक में थे। भीतर बाहर सर्वत्र अनगिनत षड्यन्त्र होते रहते थे। इस प्रकार बूढ़े और कामुक शाहजहाँ का दरबार और महल विद्रोह, अविश्वास और षड्यन्त्रों का एक केन्द्र बन रहा था। बादशाह को बहुत-सी बातें मालूम थीं, पर वह कुछ भी कर नहीं पाता था। इससे उसकी चिन्ताएँ और बेचैनी दिन-दिन बढ़ती ही जाती थी। उसे सबसे भारी डर औरङ्गजेब का था। उसे सबसे खराब सूबा दिया गया था, और उसके पास सबसे कम सेना थी, पर दारा सदैव उससे चौकन्ना रहता था। यही कारण था कि उसे ज्योंही औरङ्गजेब से मीरजुमला के मिल जाने तथा गोलकुण्डा पर आक्रमण की सूचना मिली, उसने तुरन्त बादशाह के नाम से उसे वहाँ से हट जाने का हुक्म भेज दिया, तथा मीरजुमला को दरबार शादी में बुला भेजा। इसमें दारा का यह षड्यन्त्र था कि उसे कन्धार और ईराक की चढ़ाइयों में उलझा दिया जाय। इस षड्यन्त्र में बड़ी बेगम जहाँआरा का भी हाथ था। उसे आशा थी कि इस तरह यदि कन्धार पर अधिकार हो गया तो उसका भारना सिपह शाहार नजाबत खाँ—जो शाहे दुन्दारे का सम्बन्धी था—दुन्दारे का शाह बना दिया जाय और फिर उससे शादी करके जीवन के दोनों सुख लिए जायँ। परन्तु अमीर मीरजुमला ऐसा विलक्षण कूटनीतिज्ञ और वाक्पटु था, कि उसने एक ही वाक्य में बादशाह का मन वहीं का वहीं फेर दिया और यहीं से दारा की बदकिस्मती का प्रारम्भ हुआ।

---

१७ :

हुक्मए शाहजहाँ

दिल्ली में उन दिनों फकीरों का बड़ा जोर था। ये फकी
सल्तनत की देन थे। मुसलमानों के राज्य की जड़ भारत में
इन्होंने बड़ा काम किया था। उनमें बहुतों की मजार पूजी
बहुतों को औलिया समझा जाता था। सब लोग इनकी बहुत
भगत करते थे और इनकी ज्यादतियाँ बर्दाश्त करते थे। इन
दाद-फर्याद नहीं थी।

दिल्ली में इनके दो गिरोह थे, एक को 'बेकैद' कहते थे,
'बेतरतीब' बेकैद फकीर बहुत अक्खड़ होते थे, और बड़ी बेत
बात करते थे। छोटे-बड़े का ये कुछ लिहाज नहीं करते थे, जिसे
गालियाँ सुना बैठते। गन्दी फोश बातें बकते, चाहे जिसके
निचकक घुस जाते, जो थोड़ा उसे बहुत गन्दी-गन्दी गालियाँ
फिर भी किसकी मजाल थी कि इनसे नाराजी प्रकट करे।
खुशामद और चापलूसी से इनके गुस्से को कम करते, उलटे
क्षमा माँगते और मुहमाँगी भीख देकर पिंड छुड़ाते थे। यदि
दरवाजे पर ही न रोका जाय तो ये सीधे मालिक के पास जाकर
सलाम-बन्दगी किए—उन्हीं फटे-पुराने, गन्दे और धूल-मिट्टी
हुए हाथ-पाँव के साथ उसके बराबर जा बैठते और उसके
हुक्का छीन कर खुद पीने लगते थे। घर का स्वामी इसपर उनसे
न होता था—उलटे खुश होता था और उसे अपने लिए भारी
की बात समझता था। उन्हें बहुत-बहुत धन्यवाद देता, रुपए
और उन्हें खड़ा करता था। भीख माँगने में ये ऐसी जिद करते

के नाम पर भीख नहीं माँगते थे—वे कहते थे कि उनके नाम पर कुछ माँगना उनका अपमान करना है। हर एक आदमी उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार कुछ अवश्य देता था।

दूसरे किस्म के फकीर 'बतरस' कहलाते थे। वे हाथों में तेज छुरी लिए हुए भीख माँगते थे। उनका भीख माँगने का कायदा यह होता था कि वे दूकान के आगे जाकर खड़े हो जाते थे और जिस वस्तु की आवश्यकता होती थी, उसकी तरफ इशारा करके माँगते थे। यदि दूकानदार दे देता तब तो खैर—वरना वे अपनी छुरी से हाथ-पाँव-सिर आदि में जख्म करके खून दूकान के भीतर फेंक देते थे। बेचारे हिन्दू बनिये उनसे बहुत डरते थे। और खून देखते ही उनको मुँहमाँगी भीख देकर जान छुड़ाते थे।

ऐसा ही एक बेदीद फकीर 'तरमद' दिल्ली के बाजारों में घूमता रहता था। वह फकीर बिलकुल नंग-धड़ंग फिरता था। न नमाज पढ़ता था न रोजा रखता था। एक हिन्दू चौधरी का लड़का अमीचन्द था—उससे वह प्रेम करता था और जब उससे पूछा जाता—तेरा खुदा कौन है? तो वह झट फारसी भाषा में जवाब देता—'अमीचन्दस्त'। जब उससे लोग पूछते—तू कपड़ा क्यों नहीं पहनता—तो वह कहता—जो ऐबदार हैं वे अपने को छिपाते हैं। हम बेऐब हैं।

लोग उसे बहुत मानते थे। इसका एक कारण यह भी था कि शाहजादा दारा उसे बहुत मानता था। वह लड़का होकर उसका स्वागत करता। और जब कभी वह सवारी पर बाहर निकलता—और तरमद रोज आता तो सवारी खड़ी करके सलाम करता। कभी अपने साथ उसे हाथी पर बैठा लेता। बहुधा उसके चेले-चाटे उसके पीछे फिरा करते थे। ये सब आवारा फकीर होते थे, जो उसकी आड़ में हराम के माल मजीरे खाते रहते थे। अमीर, उमरा, शाहजादा जिनको भी

सवारी बाजार में निकलती, उसके पीछे वे बुरी तरह दौड़ते और वे लोग भी इन्हें रुपया-अशर्फी लत्ता-कपड़ा देते रहते थे।

जिस दिन शाही दरबार हुआ उसी दिन की बात है कि बेगम जफ़र खाँ की सवारी पालकी में किले की ओर जा रही थी। सरमद ने उसे देखा और अपने साथियों के साथ उसके पीछे लपका। सब जानते थे कि बादशाह शाहजहाँ के साथ उसका गुप्त सम्बन्ध है। इसलिए वे चिल्ला चिल्ला कर पुकारने लगे—ऐ हुकमद शाहजहाँ, कुछ हमको भी देती जा, और बेगम ने एक मुट्ठी भर अशर्फियाँ उनकी ओर फेंक कर सवारी आगे बढ़ाई।

: १३ :

खासगाह

दरबार से लौट कर बादशाह सीधा अपनी खासगाह में जा पहुँचा। वह शाही महलों के बीच एक विशाल कमरा था जो २४ हाथ लम्बा और ८ हाथ चौड़ा था। इसके चारों ओर बड़े-बड़े कदेआदम शीशे लगे थे, जो बड़े खर्च से विलायत से मँगाये गए थे। इस कमरे की सजावट में जो सोना खर्च हुआ था उसकी लागत डेढ़ करोड़ रुपए थी। इसके सिवा जो हीरे मोती इसमें लगे थे उनकी कीमत का अन्दाज लगाना बिल्कुल असम्भव था। कमरे की छत में दो विशाल शीशों के बीच सोने की चारियाँ जड़ी थीं जिनमें जवाहरात जड़े थे। शीशों के किनारों पर बहुमूल्य मोतियों के गुच्छे लटकाए गए थे। इसकी दीवारें संगेयशब की थीं। हर सूरत में यह कमरा एक ऐसा मनोरम स्थान था कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। तमाम शीशे जो इस कमरे में लगाए गए थे वे इस ढंग पर लगाए गए थे कि जब बादशाह अपनी प्रेमिकाओं के साथ विहार करे तो उस दृश्य को अपनी आँखों से देख ले।

इस कमरे में हर किसी का आना निषिद्ध था। खास-खास ख्वाजासरा ही इसमें आ पाते थे, और यह कमरा बादशाह की खास खास बेगमों की मुलाकात के लिए बनाया गया था।

कमरे के बाहर दो सौ तातारी-बाँदियाँ नंगी तलवार हाथ में लिए, तीर-कमान पीठ पर कसे, रात-दिन पहरा देती थीं। इस सब का सरदार एक कद्दावर ख्वाजासरा था जिसका नाम अम्बाल था। वही इस कमरे के मीतरी भेदों का जानकार था। इस कमरे के चारों कोनों पर चार कोठरियाँ थीं जिनमें चार प्रधान बाँदियाँ रहती थीं। ये नाम की बाँदी थीं—इनकी तनख्वाह और इनाम-इकराम में इन्हें बेइन्तहा धन मिलता था। इनके नाम चारों दिशाओं के नाम पर नियत थे और इनके जिम्मे बादशाह के शयनागार का भीतरी प्रबन्ध था। ये बड़ी सुन्दरी थीं और बड़े ठाठ-बाट में रहती थीं। इनमें जो सरदार थी उसका नाम गुलेंद बानू था। यह बाँदी बड़ी चपल, नौजवान, और बादशाह की मुँहलगी थी।

दरबार से लौट कर बादशाह साथ अपने उसी कमरे में आकर एक निहायत मुलायम गद्देदार कौच पर मसनद के सहारे लुढ़क गए। इस समय उनका चित्त प्रसन्न था, और आँखें चमक रही थीं, चेहरे पर निरन्तर छाई रहनेवाली उदासी इस समय न थी।

अम्बाल ने बादशाह के कपड़े बदले और आदाब झुक कर दस्तबस्ता अर्ज की, 'खुदावन्द, बेगम बाहर अली बड़ी देर से हुजूर की खिदमतगोई के लिए बैठी हैं।' बादशाह ने मुस्कुरा कर कहा—

'गुलेंद को भेज दे और एक गिलास शीराज़ी भी।' अम्बाल अदब से झुक गया, और कुछ देर में गुलेंद धीरे से कमरे में आई। उसके पीछे दो बाँदियाँ और थीं। एक के हाथ में शीराज़ी का गिलास और दूसरे के हाथ में जड़ाऊ पानदान था। उसने गिलास बादशाह के सामने पेश किया।

शराब पीते-पीते बादशाह ने कहा—'माजरा क्या है, बानू, आज बेगम बक्कर अली क्यों आई हैं ?'

'हुजूर, वे बहुत ही बदहवास हैं मैंने इतना समझाया है मगर वे रोती ही जा रही हैं।

बादशाह की भृकुटी में बल पड़ गए, उन्होंने कहा—'उन्हें भेज दे और ख्याल रख कि भीतर कोई आने न पाए।'

आदाब बजाकर खुर्रम चली गई। कुछ ही देर में बेगम बक्कर अली ने आँधी की भाँति कमरे में प्रवेश किया। अदब कायदे का बिना विचार किए ही उसने बादशाह के सामने आकर कहा—"हुजूर, मैं बर्बाद हो गई, मुझे बचाइए—मेरी इज्जत बचाइए, वरना मेरी जान चली जाएगी।"

बादशाह खड़े हो गए। उन्होंने बेगम का हाथ अपने हाथों में लेकर तसल्ली के स्वर में कहा—"प्यारी बेगम, हुआ क्या है, जो इस कदर परीशान हो ? खुलासा हाल तो कहो।"

"हुजूर, मेरे खाविंद को सब कुछ मालूम हो गया है और वे या तो मुझे मार डालेंगे या तलाक दे देंगे।"

'उसकी इतनी मजाल नहीं हो सकती,' गुस्से से बाहर हो बादशाह ने जवाब दिया, 'मैं अभी उसे सूली से लटकाने का हुक्म देता हूँ।' उन्होंने दस्तक देने को हाथ उठाया।

बेगम ने लपक कर बादशाह के हाथ चूमते हुए कहा—नहीं नहीं, जहाँपनाह, रहम कीजिए—मुझे बेवा न बनाइए। वह एक ऐसा खाविन्द है जो किसी भी औरत के पल्ला का वाहल हो सकता है, वह बहुत नेक, दिलेर और मर्द है, वह मुझे जान से ज्यादा प्यार करता है हुजूर, मैं बदकिस्मत ?' बेगम बादशाह के ऊपर गिर कर फफक-फफक कर रोने लगी।

बादशाह को अभी भी गुस्सा आ रहा था, उन्होंने कहा—'मगर

यह बदबख्त मेरे रास्ते का रोड़ा नहीं हो सकता, वह, जिसे मैंने जमीन से उठाकर आसमान तक पहुँचा दिया। जंजीरे तख्तनशीं बना दिया।'

बेगम चुपचाप पड़ी रोती रही। वह बारीक पानी पोशाक पहने थी। उसमें से उसका स्वच्छ शरीर छन-छनकर दीख रहा था। जिस प्रकार स्वच्छ बोतल में से मदिरा दीख पड़ती है। वह एक २९ वर्ष की छरहरे बदन की अप्रतिम सुन्दरी स्त्री थी, उसकी रूप माधुरी में कुछ ऐसी मिठास थी कि उसे देखकर मन उन्मत्त हो जाता था। उसका प्रत्येक अंग साँचे में ढला था—साथ ही कोमलता और नवीनता उसके शरीर से छलक रही थी। उसका चेहरा विलास से परिपूर्ण था। उसकी आँखें और बाल गहरे काले थे। आँखें-कटीली-मदभरी और बड़ी-बड़ी थीं।

रंग उसका खूब गोरा, मुख इतनी लंबाई लिए, हाथ खूब सुन्दर और गदन लम्बी और पतली थी, उसकी दन्तपंक्ति जब हास्य बिखेरती थी तो मुक्ता के समान उन होंठों पर मन मुग्धित हो जाता था। पतली कमर उभरे वक्ष और नितम्ब उसकी चाल में एक मद उत्पन्न करते थे।

इस अत्यन्त कुपित अवस्था में भी उसकी सुषमा और लावण्य के प्रभाव से बादशाह के मन में राग जाग उठा। उन्होंने क्रोध त्याग कर धीरे से कहा—'हुआ क्या बेगम मुझपर कहो तो। पछाड़, रोना धोना बन्द करो, इससे क्या होगा।'

बेगम ने आँसू पोंछे। वह हट कर एक तरफ कुर्सी पर बैठ गई। उसने करुण नेत्रों से बादशाह को देखकर कहा—

"उन्हें सब कुछ मालूम हो गया।"

"तो यह तो उनके लिये बहुत खुश होना चाहिए।"

"वे ऐसे नहीं हैं हुजूर—"

बादशाह की भौंहों में फिर बल पड़ गए। उन्होंने कहा—"तो बेगम, तुम्हें भी पछतावा हो रहा है।"

"जहाँपनाह, इस हीरे ने तो अपना सब कुछ हुजूर को लुटा दिया, अब आप ऐसी बात क्यों फर्माते हैं ?"

"तो प्यारी बेगम, मैंने भी तो तुम्हारे खाविन्द को ऊँचा बतला दे दिया है।"

"मेरे हुजूर, गैरतमन्द आदमी का सबसे बड़ी चीज समझते हैं।"

"तो बेगम, शायद तुम्हें अस्मत का बहुत खयाल है।"

"हुजूर शादी न हो, मेरी बातें पूरी सुन लें—"

"कहो—"

"शाइस्ता खाँ की बीवी पागल हो गई है।"

यह सुनकर बादशाह एकदम घबरा गए, वे कहने लगे—"खुदा के वास्ते ऐसा न कहो ?"

"वे हुजूर का नाम ले-लेकर बुरी-बुरी बातें कह रही हैं और शाइस्ता खाँ ने मेरे खाविन्द को बुलाकर कुछ सलाह की है।"

"सलाह की है ?" बादशाह ने तलवार की मूँठ पर हाथ रखा।

"हुजूर, अजब नहीं कि शाइस्ता खाँ, हुजूर के दुश्मनों की कुछ बुराई करे, हुजूर खबरदार रहें।"

बादशाह का चेहरा भय से पीला पड़ गया। उसने कहा—"क्या उसका इरादा कुछ बद है ? मैंने उस हरामी को तीन हजारी बात का रुतबा दिया है।"

"मगर की उसकी बीवी का क्या होगा। उसके साथ तो हुजूर ने बहुत ज्यादती की।"

"यह ज्यादती तो उसके बेमिसाल हुस्न की है, फिर भी मुझे अफसोस है बानू। पर मैं क्या करूँ ? वह राजी ही न होती थी। मुझे मजबूरन जोरेहुक्म करना पड़ा, मैं यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई औरत मेरे हुक्म से इंकार करे।"

"आह हुजूर ! आप बड़े बेदर्द हैं"—बेगम ने आँसू भरकर कहा

स्वर में कहा। बादशाह का दिल पसीज गया, उन्होंने बेगम के दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—

"नहीं जानेमन, क्या तुमने कभी कोई शिकायत की बात देखी ?"

"हुजूर, मैं कबूल करती हूँ कि लौंडों पर हुजूर की खास मेहरबानी है।"

"खैर तो यह कहो, किसी तरह उसका मुँह बन्द हो सकता है, तुम उसे समझाओ।"

"उसने खाना खाना छोड़ दिया है, जमीन में मुर्दे की तरह पड़ी है, उसका दिमाग फिर गया है, वह न रोती है न चिल्लाती है, वह पागल हो गई है हुजूर, उसके सामने जाते डर लगता है।"

"यह क्या कहती हो प्यारी बेगम ?"

"जहाँपनाह, किसी औरत पर जितना जुल्म किया जा सकता था हो चुका, वह बर्बाद हो गई। अफसोस कली बीच ही में मसल डाली गई। अफसोस !"

बेगम चुपचाप नीची गर्दन करके बैठ गई। बादशाह भी कुछ देर चुपचाप आँखें नीची किए बैठे रहे। फिर उन्होंने व्याकुल स्वर में पूछा—

"तुम कोई रास्ता बता सकती हो प्यारी बेगम ?"

"जहाँपनाह, मुझे तो अपनी ही फिक्र है, उसने मेरे खिलाफ ऐसी-ऐसी बातें मुँह से निकाली हैं कि मेरा लोगों को मुँह दिखाना भी मुमकिन नहीं रहा। आह, मैंने क्यों इस बुरे काम में हुजूर की मदद की।" वह फिर मुँह ढाँपकर रोने लगी।

"बीती बात का विचार न करो बेगम, अब सलाह दो मैं क्या करूँ ? तुम कहो तो ..."

"नहीं जहाँपनाह, मेरी एक अर्ज है।"

"कहो कहो ताकि इसके बाद हमलोग फिर प्यार की बातें करें।"

बेगम ने उपेक्षा के भाव को छिपा कर विनय से कहा—"आप मेरे लाडिले को पटने का हाकिम बना कर भेज दें।"

बादशाह मुस्कुरा दिए। उन्होंने कहा—

"अच्छा बेगम, मैं आज ही उसे रवाना होने का हुक्म दे दूँगा।"

"और हुज़ूर, शाइस्ता ख़ाँ से ख़ूब चौकन्ने रहिए।"

"शाइस्ता ख़ाँ क्या करना चाहता है?"

बेगम के चेहरे पर भय के चिह्न आए। उसने बादशाह के पास सरक कर कहा—

"हुज़ूर, वह छिपे-छिपे औरंगज़ेब से मिल गया है, वह उसे वक़्त के लिए हुज़ूर के ख़िलाफ़ भड़का रहा है।"

बादशाह क्रोध से काँपने लगे। उन्होंने कहा—"तो मैं उसे क़त्ल करा डालूँगा।"

"नहीं हुज़ूर, इससे तो दूसरे अमीर बदचल हो जाएँगे। उसकी औरत की बात बहुत फैल गई है। फिर वह हुज़ूर का रिश्तेदार भी तो है।"

"तब तुम क्या चाहती हो कि उसे भी तुम्हारे लाडिले के पास बंगाल का उड़ीसा भेज दूँ जिससे वे दोनों मिलकर मेरी तबाही के मनसूबों को अमल में ला सकें?"

"जी नहीं, उसे आँखों से दूर भेजना तो ख़तरनाक है।"

"तब क्या करूँ?"

"हुज़ूर, उसे करीबी में रखिए ताकि उसकी हरएक बात पर नज़र रहे और हमेशा उसी तरह चौकन्ने रहिए जैसे साँप से रहा जाता है।"

बादशाह ने बेगम को खींच कर अपनी छाती से लगा लिया और उसे चूमकर कहा—"वल्लाह बेगम, तुम बड़ी अक़्लमन्द औरत हो। इत्मीनान रक्खो—मैं ऐसा ही करूँगा। मगर तुम उस बदनसीब बानू से मिलती रहो। उसे तसल्ली दो—उसे ख़ुश करो।"

बेगम ने बादशाह के बाहुपाश से छूटते हुए कहा—"जो हुक्म। मैं अपने बल भर कोशिश करूँगी।"

"तो अब "

"नहीं हुजूर, इस वक्त मेरी तबियत बहुत नासाज है, जाती हूँ आदाब।"

वह उसी तरह बिजली की भाँति कमरे से निकल गई। बादशाह मसनद पर लुढ़क कर आँखें बन्द किए कुछ सोचने लगे। इसी समय अरदास ने आकर जमीन चूमकर कहा—"खुदावन्द हुजूर बड़ी बेगम ने दर्याफ्त किया है कि क्या हुजूर आराम फर्मा रहे हैं? एक निहायत जरूरी मसले पर हुजूर की राय लेनी है।" बादशाह ने उसी तरह आँखें बन्द किए हुए कहा—

"उन्हें यहीं भेज दे।"

खोजा आदाब अर्ज करके चला गया।

१४

पिता, पुत्री और पुत्र

बड़ी बेगम बहुत उदास थी। वह धीरे से आकर खड़ी हुई-सी बादशाह के सामने एक चौकी पर बैठ गई, बादशाह ने घबराई हुई आवाज में कहा—"इस कदर परेशान होने का क्या कारण है प्यारी बेटी?"

बेगम ने गुस्से भरी आवाज में कहा—"हुजूर, बेगम शाइस्ता खाँ का मामला बहुत गहरा हो गया है और उस हरामजादी ने मेरी खुल्लम खुल्ला बदनामी की है। वह कहती है कि बड़ी बेगम अपने बाप की कुत्ती है। (आँखों में आँसू भरकर) हुजूर, मेरी खातिर मुझे आपके लिए यह काम करने पड़ते हैं, और रियाया की नजरों में जलील होना पड़ता है। लेकिन तो, अगर रियाया और अमीर इसी तरह हमसे

बदबख्त ऐसे रहे तो यह तख्त जोखिम हो जायगा। मुझे बहुत ग
लग रहा है अब्बा।"

"किस बात का बेगम?" बादशाह ने झुककर कुछ घबराई बाव
से कहा।

"कि आप ही सल्तनत में एक तूफान खड़ा होने वाला है?"

"इस डर का बाइस क्या है प्यारी बेगम?"

"हुजूर को शायद इन मामलों पर गौर करने की फुर्सत ना
मिलती। मगर शाइस्ता खाँ को आप अच्छी तरह नहीं जानते, व
साँप का बच्चा है, चाट खाकर बिना डँसे न रहेगा।"

"बेगम, उसकी औरत को किसी तरह समझा-बुझाकर खुश क
लो, मैं शाइस्ता खाँ को ठीक कर लूँगा।"

"नहीं हुजूर उसने जान दे देने का मुकम्मिल इरादा कर लिया
है और शाइस्ता खाँ ने बुरहान हुजूर के खिलाफ बगावत का झंड
खड़ा कर दिया है।"

"बगावत का झंडा खड़ा किया है?"

"जी हाँ, और वह आफत का परकाला मीरजुमला—जिसे हुजू
ने इतनी इज्जत बख्शी है, उन सबको उकसा रहा है। मैं कहती हूँ
अब्बा, कि वह औरंगजेब का गोइन्दा है। इसे फौज देकर दक्खिन न
भेजिए, कन्धार जाने दीजिए। तोपखाने की वापसी का परवाना मंसूख
कर दीजिए।"

"नहीं बेगम, इस अम्र पर हमने बखूबी गौर कर लिया है। ऐसा
हानिशमन्द बूढ़ा और पुरतजुर्बा आदमी इतनी बेवकूफी कभी न करेगा
कि वह हमसे बगावत करके औरंगजेब से मिल जाय, इससे उसे कुछ
भी फायदा न होगा।"

"हुजूर तो दरबार में दिन-दिन बढ़ते हुए बगावत के तूफान की
कुछ भी परवा नहीं करते?"

"कौन-कौन इसमें शरीक है।"

"एक हो तो नाम लूँ ?"

"मसलन—"

"लतीफ खाँ, जफर खाँ, शाइस्ता खाँ, मीर मुसव्वर। और भी बहुत जिनकी औरतों की हुजूर ने अस्मत लूटी है।"

बादशाह क्रोध से थर-थर काँपने लगे। उन्होंने कहा—

"खबरदार बेगम, मेरे ही मुँह पर मेरी बदनामी न करो। मैंने तुम्हें और दारा को तमाम सल्तनत का मालिक बनाया है तो इसलिए नहीं, कि तुम मेरी इस तरह तौहीन करो।"

"हुजूर मैं तौहीन नहीं करती, सच्ची बात कहती हूँ। हुजूर का तख्त डगमगा रहा है। एक आँधी आने वाली है और हुजूर बेखबर हैं, आपका लश्करशाह कैसा मेरा कुछ है ?"

"तुम्हारा इशारा क्या है बेगम ?"

"आज के दरबार खास में जो कुछ आप करने वाले हैं उस पर एक बार फिर गौर कर लिया जाय।"

"अच्छी बात है। तुम क्या चाहती हो, वह साफ-साफ कह सुनाओ।"

बेगम कुछ कहने की तैयारी कर रही थी कि मकान में आवाज लगाई कि वालिद-साहब आलमपनाह दाराशिकोह तशरीफ ला रहे हैं। यह सुनकर बेगम रुक गईं। बादशाह ने कहा—

"अच्छा हुआ, दारा भी आ गया। अब सब बातों पर ठीक तौर पर सोच विचार कर लिया जायगा।"

दारा ने आकर पहिले ४० कदम के फासले से बादशाह को झुक कर तीन बार कोर्निश की, फिर एक कदम आगे बढ़ दुबारा सलाम किया। इसके बाद वह आगे बढ़कर बादशाह के पास आ खड़ा हुआ।

बाहिरी तौर पर देखने में तो दारा ने पिता के प्रति इतनी श्रद्धा और सम्मान का भाव प्रकट किया था, परन्तु गुस्से से उसका चेहरा लाल हो रहा था और उसकी भौंहों में बल पड़े हुए थे। उसने एक

चार बादशाह की नजर बचाकर बहिन की ओर मतलबभरी नजर से देखा। बेगम ने एक इशारे से उसे समझा दिया कि वह शान्त-संयत बना रहे। इस पर दारा चुपचाप नीची गर्दन किए खड़ा हो गया।

बादशाह ने स्नेह, चिन्ता की दृष्टि से उसे देखकर कहा—"तुम भी बहुत मुतफ़िक्र मालूम देते हो, आखिर ऐसी क्या बात है?"

"हुजूर, मैं कुछ भी अर्ज नहीं कर सकता।" दारा का कण्ठस्वर काँप रहा था और उसका क्षोभ स्पष्ट हो रहा था।

बादशाह ने प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी ओर देख कर कहा—"ऐसी कौनसी बात है जिसने तुम्हें इस कदर परेशान कर रक्खा है?"

"सब कुछ नया है हुजूर, क्यामत बपा होने वाली है।"

"तुमलोग हमेशा क्यामत मुसीबत और झंझट के सपने देखा करते हो। मेरे बेटे, उबड़े दिमाग में सल्तनत का काम-काज देखो ये झंझट तो होते ही रहते हैं। इतनी बड़ी सल्तनत बोझी नहीं चलती। अभी तुम्हें मुद्दत तक इसका बोझा सिर पर उठाना है। इस कदर परेशान होने से तो नहीं चलेगा।"

दारा ने क्रोध दबा सकने में असमर्थ हो, धरा तेज स्वर में कहा—"हुजूर इस धर्मावर्तार पर हमेशा शाकी बने रहते हैं दुश्मनों को सिर पर चढ़ाते हैं। नए-नए दुश्मन पैदा करते रहते हैं। मैं अकेला ही सब ठीक-ठाक कर सकता हूँ मगर हुजूर की बोंबेशाही कुछ करने नहीं देती।"

बादशाह पुत्र की चर्चा सुनकर कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर उन्होंने धीमे स्वर में कहा—

"सल्तनत की बेहतरी के लिए जो मैं ठीक समझता हूँ वह करता हूँ। मेरे प्यारे बेटे, तुम खूब जानते हो कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ और तुम्हारे लिए क्या-क्या कर रहा हूँ। ताजोतख्त तुम्हें मिले—यही मेरी आरजू है, और इसलिए मैंने अपने सब बेटों को दूर कर दिया

है। सिर्फ तुम्हीं को छाती से लगाए बैठा हूँ। तुम कितने लायक, फर्माबर्दार, जवान, हिम्मतवर, लायिक हो यह देखकर मेरी छाती फूल उठती है, फिर भी तुम मुझ पर ऐसी तोहमत लगाते हो कि बाप बेटे को बाप पर नहीं लगानी चाहिए। फिर इसके सिवा मेरे बेटे! अभी तक मैं ही बादशाह हूँ।"

यह कहकर बादशाह कुछ देर चुप बैठे रहे। उनके होठ फड़क रहे थे, और दिल में बवंडर उठ रहा था। बेगम और दारा चुपचाप सिर नीचा किए बैठे सुन रहे थे।

बादशाह ने फिर कहना शुरू किया—

"जब तुम छोटे से नन्हे बच्चे थे—तब तुम्हारी जन्नतनशीन नेक माँ थे, जिनकी मुहब्बत और खिदमत में जिन्दगीभर नहीं भूल सकता—तुम्हें आखिरी लम्हों में मेरी गोद में बैठा कर मरते मरते हँसकर मुझसे कहा था—'दीनो-दुनिया के बादशाह! मेरे मालिक! मेरे जाने का गम न करना। यह बेटा मैंने तुम्हें दिया है, तुम्हारी आँखों से इसकी मैंने आँखें बनाई हैं, तुम्हारे होठों से इसके होठ लिए हैं। इसे मैंने अपना कलेजा दिया है। यह तुम्हारी असली तस्वीर है, इसे तुम अपने बाद बादशाह बनाना। यह मुल्क की हुकूमत ईमानदारी से करके मेरा और तुम्हारा नाम रोशन करेगा।'

"वह तुम्हें मेरे कदमों में डालकर मर गई। और मैंने तुम्हें उठाकर छाती से लगा लिया। खुदा और कुरान की कसम खाकर उस फरिश्ता-सिफत नेक बीवी की बेरूह पेशानी को छूकर मैंने वादा किया था कि यही मेरा बेटा बादशाहत का वारिस होगा और बेटे, उस वक्त की आज वाईस साल हो गए, मैं बराबर उस बात को पूरी करने की कोशिश में हूँ और ताबीरत रहूँगा।"

बादशाह की जबान ऐंठने लगी और उनकी आँखों में आँसू भर आए। वे आगे न बोल सके।

दारा ने झुककर बादशाह के कदम चूमे, फिर उनका पल्ला आँखों से लगा लिया। बादशाह ने छोटे बच्चे की तरह दारा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—"मेरे प्यारे बच्चे, अब तुम अपने बादशाह और बूढ़े बाप की कमजोरियों पर ऐसी कड़ी नजर रखते हो? वह सामने देखो, जमुना के किनारे साफ खड़ा चाँदनी में किसी की इन्तजारी कर रहा है। जानते हो किसकी इन्तजारी कर रहा है? इसी बदनसीब तुम्हारे बूढ़े बाप की। उन पत्थरों के नीचे मेरी सबसे प्यारी चीज महफूज रखी है। जबतक मैं वहाँ पहुँच कर आराम न करूँ—मेरे बच्चो, तुम लोग मेरी कमजोरियों का दरगुजर करते चलो और मुस्तैदी से सल्तनत को सम्हालो। खुदा तुम्हें सुर्खरू करे।"

इतना कहकर बादशाह चल दिए। वे मसनद पर लुढ़क गए। दारा और जहाँआरा का गुस्सा हवा हो गया था। वे चुपचाप नीचा सिर किए अभी तक बैठे थे। कमरे में सन्नाटा था। दारा ने सिर उठाकर धीमे स्वर में कहा—

"जहाँपनाह का खादिम को क्या हुक्म है? मुझे जो हुक्म होगा बसरो-चश्म बजा लाऊँगा।"

बादशाह ने कहना प्रारम्भ किया—"मीरजुमला ने जो दक्खन-फतह की बात कही है वह मेरे जँच गई। बेटे, तुम भी गौर करोगे तो समझ जाओगे। दुश्वार और जाबुल की बंजर और पथरीली जगह, बूँखार और गरीब रियाया, ऊबड़-खाबड़ और तकलीफदेह रास्ता, हमारी मुश्किलों को बढ़ाता है। कन्धार की फतह से हम फायदा भी नहीं उठा सकते, फौज पर जो खर्चा होगा वह भी न वसूल कर सकेंगे—जैसा अब तक हुआ है। इसके अतिरिक्त दक्खन मुल्क हिन्दुस्तान का ही एक हिस्सा है। जब तक वहाँ हमारा अमलदरामद नहीं हो जाता—हम सही मानों में शाहे हिन्द नहीं कहला सकते। इसके अलावा वहाँ के समन्दर के किनारे चीन, जापान, योरोप और अरब के व्यापार के

मुहाने हैं। उन्हें कब्जे में करना न सिर्फ इसीलिए जरूरी है कि बेशुमार दौलत उनके जरिये व्यापारी जुल्ले से हम पैदा कर सकते हैं, बल्कि उस पर मुल्क की हिफाजत के ख्याल से भी नजर रखना जरूरी है। जब इन मुल्कों के बाशिन्दे आज व्यापार के लिए आते हैं तो कल वे जहाजों में सिपाहियों और तोपों को भी भर कर ला सकते हैं, और ऐसी हालत में अगर वहाँ हमारा बन्दोबस्त सही नहीं है—तो उन्हें रोकना मुमकिन ही नहीं। यह बड़ी भारी दूर-देशी की बात है। तुमने फरंगियों को देखा है किस कदर फसादी तबियत के और लड़ाकू आदमी हैं। अदब करना और डरना तो उन्होंने सीखा ही नहीं। इन तमाम बातों के अलावा वहाँ गोलकुण्डा, बीजापुर की सर जमीन में बेशुमार कीमती पत्थरों की खानें, वहाँ के शहरों में बेशुमार दौलत, और आदमियों में जबरदस्त काम करने की ताकत है। बस, एक बार अगर दक्खन पूरे तौर पर शाही अमल में आ जाय—तो मुगल तख्त की जड़ें पाताल तक पहुँच जायेंगी। तुम और तुम्हारी औलाद पुश्त दर-पुश्त मुल्क पर हुकूमत कर सकेंगी।"

इतना कहकर बादशाह कुछ देर चुप हो गए। वे गौर से दारा के चेहरे का उतार-चढ़ाव देखते रहे। दारा ने कहा—

"मैं हुजूर की बात को तो नहीं काट सकता। हुजूर बहुत दूर की बातें सोच रहे हैं। मगर फिलहाल तख्त पर जो खतरा छा रहा है उसका क्या होगा?"

"कौन सा खतरा मेरे बेटे?"

"दरबार के सब अमीर भीतर ही भीतर हम में विभाग हो रहे हैं, लोग छिप कर जगह जगह साजिशें मंजूर करते हैं। शुजा, औरंगजेब और मुराद अपने-अपने कानूनों से अमीरों को मुट्ठी में करने और नमकहरामी कराने पर आमादा हैं। फिर हुजूर के बारसों से सब अमीर और मैं हुजूर से उन बातों की कोई चर्चा नहीं करना चाहता, जिन्हें हुजूर बखूबी जानते हैं।"

"जाने दो उन बातों को। ये अमीर लोग टुकड़े के लोभी कुत्ते हैं। उन्हें वश में रखो। दारा, मैं तुम्हें चेताए देता हूँ कि इन अमीरों से तुम अपने बर्ताव का भी ठीक करो। मैं बराबर शिकायत सुनता हूँ कि तुम उनकी हिंसा करते रहते हो।"

दारा ने बात काट कर कहा—"हुजूर, मैं किसी की परवा नहीं करता। मुझे हुजूर मौका दें तो मैं बता दूँ कि इन बागी अमीरों का किस तरह ठीक किया जा सकता है।"

बादशाह ने नर्मी से कहा—"नहीं मेरे बेटे, यह ठीक खयाल नहीं—"

बेगम ने बीच ही में बात काट कर कहा—"खैर, तो हुजूर ने क्या मीरजुमला को दक्खन भेजने का मुकम्मिल इरादा कर ही लिया है?"

"यह तो तुमलोग सोच लो। मैंने जो दलीलें दी हैं वह तो तुमने सुन ही लीं।"

दारा ने अब उतावली से कहा—

"तो हुजूर, मेरी एक दर्खास्त है—"

"वह क्या?"

"मीरजुमला को कुछ शर्तों की पाबन्दी से दक्खन भेजा जाय।"

"वह शर्तें क्या होंगी?"

"एक तो यह—कि शाहंशाह किसी मामले में दखलन्दाजी न करें—"

"अच्छा दूसरी?"

"वह दौलताबाद से बाहर न जाय—"

"और तीसरी?—"

"वह अपने सूबे का इन्तजाम करे—किसी लड़ाई में शरीक न हो—"

"बस?"

"यह भी कि मीरजुमला अपने बाल-बच्चों, मालमता तथा रिश्तेदारों को आगरे में छोड़ जाय—"

"यह शर्त तो बहुत कड़ी है। मीरजुमला मामूली आदमी नहीं—मगर खैर, मैं उससे तुम्हारी तसल्ली के लिए ये शर्तें मंजूर करा लूँगा।"

दारा ने कहा—"तो मुझे उसे दक्खन फौज देकर भेजने में कोई उज्र नहीं है।"

बादशाह ने शाँव की ओर कहा—

"तो तुम बहुत जल्द दरबारे खिलाफत का इन्तजाम करो। और तब तक अमीर मीरजुमला को खुश रखो।"

"बहुत खूब—"

"और तुम प्यारी बेगम"—बादशाह ने जहाँआरा की ओर देख कर कहा—"दरबार के मुनासिब इन्तजाम में दारा की मदद करो।"

"जो इर्शाद"—दोनों बादशाह को झुककर सलाम करके चले गए। बादशाह गहरे ख्याल में डूब गए।

: १५ :

बेगम की सवारी

दिन ढल गया था और ढलते हुए सूरज की सुनहरी किरणें दिल्ली के बाजार में एक नई रौनक पैदा कर रही थीं। अभी नई दिल्ली बस रही थी। आगरे की गर्मी से घबरा कर बादशाह शाहजहाँ ने जमुना के किनारे अर्द्धचन्द्राकार यह नया नगर बसाया था। लाल किला और जामा मस्जिद बन चुकी थीं और उनकी भव्य छवि दर्शकों के मन पर स्थायी प्रभाव डालती थी। फैज बाजार में सभी अमीर उमरावों की हवेलियाँ खड़ी हो गई थीं। इस नए शहर का नाम शाहजहानाबाद रखा गया था, परन्तु पठानों की पुरानी दिल्ली की बस्ती अभी तक बिल्कुल नहीं उजड़ चुकी थी, बल्कि कहना चाहिए कि इस शाहजहानाबाद के लिए बहुत-सा मसाला सामान पुरानी

दिल्ली के महमान के लश्करों से घिरा गया था, जो पुराने किले से होज खास और कुतुबमीनार तक फैले हुए थे।

नदी की दिशा को छोड़कर बाकी तीनों ओर सुरक्षा के लिए पक्की पत्थर की शहरपनाह बन चुकी थी, जिसमें बारह द्वार और सौ से कदमों पर बुर्ज बने हुए थे। शहरपनाह के बाहर ३५६ फुट ऊँचा कच्चा पुश्ता था। परन्तु खाई नहीं थी। सिर्फ सलीमगढ़ का किला बीच जमुना में था जो एक विशाल टापू प्रतीत होता था और जिसे बारह खम्भों वाला पुख्ता पुल लाल किले से जोड़ता था। अभी इस नगर को बने तीस ही बरस हुए थे, फिर भी वह मुगल साम्राज्य की राजधानी के अनुरूप शोभायमान नगरी की सुषमा धारण करता था।

शहरपनाह नगर और किला दोनों को घेरे थी। यदि शहर की उन बाहरी बस्तियों को—जो दूर तक लाहौरी दरवाजे तक चली गयी थी और उस पुरानी दिल्ली की बस्तियों को जो चारों ओर दक्षिण पश्चिम भाग में फैली थी, मिला लिया जाय तो जो रेखा शहर के बीचोंबीच खींची जाती, वह साढ़े चार या पाँच मील लम्बी होती। बाजार का विभाग पृथक है, जो सब शाहजादों, अमीरों और शाहजादियों ने पृथक-पृथक लगाए थे।

शाही महलसरा और मकान किले में थे। किला भी लगभग अर्धचन्द्राकार था, इसकी सीधी में जमुना नदी बह रही थी। परन्तु किले की दीवार और जमुना नदी के बीच बड़ा रेतीला मैदान था जिसमें हाथियों की लड़ाई दिखाई जाती थी। यहीं खड़े होकर सरदार, शहीद और हिन्दू राजा की कोशिश करने में खड़े बादशाह के दर्शन किया करती थी। किले की चहारदीवारी भी पुराने ढङ्ग के गोल बुर्जों की वैसी ही थी जैसी शहरपनाह की दीवार थी। वह ईंटों और लाल पत्थर की बनी हुई थी। इस कारण शहरपनाह की अपेक्षा इसकी शोभा अधिक थी। शहरपनाह की अपेक्षा यह ऊँची और मजबूत भी

थी, उस पर छोटी-छोटी तोपें चढ़ी हुई थीं, जिनका मुँह शहर की ओर था। नदी की ओर छोड़ कर किले की सब ओर गहरी खाई थी जो जमुना के पानी से भरी हुई थी। इसके बुर्ज खूब मजबूत थे और पत्थर के बने थे। खाई के बाहर में मछलियाँ बहुत थीं।

खाई के पास ही बहुत बड़ा बाग था, जिसमें भाँति-भाँति के फूल लगे थे। किले की लाल रङ्ग की सुन्दर इमारत के आगे सुशोभित यह बाग अपूर्व शोभा विस्तार करता था। इसके सामने एक शाही चौक था जिसके एक ओर किले का दर्वाजा था। दूसरी ओर शहर के दो बड़े-बड़े बाजार आकर समाप्त होते थे।

किले पर जो गोरा, रजवाड़े और अमीर पहरा चौकी देते थे, उनके डेरे तम्बू खेमे इसी मैदान में लगे हुए थे। इनका पहरा केवल किले के बाहर ही था। किले के भीतर उमरा और मनसबदारों का पहरा होता था। इसके सामने ही शाही अस्तबल था, जिसके अनेक अस्तबल घोड़े मैदान में फिराए जा रहे थे, इसी मैदान के सामने ही सटिक होकर 'कूड़ी' लगती थी, जिसमें अनेक हिन्दू और मुसलमान वेश्याएँ, नखरीली अपनी अपनी किशतियाँ खोले और धूप में अपनी मैली चादरों बिछाए बैठे थे। ग्रहों के चित्र और रमल फेंकने के पासे उनके सामने पड़े रहते थे। बहुत-सी मूर्खा स्त्रियाँ सिर से पैर तक पुर्ज़ा ओढ़े या चादर से शरीर को लपेटे, उनके निकट खड़ी थीं और वे उनके हाथ-मुँह को भलीभाँति देख पाती पर लकीरें खींचते तथा उँगलियों की पोर पर गिनते। उनका भविष्य बताकर पैसा ठग रहे थे। इन्हीं ठगों में एक होशला पार्तुगीज बड़ी ही शान्त मुद्रा में आसीन बिछाए बैठा था, इसके पास सौ पुरुषों की भारी भीड़ लगी थी पर वास्तव में वह गोरा पूर्ण बिल्कुल अपढ़ था और उसके पास एक पुराना जहाजी दिग्दर्शक यन्त्र था और एक रोमन कैथोलिक सचित्र प्रार्थना पुस्तक थी। वह बड़े ही इतमीनान से कह रहा था—"योरोप में ऐसे ही ग्रहों के चित्र होते हैं।"

पीछे जिन दो बाजारों की यहाँ चर्चा हुई है, जो किले के सामने मैदान में आकर मिले थे, एक सीधा और प्रशस्त बाजार चाँदनी चौक था, जो किले से लगभग बत्तीस तीस कदम के अंतर से आरम्भ होकर सीधा पश्चिम दिशा में लाहौरी दर्वाजे तक चला जाता था। बाजार के दोनों ओर महराबदार दूकानें थीं जो ईंटों की बनी थीं तथा एक मंजिला ही थीं। इन दूकानों के बरामदे अलग-अलग थे और इनके बीच में दीवारें थीं। वहीं बैठकर व्यापारी अपने-अपने ग्राहकों को पटाते थे, और माल असबाब दिखाते थे। बरामदों के पीछे दूकान के भीतरी भाग में माल असबाब रखा था। तथा रात को बरामदे का सामान भी उठाकर वहीं रख दिया जाता था। इनके ऊपर व्यापारियों के रहने के घर थे जो सुन्दर प्रतीत होते थे।

नगर के गली-कूचे में मनसबदारों, हाकिमों और धनी व्यापारियों की हवेलियाँ थीं। जो बड़े-बड़े तुरहों में बँटी हुई थीं। बहुत-सी हवेलियों में चौक और बगीचे थे। बड़े-बड़े मकानों के आसपास बहुत मकान घास-फूस के थे, जिनमें खिदमतगार, नौकर, नानबाई आदि रहते थे।

बड़े-बड़े अमीरों के मकान नदी के किनारे शहर के बाहर थे जो खूब कुशादा, ठण्डे, हवादार और आरामदेह थे। उनमें बाग, पेड़, हौज और दालान थे तथा छोटे-छोटे फव्वारे और तहखाने भी थे। उनमें बड़े बड़े पंखे लगे हुए थे, जिनमें खस की टट्टियाँ लगी थीं। उनपर गुलाम नौकर पानी छिड़क रहे थे।

बाजार की दूकानों में किस्में भरी थीं, पश्मीना, कमखाब, जरीदार मखमलें और रेशमी कपड़े भरे थे। एक बाजार तो सिर्फ मेवों ही का था, जिसमें ईरान, समरकन्द, बलख, बुखारा के मेवे-बादाम, पिस्ता, किशमिश बेर, आलूबालू, और भाँति भाँति के सूखे फल और रूई की तहों में लिपटे बढ़िया अंगूर, नाशपाती, सेब और सदे भरे पड़े थे। नानबाई, हलवाई, कसाइयों की दूकानें गली-गली थीं। चिड़िया

बहुतायत से बिक रही थी। मछली बाजार में मछलियों की भरमार थी। अमीरों के गुलाम फर्राशाना व्यस्त भाव से अपने अपने मालिकों के लिए सौदे खरीद रहे थे। बाजार में ऊँट, घोड़े, बहली, रथ, तामझाम पालकी और विमानों पर अमीर लोग आ जा रहे थे। चित्रकार, नक्काश, जड़िए, सोनाकार, रंगरेज और मनिहार अपने अपने कामों में लगे थे।

इस वक्त चाँदनी चौक में एक लाल चहल-पहल नजर आ रही थी। इस समय बहुत से बरकन्दाज, प्यादे सिपाही, और फर्राशखाने फुर्ती से अपने-अपने काम में लगे हुए थे। बरकंदाज और सवार लोगों की भीड़ को हटाकर रास्ता साफ कर रहे थे। फर्राशखाने सड़कों का कूड़ा कर्कट हटा रहे थे। दूकानदार चौकन्ने होकर चौकस अपनी अपनी दूकानों को आकर्षक रीति पर सजाए हाजिर बैठे थे। इसका कारण यह था कि आज बेगम की सवारी किले से इधर आ रही थी।

बेगम एक पालकी पर सवार थीं। जिस पर एक कीमती जरबफ्त का परदा पड़ा था, जिसमें जगह जगह अजाइबात टँके थे। पालकी के चारों ओर फर्राशखाने मोरछल और चँवर डुलाते पालकी का पेच डाले चल रहे थे। वे जिसे सामने पाते उसी को धकेल कर एक ओर कर देते थे। बहुत से खादिमाना गुलाम सुनहरी डण्डों को दोनों हाथों में लिए आगे आगे मेरे हटो बचो, हटो बचो, चिल्लाते जा रहे थे। उनके आगे आगे भिश्ती तेजी से दौड़ते हुए सड़क पर पानी का छिड़काव करते जाते थे। मोरछलों और चँवरों की मूठ सोने-चाँदी की बहार थी। पालकी के साथ सैकड़ों बाँदियाँ सुनहरी पोशाकें पहनती हुई गुलाब लिए चल रही थीं। सबसे आगे दो सौ सात्तारी बाँदियाँ नङ्गी तलवारें हाथ में लिए, तीर कमान कन्धे पर कसे, सीना उभारे सड़क बाँधे चल रही थीं और उनके पीछे एक मनलहार अपने पुरबहार

रिसाले के साथ बढ़ रहा था। वह मनसबदार एक अठारहवर्षीय अति सुन्दर युवक था। उसका रङ्ग अत्यन्त गोरा, आँखें काली और चमकदार तथा बाल घुँघरवाले थे। वह बहुमूल्य रत्नजटित पोशाक पहिने था—और इतराता हुआ-सा अपने रिसाले के आगे-आगे चल रहा था। उसका घोड़ा भी अत्यन्त चञ्चल और बहुमूल्य था। वास्तव में यह तेजस्वी सुन्दर मनसबदार नवाबत खाँ था, जो शाहे बलख का भतीजा और बुखारे का शाहजादा मशहूर था और बादशाह शाहजहाँ का कृपापात्र मनसबदार था।

इस समय बहुत से अमीर उमरा चाँदनी चौक की सैर को निकले थे। इन अमीरों के ठाठ भी निराले थे। किन्हीं के साथ दस बीस, किन्हीं के साथ दस से भी अधिक नौकर चाकर गुलाम पैदल दौड़ रहे थे। अमीर घोड़े पर सवार झूमते, धीरे-धीरे पान कचरते हुए अकड़ कर चल रहे थे। कुछ चलते-चलते ही पेचवान पर अम्बरी तम्बाकू का कश खींच रहे थे। साथ-साथ लखनौ बंगा बनारसी काम की फर्शी हाथी हाथ लिए दौड़ रहे थे। गुलामों में किसी के पास पानदान, किसी के पास उगालदान, किसी के पास इत्रदान था। कोई सरदार की चढ़ाऊ तलवार लिए चल रहा था और इस प्रकार अमीर का बोझ हल्का कर रहा था। परन्तु ये अमीर चाहे जिस शान से जा रहे हों, ज्योंही बेगम की पालकी उनकी नजर में पड़ती उनकी सब शान हवा हो जाती। जो जहाँ होता तुरन्त घोड़े से उतर कर सड़क के एक कोने में अपने आदमियों सहित हाथ बाँधकर अदब से खड़ा हो जाता और पालकी की ओर मुँह करके तीन बार कोर्निश करता। जिसकी सूचना तुरन्त बेगम को पालकी के भीतर दे दी जाती।

इस प्रकार सूचना देने के लिए जो तड़का सरदार पालकी के साथ चल रहा था वह एक प्रकार से किशोर वय का था। अभी पूरा तारुण्य उसके मुख पर प्रकट नहीं हुआ था। वह एक सुकुमार सुन्दर और सलीका किशोर था। वास्तव में वह शाहजादी की उस्तानी का बेटा

था जिसका बचपन शाहजादों के साथ ही महलमहल में बीता था और जिसे प्यार से शाही हरम में बुल्हामाई कहते थे। यद्यपि इसकी हैसियत एक सेवक ही की थी, पर शाहजादी की कृपा दृष्टि से यह ढीठ हो गया था और अपने को किसी शाहजादे से कम न समझता था। उसके सब ठाठबाट भी शाहजादों ही के समान थे।

धीरे-धीरे सवारी आगे बढ़ती जा रही थी। इसी समय सामने से एक हिन्दू सरदार की सवारी आ गई। यह हिन्दू सरदार बूँदी का हाड़ा राजा राव सुरजमल था। इसकी अवस्था सत्तरीस से अधिक न होगी। उसका उज्ज्वल श्यामल मुख, मूछों की पतली ऐंठी हुई रेखा, बड़ी-बड़ी काली आँखें, गठीला शरीर, बाँकी छटा देखते ही बनती थी। वह कमर में दो तलवारें बाँधे था। और उसके साथ पचासों सवार, पैदल सिपाही और नौकर-चाकर सेवक और मुसाहिब चल रहे थे। दिल्ली में रहने वाले दरबारी उमरावों में इसकी छटा ही निराली थी। ज्यों ही बेगम की सवारी उसकी दृष्टि में पड़ी, वह रास्ते से एक ओर हटकर घोड़े से उतर कर सड़क के एक कोने में दो तीन कदम के अंतर से खड़ा हो गया—और ज्योंही बेगम की सवारी उसके निकट आई, उसने जमीन तक झुककर तीन बार कोर्निश की। मखमल में पुकार लगाई और बूढ़ा बाबा ने बेगम को इसकी सूचना दी। शाहजादी ने तुरन्त अपनी सवारी आगे बढ़ाने का हुक्म दिया और एक रत्नजटित कमलदान की थैली में रखकर पान का बीड़ा उसके पास भेज कर कहलाया—कि वह भी सवारी के साथ रहकर उस रौनक देखे। राव सुरजमल ने सिर पालकी की ओर कर करके सलाम किया, पान का बीड़ा आदरपूर्वक लिया और दो कदम पीछे हटकर खड़ा हो गया।

सवारी आगे बढ़ी और यह हिन्दू सरदार भी पालकी के पीछे-पीछे अपने सवारों के साथ चला। बूढ़ा बाबा ने बेगम को इस बात की सूचना दे दी।

परन्तु वो मनसबदार पालकी के साथ-साथ चल रहा था उसके आँखों में इस हिन्दू सरदार को देखते ही खून उतर आया। परन्तु इस तरफ राजा ने उसकी तनिक भी परवाह नहीं की। अपने घोड़े को एड़ देकर और चार कदम आगे बढ़ वह पालकी के पीछे-पीछे चलने लगा।

किला और शहर के बीच—आज जहाँ दिल्ली का रेलवे स्टेशन और कम्पनी बाग है, वहाँ इस बेगम ने एक तालाब बनवाई थी। यह तालाब उस समय भारतवर्ष भर में बेहद इमारत थी। इसकी सारी इमारतें सुर्ख पत्थरों की और ऊपर बड़े-बड़े आलीशान सुसज्जित कमरे बने थे। जिसमें देश-देश के लोग ठहरते और तफरीह करते थे। तालाब में नहाने के लिए पक्के हौज, नल और बड़े-बड़े बावर्चीखाने बने थे इस तालाब के इन्तजाम के लिए बेगम ने योग्य कर्मचारी नियुक्त किए थे। इस समय तक भी तालाब खूबी बनकर तैयार नहीं हो पाई थी और हजारों आदमी मिलकर उसमें विचित्र काम कर रहे थे।

इस वक्त बेगम की सवारी इसी तालाब की ओर जा रही थी। इसकी सूचना तालाब के दारोगा को भी मिल चुकी थी और वहाँ भी बेगम की अगवानी की धूमधाम मची थी। सब राह-बाट साफ करके छिड़काव किए गए थे। बहुत से लोगे, बाग-बाली अपने-अपने काम में लगे थे। इस समय तालाब का वह भाग जहाँ बेगम तशरीफ रखने वाली थी और जहाँ एक खूबसूरत छोटा-सा बागीचा था भलीभाँति सजाया गया था। पहरे पर्दे का वहाँ मुकम्मिल इन्तजाम कर दिया गया था। बागीचे के बीच संगमरमर की बारहदरी थी। वहाँ बेगम की सवारी उतरी।

शाम की भीनी सुगन्ध हवा में भर रही थी। बाग के माली ने सारी बारहदरी को फूलों से सजाया था। दूर शहनाई आज एक

इसी बारहदरी में आराम और तफ़रीह करना चाहती थीं। खवासतरा और बांदियों ने मसनद, चाँदनी और गाव तकिए लगा दिए। बेगम मसनद पर लुढ़क गईं। कुछ देर आराम करने पर बेगम ने दूल्हा भाई को हुक्म दिया—'वह हिन्दू राजा जो सवारी के साथ है उसे हुक्म दो कि हमारे यहाँ मुक़ीम रहने तक अपने पहरे चौकी रखे और अमीर नजाबत ख़ाँ लश्कर के बाहरी हिस्से में अपने सिपाहियों सहित चला जाय।

शाहज़ादी का हुक्म दोनों उमरावों को पहुँचा दिया गया। दोनों दोनों ने ग़ैरमर्दी निगाहों से एक दूसरे को देखा। तलवार की मूठ पर दोनों का हाथ गया। और क्षण भर दोनों एक दूसरे को रूखी नजरों से देखने लगे। नजाबत ख़ाँ ने बाक़ायदा भर तलवार म्यान से खींच ली और गुस्से भरी आवाज में शेर की तरह गुर्रा कर कहा—"ख़ुदा की क़सम, मैं यह हरगिज नहीं बर्दाश्त कर सकता कि एक काफ़िर को मुसलमान के बराबर बतला दिया जाय। मैं चाहता हूँ कि इसी वक्त तेरे दो टुकड़े करके तेरा गोश्त कुत्तों को खिला दूँ।"

"चाहता तो मैं भी यही हूँ कि इसी वक्त तुम्हारा सर मुर्ग़े-सा उड़ा दूँ। मगर बेहतर यही है कि अभी आर जनाब शाहज़ादा नजाबत अलीख़ान बहादुर, चुपचाप अपनी मोहरी उठाकर उठाकर दबा लाएँ जैसा कि हुज़ूर शाहज़ादी का हुक्म हुआ है, और मुद्दत तक भी आर के यही इरादे और हमलम रहे तो फिर हम दोनों को अपने-अपने इरादे पूरा करने को बहुत गुञ्जाइश है।" नजाबत ख़ाँ ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। वह गुस्से से हाथ चबाता हुआ चला गया। राय सुबहाल तनिक हटकर अपने घोड़े पर बैठ गया।

परन्तु जो मनसबदार पालकी के साथ-साथ चल रहा था उसकी आँखों में इस हिन्दू सरदार को देखते ही खून उतर आया। परन्तु इस तरफ राजा ने उसकी तनिक भी परवाह नहीं की। अपने घोड़े को एड़ देकर और चार कदम आगे बढ़ वह पालकी के पीछे-पीछे चलने लगा।

किला और शहर के बीच—आज जहाँ दिल्ली का रेलवे स्टेशन और कम्पनी बाग है, वहाँ इस बेगम ने एक तालाब बनवाई थी। वह तालाब उस समय भारतवर्ष भर में श्रेष्ठ इमारत थी। इसकी सारी इमारतें दुमंजिली थीं और ऊपर बड़े-बड़े आलीशान सुसज्जित कमरे बने थे। जिनमें देश-देश के लोग ठहरते और तफरीह करते थे। तालाब में नहाने के लिए पक्के हौज, नल और बड़े-बड़े बावर्चीखाने बने थे इस तालाब के इन्तजाम के लिए बेगम ने योग्य कर्मचारी नियुक्त किए थे। इस समय तक भी तालाब खूबी बनकर तैयार नहीं हो पाई थी और हजारों कारीगर मिस्री उसमें चित्र-विचित्र काम कर रहे थे।

इस वक्त बेगम की सवारी इसी तालाब की ओर जा रही थी। इसकी सूचना तालाब के दारोगा को भी मिल चुकी थी और वहाँ भी बेगम की अगवानी की धूमधाम मची थी। सब राह-बाट साफ करके छिड़काव किए गए थे। बहुत से खोजे, हाथ-हाथी अपने-अपने काम में लगे थे। इस समय तालाब का वह भाग जहाँ बेगम तशरीफ रखने वाली थीं और जहाँ एक खूबसूरत छोटा-सा बागीचा था मखमली बिछाया गया था। पहरे पर्दे का वहाँ मुकम्मिल इन्तजाम कर दिया गया था। बागीचे के बीच संगेमरमर की बारहदरी थी। वहाँ बेगम की सवारी उतरी।

शाम की भीनी सुगन्ध हवा में भर रही थी। बाग के माली ने सारी बारहदरी को फूलों से सजाया था। हुजूर शाहजादी आज खुश

इसी बारहदरी में आराम और तफरीह करना चाहती थी। खवासों और बांदियों ने मसनद, चाँदनी और गाव तकिए लगा दिए। बेगम मसनद पर लुढ़क गई। कुछ देर आराम करने पर बेगम ने बूढ़ा बाबा को हुक्म दिया—'यह हिन्दू राजा जो सवारी के साथ है उसे हुक्म दो कि हमारे यहाँ मुकीम रहने तक अपने पहरे चौकी रखे और अमीर नजावत खाँ खेमे के बाहरी हिस्से में अपने खिदमतगारों सहित चला जाय।

शाहजादी का हुक्म दोनों उमरावों को पहुँचा दिया गया। दोनों दोनों ने बेरहमी निगाहों से एक दूसरे को देखा। तलवार की मूठ पर दोनों का हाथ गया। और क्षण भर दोनों एक दूसरे को खूनी नजरों से देखने लगे। नजावत खाँ ने बाखिदत भर तलवार म्यान से खींच ली और गुस्से भरी आवाज में शेर की तरह गुर्रा कर कहा—"खुदा की कसम, मैं यह हरगिज नहीं बर्दाश्त कर सकता कि एक काफिर को मुसलमान के बराबर रुतबा दिया जाय। मैं चाहता हूँ कि इसी वक्त तेरे दो टुकड़े करके तेरा गोश्त कुत्तों को खिला दूँ।"

"चाहता तो मैं भी यही हूँ कि इसी वक्त तुम्हारा सर मुट्ठे-सा उड़ा दूँ। मगर बेहतर यही है कि अभी आप जनाब शाहजादा नजावत अलीखान बहादुर, चुपचाप अपनी नौकरी उखड़े उखड़े बजा लाएँ जैसा कि हुजूर शाहजादी का हुक्म हुआ है, और मुद्दत तक भी आप के यही इरादे और इसलाम रहे तो फिर हम दोनों को अपने-अपने इरादे पूरा करने को बहुत गुंजाइश है।" नजावत खाँ ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। वह गुस्से से होंठ चबाता हुआ चला गया। अब खुशवाल तनिक हटकर अपने घोड़े पर बैठ गया।

: १६

बेगम की बारहदरी

चाँदनी रात थी और बारहदरी के बाहरी चमन में शाहजादी अपनी खास सहेलियों के बीच मखमल पर पड़ी अपनी प्रिय अंगूरी शराब पी रही थी। यों तो उसके लिए फारस, काश्मीर और काबुल से कीमती शीराजी और इस्तंबोल मँगाई जाती थी, परन्तु उसकी अपनी शौक की प्रिय वस्तु यह थी—जो खास उसी की नजरों के सामने अंगूर में गुलाब और बहुत सी मेवाएँ डाल कर बनाई जाती थी। यह अति सुगन्धित और स्वादिष्ट होती थी और बेगम जब खुश होती—इस शराब के दौर पर दौर चढ़ाती थी।

आज वह खुश तो न थी। बहुत सी चिन्ताएँ उसके मस्तिष्क को परेशान कर रही थीं। यों तो इतनी बड़ी मुगल सल्तनत की राजनीति में वह सक्रिय भाग लेती थी, उसी का सर दर्द बोझा न था। परन्तु इस समय तो उसे अपनी ही चिन्ता ने आ घेरा था। इसी से घबरा कर वह किले के भारी वातावरण को छोड़ यहाँ चली आई थी।

अकबर बादशाह के समय ही से यह दस्तूर चला आ रहा था कि मुगल बादशाहों के खानदान की शाहजादियाँ शादी नहीं कर पाती थीं, इससे अनेक बुराइयाँ पैदा होती रहतीं और मुगल हरम का वातावरण हमेशा दूषित रहता था।

परन्तु दारा शाहजादी का विवाह नवाबत खाँ से करने की इच्छा प्रकट कर चुका था। नवाबत खाँ बलख का शाहजादा था, सुन्दर और जवान था। वह शाहजादी को प्रेम भी करता था। बहुत दिन से बलख-बुखारा और मुगल खानदान में चल-चल चली आती थी।

वह चाहता था कि यदि दोनों खानदानों में रिश्ता हो जाय तो यह पुरानी शत्रुता भी जाती रहे। परन्तु इस शादी में बहुत बाधाएँ थीं। प्रथम तो बादशाह ही यह शादी करने को राजी नहीं होते थे। उन्हें उनके साले शाइस्ता खाँ ने समझा दिया था कि यदि यह शादी कर दी गई तो अवश्य ही नजाबत खाँ को शाहजादों का रुतबा देना पड़ेगा। जब कि इस समय वे चाकर से अधिक दर्जा नहीं रखते हैं। फिर शाहे बलख से लड़ने के मंसूबे भी अभी थे और इसके राजनैतिक कारण बने ही हुए थे। परन्तु इसकी तह से बड़ी बाधा यह थी कि शाहजादी उस हिन्दू राजा बूँदी के छत्रसाल को चाहती थी। उन दिनों राजपूतों से मुगल खानदान में रिश्ते होते थे। अभी तक अनेक राजाओं की बेटियाँ मुगल हरम में आई थीं, परन्तु कोई मुगल शाहजादी किसी राजपूत के घर नहीं गई थी। अब तक जिम्मेदार राजपूत सरदार का खुल्लम-खुल्ला शादी कर के रनवास में एक शाहजादी को ले जाना बहुत ही कठिन और अव्यवहार्य था, फिर मुगल अदब कायदे तो ऐसे थे कि बड़े-से-बड़े हिन्दू राजा को मुगल शाहजादियों के सामने भी उसी तरह झुकना पड़ता था जैसे बादशाह के सामने। ऐसी हालत में इन शादियों से मुगल रुआब में भी कमी आ जाती, ऐसा भी सोचा जाता था। परन्तु प्रीत की कटारी का घाव जब लग जाता है तो इन सब बातों पर फिर विचार नहीं किया जाता। शाहजादी इस राजपूत के प्रेम में दीवानी थी। और यह बात नजाबत खाँ और छत्रसाल दोनों ही जानते थे, इसी से वे एक दूसरे को खूनी आँखों से देखते थे।

इसी मामले में एक तीसरा खिलाड़ी भी था। वह था दुलाख, बेगम की उस्तानी का लड़का, वह बेगम के साथ बचपन में खेला था और शायद अभी बेगम से उम्र में कुछ ही कम था। परन्तु बेगम की मुहब्बत का दम भरता था और अपने को शाहजादे से कम न समझता था। वह इतना मूर्ख था कि शाहजादी के विनोद और कृपाओं का वह

प्यार की नजर से देखता था। वह सोचा करता था कि बेगम से शादी कर लेने पर सम्भव है वही बादशाह बन जाय। कभी-कभी वह डींगें भी हाँकता था और उसकी डिंगें भी बहुत होती थीं। यहाँ उसका एक उदाहरण दिया जाता है।

शाहजादी ने उसे खानजादा का खिताब दिया था और उसके फिर से उसे अलम और शाही मरातिब रखने का अधिकार दे दिया था, तथा उसे शाही सिपहसालारों की भाँति पदवी देकर सवारों का सरदार बना दिया था। एक दिन वह बेगम के महल को जा रहा था कि सामने से महाबत खाँ सिपहसालार आते मिल गए। जब वे दोनों पास-पास से गुजरे, तो कुछ के सैनिकों में झगड़ा हो गया। उधर महाबत खाँ ने उसके झगड़े को देखा तो अपना अलम तह कर लिया और बिना ही झगड़े के शाही हुजूर में जा पहुँचा। जब बादशाह को इसकी सूचना मिली, तो उसने इसका कारण पूछा। महाबत खाँ ने कहा—"हुजूर जहाँपनाह, हमारा समय तो बीत चुका। अब तो मतरब अलम उठाते हैं।" जब बादशाह को सब बातें मालूम हुईं तो क्रोध में आकर उन्होंने खानजादा साहेब का अलम छुड़वा दिया। खानजादा ने शाहजादी के सामने बहुत रोना रोया पर उसका कोई फल न निकला। फिर भी वह शाहजादी का प्रिय पार्षद बना था और अब शाहजादी उस सुन्दर मूर्ख को अपनी इच्छाओं की पूर्ति का माध्यम बनाए हुई थी और वह शाहजादी के खानगी मामलों का दारोगा अफसर था।

दैवयोग ही कहिए कि इस समय शाहजादी के ये तीनों चाहने वाले एक ही स्थान पर हाजिर थे। तीनों ही इस समय शाहजादी की विशेष कृपा के इच्छुक थे।

बारहदरी समूची संगमरमर की बनी थी। उसका फर्श काले और सफेद पत्थर का बना था। दीवारों पर रङ्ग-बिरङ्गे पत्थरों की सुन्दर

पच्चीकारी की गई थी। चौड़ी ऊँचाई पर कदेआदम आईने लगे थे। फर्श पर नर्म ईरानी कालीन बिछे थे। उन पर हाथीदाँत के काम का छपरखट था, जिसके ऊपर जरबफ्त का चँदोवा तना था, जिसमें मोतियों की झालर टँकी थी। पलंग पर मखमली गद्दा तोशक और मसनदें लगी थीं, जिनपर निहायत नफ़ीस जरदोज़ी का काम हो रहा था। सामने करीने से चौकियों पर ढेर के ढेर फूल इत्र और अनेक प्रकार की सुगन्ध तथा शृङ्गार की वस्तुएँ रखी हुई थीं।

मसनद पर अलसाई देह लिए शाहज़ादी अकेली बैठी थी। बाहर नङ्गी तलवार लिए तातारी बाँदियों का पहरा था। इसी समय हँसते हुए बूढ़ा बाबा ने आकर सोने के प्याले में शीराज़ी पेश की।

बेगम ने आँखें तरेर कर कहा—"यह क्या? यह हमारी पसन्द की चीज़ अंगूरी शराब कहाँ है?"

"हज़रत, एक प्याला इस शीराज़ी का भी तो पहिले मेरा फर्मा कर ईरान के बादशाह को ममनून कीजिए—जिसने यह कीमती शराब बड़े शौक से काबुल के अमलदार के मारफ़त हुज़ूर की खिदमत में भेजी है।"

"यह क्या हमारी उस निआमत से बढ़कर है जिसे खास हमारे हकीम अंगूर में गुलाब डाल कर और मुश्की अर्कियात मिलाकर तैयार करते हैं। तुम तो उस निआमत को चख चुके हो बूढ़ा मियाँ।"

"हुज़ूर के तुफैल से, यह नायाब शराब मैंने भी है, बेशक उसका मुकाबिला तो आबेहयात भी नहीं कर सकती। मगर हुज़ूर शाहज़ादी बड़ा उस कम्बख्त शाहे ईरान का भी तो दिल रखिए। बड़ी-बड़ी उम्मीदें बाँध कर उस मनहूस ने यह कीमती तोहफ़ा भेजा है।"

शाहज़ादी ने हँसकर कहा—"शाहे अब्बास ऐसा बादशाह नहीं है जिसे मनहूस कहा जाय। बस, हमें उसकी खातिर बकलेवकम मंजूर है।

इसके अलावा हम तुम्हें भी मम्नून किया चाहती हैं। इसीसे बहुत्ती यह प्याला मंजूर करती हैं"—

'शुक्र है खुदा का [illegible] शाहजादी को इस गुलाम का भी इस कदर ख्याल है, मैं तो एकदम नाउम्मीद हो गया था।"

"किस अमर में?"

"जो बख्शी पाऊँ तो अर्ज करूँ कि हुजूर शाहजादी की नजरे इनायत इस कमनसीब पर अब पहिले जैसी नहीं है।"

"तो दूल्हा मियाँ अब तुम बड़े भी तो हो गए, बच्चे नहीं हो, फिर हम तो तुमसे खुश हैं।"

शाहजादी ने प्याला खाली किया और दूल्हा मियाँ ने ठंडे पानी से भर कर शाहजादी के आगे बढ़ाते हुए कहा—"बेअदबी माफ हो बेगम, गुलाम बड़ा हो गया तो यह खुदा की कारस्तानी है कुछ गुलाम की तकसीर नहीं और अब तो गुलाम को यह समझ भी आ गई है कि हुजूर जो इस नाचीज पर खुश होने का इनायत करती हैं वह बहुत माकूल है। जो निसार कुछ सवाब की उम्मीद रखता है।"

शाहजादी खिलखिला कर हँस पड़ी। उसने कहा—"तो बेहतर है—तुम अपने दिल का इजहार खुलकर करो—हम उस पर गौर करेंगे—"

"तो अर्ज करता हूँ हुजूर शाहजादा कि उन तुर्क मदूद नवाब खाँ की आँखें मुझे कतई पसन्द नहीं हैं, और न वह आखर हिन्दू राजा—जिस [illegible] इनायत करके और सवारी के साथ रहने का हक देकर सरफराज किया है—मुझे पसन्द है।" उसने तीसरा प्याला शाहजादी की ओर बढ़ाया।

शाहजादी ने हँसती हुई आँखों से उसकी ओर देखकर कहा—"अच्छा, तो तुम इन दोनों नापसन्द आदमियों के साथ किस तरह पेश आना चाहते हो?"

"मैं दोनों से दो-दो हाथ करना चाहता हूँ। इश्क के मैदान में एक दो तीन नहीं रह सकते शाहजादी!"

"बेहतर, तुम्हारी तजवीज हम पसन्द करती हैं और इस अमर में इन दोनों बदबख्तों को जल्दी हुक्म देना चाहती हैं। बस, तुम अमीर नवाबत खाँ को इसी वक्त हमारे हुजूर में भेज दो और खुद बहस्मीनान आराम करो"—

शाहजादी ने मुस्कुराकर दूल्हा मियाँ की ओर देखा। दूल्हा मियाँ को शाहजादी की विनोद वस्तु या और अपने को शाहजादी के प्रेमियों में समझना था, इस बात से खुश नहीं हुआ। उसने धीरे से कहा—"क्या हुजूर को एक प्याला संगूरी शराब का भी पेश करूँ? जिसकी हुजूर शाहजादी इस वक्त शौकीन हैं।"

"बखीनन, वह प्याला दूल्हा मियाँ, तुम्हारे हाथ से हम नोश फर्मायेंगे"

दूल्हा खुश हो गया। उसने प्याला शाहजादी को पेश किया। और शाहजादी ने प्याला हाथ में लेकर इशारे ही से उसे कह दिया कि हुक्म की तामील हो।

विवश दूल्हा मियाँ उस आनन्ददायक सोहबत को छोड़कर उठे। और जाकर अमीर नवाबत खाँ को बेगम का हुक्म सुना दिया। बेगम ने धीरे-धीरे प्याला खाली किया और मसनद पर लुढ़क गईं। इस वक्त वह मौज में थीं और अच्छे-अच्छे विचार उसके हृदय को आनन्दित कर रहे थे। वह सोच रही थीं, आशिक नं० एक हलाल हुए और आशिक नं० दो की आमद है।

इसी समय नवाबत खाँ ने आकर शाहजादी को कोर्निश किया और दूबदू होकर शाहजादी के सामने बैठ गया। यद्यपि यह मुगल-दस्तूर और अदब के विपरीत था, लेकिन प्यार मुहब्बत के मामलों में अदब का लिहाज चलता नहीं है।

शाहजादी ने अमीर को पान देकर कहा—"अमीर सुकावक इत्मीनान से बैठिए।"

नवाबक खाँ उसी तरह दुबाग् बैठा रहा। उसने पान लेकर शाहजादी को सलाम किया और कहा—"शाहजादी अब कब तक मैं बहता रहूँ?"

"तुम्हें तकलीफ क्या है दिलवर?"

"अब वादा पूरा होना चाहिए और शरअ की रू से इस नाचीज को शाहजादी को प्यार करने का हक मिलना चाहिए।"

"ओह, तुम्हारा मकसद निकाह से है"—शाहजादी ने एक फूल के गुच्छे से खेलते हुए कहा।

"बेशक और मुझ से हुजूर शाहजादी और वालिद अहद ने वादे किए हैं।"

"लेकिन ये सब तो पुरानी बातें हैं जानेमन, मुगल शाहजादियों की शादी नहीं होती है।"

"क्यों नहीं होती है?"

"क्या आपने नहीं सुना कि मामू शाइस्ता खाँ ने जहाँपनाह को इसकी सही वजह बताते हुए कहा था कि अगर ऐसा हुआ तो जिस अमीर से शादी की जायगी उसे शाहजादों की बराबरी का दरजा देना पड़ेगा।"

"लेकिन खुदा के फजल से मैं भी बराबर का शाहजादा हूँ।"

"तो शाहजादा साहेब, हमें इससे कब इनकार है, हमारी नजरे इनायत पर आप शाकी न हों—"

"शाकी नहीं।"

"मगर जो बात हो ही नहीं सकती उसके लिए हम बादशाह सलामत से अर्ज भी कैसे कर सकती हैं?"

"लेकिन, शाहजादी, आप तो तख्तनशीं की मालिक हैं। जहाँपनाह क्या आपकी बात टाल सकते हैं।"

"फिर भी एक मनसबदार से हिन्दुस्तान के बादशाह की लड़की की शादीगैर मुमकिन है।"

"तो फिर गुनाह से फायदा।"

"क्या तमाम हिन्दुस्तान के बादशाह की शाहजादी भी गुनाह कर सकती है।"

"शाहजादी, हिन्दुस्तान के बादशाह के ऊपर भी एक दीनो-दुनिया का बादशाह है।"

"वह आम लोगों के लिए है—क्या वह भी कभी मुमकिन है कि मुगल शाहजादी एक अदना मनसबदार की बाउज़ लौंडी बन कर रहे।"

"लेकिन शाहजादी ,,"

"बस खामोश, हम ऐसी बातें सुनने की आदी नहीं। बस, हम अपनी खुशी से जिस कदर इनायत तुम पर करें उतने ही में आसूदा रहो।"

"मगर मेरी भी तो कुछ ख्वाहिशात हैं।"

"होंगी, हम फिलहाल इस अम्र पर गौर नहीं कर सकतीं। तुम्हारी रुखसत है हमने आज यहाँ बारहदरी में मुकाम किया और तुमसे मुलाकात की। हम चाहती हैं कि आइन्दा अपने इरादों को काबू में रखो।"

"तो हुजूर मेरी एक अर्ज है।"

"अर्ज करो।"

"मुझे भी अमीर मीरसुमशा के साथ दक्खन भेज दीजिए। वाकि अपनी आँखों से मैं यह सब न देख सकूँ जिसे देखने का मैं आदी नहीं हूँ।"

"तुम्हारा मकसद क्या है?"

"शाहजादी यह काफिर हिन्दू राजा, जिसमें हुजूर खास दिलचस्पी ले रही है, मैं उसे कत्ल करूँगा और फिर दक्खन चला जाऊँगा

और फिर कभी आपको मुँह न दिखाऊँगा"—नवाबत खाँ तेजी से उठकर चल दिया।

बाहर आकर उसने देखा—खानजादा साहेब सामने हाजिर हैं। खानजादा ने आगे बढ़ कर कहा—"आदाब अर्ज है मनसबदार साहेब, कहिए, शाहजादी से शादी तय हो गई?"

नवाबत खाँ ने घूरा और क्रोध में भरकर कहा—"मदूद, नामाकूल, तेरा सर धड़ से अलहदा करूँगा।"

"क्यूरी। मनसबदार साहेब, मगर शादी का सुबूत देख लेने के बाद।" वह हँसता हुआ एक ओर चला गया। और नवाबत खाँ तावपेंच खाता एक ओर गया।

शाहजादी कुछ देर फूलों के एक गुलदस्ते को उछालती रही। कुछ देर बाद उसने दस्तक दी।

चाँदनी खूब चटख रही थी। और बेगम अंगूरी शराब के खुमार में मस्त थी। उसका शरीर मसनद पर अस्तव्यस्त पड़ा था। आँखें नशे में झूम रही थीं। उसकी प्यारी विश्वासिनी बाँदी हुस्न बानू और खास खवाजासरा रुस्तम उसकी खिदमत में हाजिर था। इस समय आधी रात बीत रही थी। और उसकी मुगन्धित हवा चल रही थी। उसने एकबार घूर्णित नेत्रों से इधर उधर देखा और रुस्तम की ओर देख कर कहा—

"वह हिन्दू राजा चौकी पर मुस्तैद है न?"

"जी हाँ, खुदावन्द।"

"तो उसे हमारे रूबरू हाजिर कर। अपनी मिहरबानियों से हम उसे सरफराज किया चाहती हैं।"

रुस्तम सिर झुका कर चला गया। बेगम ने गर्दन झुका कर हुस्न बानू की ओर तिरछी नजर से देखा और कहा—"क्या तू उस हिन्दू राजा की बाबत कुछ जानती है।"

"सिर्फ़ इतना हो कि वह एक दयानतदार और नेक रईस है।"

"बस?"

"खूबसूरत और बाँका भी एक ही है।"

"हरामजादी, क्या तेरी तबियत उस पर मायल है?" बेगम ने उत्तेजित होकर हाथ का गुलदस्ता बाँदी पर दे मारा।

बाँदी ने जमीन तक झुक कर बेगम को सलाम किया और कहा—'एक प्याला शीराज़ी हूँ सरकार।'

"दे, गुलाब और इस्तम्बोल भी मिला।"

बाँदी ने स्वादिष्ट शराब का प्याला तैयार कर बेगम के हाथ में दिया।

शराब पीकर बेगम ने कहा—"तू किसी ऐसे मुसव्विर को जानती है जिसने इन दोनों के दिल्लू खेला की तस्वीर बनाई हो।"

"जानती हूँ खुदावन्द।"

"तो कुछ रुपए के बाद उसे मय तस्वीर के हाज़िर करना, जा भाग।"

बेगम ने प्याला फिर उस पर फेंका और मसनद पर उठँग गई। इसी समय सलाम ने राय छत्रसाल के साथ आकर सलाम किया। छत्रसाल ने आगे बढ़कर बेगम को कोर्निश की।

बेगम ने तिरछी नज़र से छत्रसाल की ओर देखा। छत्रसाल चुपचाप सलाम करके वहाँ से सरक गया। अब एकदम एकान्त पाकर बेगम ने कहा—'खुदा का शुक्र है, बैठ जाइए'—उसने मसनद की ओर इशारा किया। पर वह तरुण राजपूत एक कदम आगे बढ़ कर ठिठक कर रह गया। उसने कहा—"शाहज़ादी बेहतर हो मुझे अपनी नौकरी बजाने का हुक्म हो जाय।"

"मेरे प्यारे राजा, तुम यह क्या कह रहे हो। तुम्हारी ऐसी ही बातों से मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता है।" शाहज़ादी ने अपनी

बड़ी-बड़ी आँखें उठा कर राजा की ओर देखा और मीठे स्वर में कहा—"आज हम बहुत खुश हैं और उम्मीद है, इस चमेली-सी चटकती चाँदनी का लुत्फ उठाने में आप खलल न करेंगे।"

तब्बा राजा अपनी जगह पर ही खड़ा रहा। शाहजादी की शराब से लाल आँखें और भी लाल हो गईं, परन्तु उसने मन के गुस्से को रोक कर कहा—"जानेमन, हमारे पास यहाँ मसनद पर बैठ कर हमें सोहबत बख्शो।"

"मुझे अफसोस है, शाहजादी, मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"क्यों नहीं कर सकते दिलबर?"

"यह मेरे दीन-ईमान के खिलाफ है।"

"लेकिन हमारी खुशी है हम तुम्हें दिल से चाहती हैं।"

"मैं नाचीज राजपूत, हुजूर शाहजादी की इस इनायत का हकदार नहीं हूँ।"

"तो तुम हमारी हुक्म उदूली की जुर्रत करते हो।"

"हुक्म दीजिए कि मैं चला जाऊँ।"

"क्या इस चाँदनी रात में, इस फूलों से महकती फिजा में प्यारे राजा, क्या तुम नहीं जानते कि हम दिल से तुम्हें चाहती हैं, तुम से दिली मुहब्बत रखती हैं, तुम्हें जर जिस चाव का है जानेमन, कहो, हम वही करें जिसमें तुम्हें खुशी हो।"

"शाहजादी मुझे चले जाने की इजाजत दीजिए और फिर कभी ऐसा कहना जबान पर न लाइए—मैं यही चाहता हूँ।"

"और हमारी मुहब्बत?"

"उस पर शायद मनसबदार नवाबजादों का हक है।"

"ओह, समझ गई। तुम्हें रश्क हो सकता है दिलबर, लेकिन हम तुम्हें चाहती हैं—सिर्फ तुम्हें। तुम मेरे दिलबर हो। जिस दिन मैंने पहली बार झरोखे से तुम्हें घोड़े पर सवार आते देखा—जिसकी आप जमीन पर नहीं पड़ती थी और तुम उस पर पत्थर की मूर्ति की तरह

अचल बैठे थे। तभी से तुम्हारी यह मूर्ति हमारे मन में बस गई है दिलबर। उस दिन तुम्हें देख हम अपने को भूल गई। तभी से मेरा दिल बेचैन है। हम तुम्हें अपने आगोश में बैठा कर खुशहाल होना चाहती हैं। हरचन्द हमने तुम्हें बुलाया और तुमने इन्कार कर दिया। मेरे खत और तोहफे तुमने लौटा दिए। आज हमने तुम्हें पाया है। अब हमारे पास आकर बैठो। हम अपने हाथ से तुम्हारे इत्र लगाएँ तुम्हें प्यार करें और अपने दिल की आग को बुझाएँ।"

"हजरत बेगम साहिबा, इस वक्त आपकी तबियत नाखाब है, मैं जाता हूँ—"

बेगम शेरनी की तरह गरज उठी।

"तुम्हारी यह हिमाकत, हमारी आरजू और मुहब्बत को ठुकराओ! क्या तुम नहीं जानते कि हमारे गुस्से में पड़ कर बड़ी-से-बड़ी ताकत को दोजख की आग में जलना पड़ता है।"

लेकिन राजा पर इस बात का भी कोई असर नहीं हुआ। उसने बेगम की किसी बात का जवाब नहीं दिया। उसने मस्तक झुका कर बेगम को अभिवादन किया और तेजी से चल दिया। बेगम पैर से कुचली हुई नागिन की भाँति फुफकारती हुई मसनद पर छटपटाने लगी।

राजा के बाहर आते ही बूढ़ा ने सलाम करके हँसते हुए कहा—"मुबारक राजा साहेब, मुबारक, शाहजादी की आशनाई मुबारक।" राजा का हाथ तलवार की मूठ पर गया और बूढ़ा हँसता हुआ भाग गया।

१७

हुगली के कैदी

हुगली का इलाका बादशाह जहाँगीर ने पोर्चुगीजों को दे दिया था। कहने को वे केवल व्यापार करते थे। पर वास्तव में लूट-खसोट,

अत्याचार और बलात्कार ही उनका धन्धा था। वास्तव में यह उन दिनों चोरे लुटेरों का एक दल था जिसे बादशाह से मनमानी लूट करने की छूट दे दी गई थी और जिनकी कहीं सुनवाई ही न होती थी।

अपने शाहजादा होने के समय में शाहजहाँ जब दुगली होकर जा रहा था तब पोर्चुगीज अपने किले से बाहर आकर बादशाह की बेगम मुमताज महल की दो लौंडियों को पकड़ ले गए थे। उस समय मुमताज महल ने उन पोर्चुगीजों की बहुत खातिर खुशामद की थी कि वे उन लौंडियों को वापस दे दें, परन्तु पोर्चुगीजों ने इसकी तनिक भी परवाह न की थी।

बादशाह होने पर शाहजहाँ इस बदमाश पोर्चुगीजों की इस हरकत को भूला नहीं था। परन्तु कुछ ऐसी राजकीय उलझनें आ पड़ी थीं कि वह इस मामले में कुछ न कर सका था—यद्यपि बेगम ने उसे बहुत उकसाया भी था। इसी बीच बेगम का देहान्त हो गया। और बादशाह अनेक मामलों में उलझा रहा, अब अवसर और बहाना उसे मिल गया तो उसने कासिम खाँ की कमान में एक भारी सेना देकर उन्हें गिरफ्तार करने और किला ढहा देने के लिए भेजा। उससे पोर्चुगीजों ने पहिले तो कुछ दे ले कर सुलह करनी चाही परन्तु जब कासिम खाँ ने गोलाबारी शुरू कर दी तो वे सन्न पड़े। अन्त में उन्हें आत्म-समर्पण करना पड़ा। और कासिम खाँ पाँच हजार पोर्चुगीजों को परिवार सहित कैद कर लाया। इन कैदियों में कई आगस्टीनियन, फ्रांसीसियन और जेसुइट पादरी भी थे। कासिम खाँ ने उन सबको बादशाह के सामने पेश किया। बादशाह ने सब कैदियों को कत्ल कर डालने और उनकी औरतों और लड़कियों को बाजार में बेच डालने का हुक्म दिया। शाहजहाँ ने इन स्त्रियों में से बहुतों को अपने मुसाहिबों को बाँट दिया। जो अति सुन्दर थीं उन्हें अपने हरम में रख लिया।

अपनी औरतों की प्राप्ति के लिए और जान बचाने के लिए बहुतों ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। क्योंकि बचने का एक यही मार्ग था।

परन्तु पादरियों ने अपना धर्म बदलने से बिल्कुल इन्कार कर दिया और कहा—हम ईश्वर के भरोसे हैं। बादशाह चाहे जो कुछ करे। एक आरमीनियन अमीर की सिफारिश से बादशाह ने उन्हें प्राणदण्ड से मुक्त कर दिया। कुछ की भारी रकम देकर उनके दोस्त बोरपियनों ने बचा लिया।

इन्हीं कैदियों में एक आर्मिनियन लड़की थी, जिसका बाप कत्ल कर दिया गया था और जिसे कुछ बदमाश गारे चोरों ने छिपा कर रख छोड़ा था। वे चाहते थे कि मामला ठण्डा हो जाय तो उसे अच्छे दामों पर बेचें। ऐसे माल के खरीदारों की दिल्ली में कमी न थी। इन कैदियों में एक अंग्रेज सिपाही भी था जो बहुत अच्छा गोलंदाज था। उसके हुनर की तारीफ सुन कर दारा ने उसे मृत्युदण्ड से मुक्त करा दिया था और अपनी सेवा में रख लिया था। मृत्युदण्ड से मुक्त होने पर इस अंग्रेज ने दारा को खुश करने के लिए उस आर्मिनियाना लौंडी की बात उससे कही। उसके रूप-लावण्य का भी बहुत-बहुत बखान किया और कहा—"हुजूर, बेअदबी माफ हो तो कह सकता हूँ कि शाही हरम में एक भी नाजनी उसके जोड़-तोड़ की नहीं है।" उसने यह भी पता दिया कि कुछ चोरों ने उसे अमुक स्थान पर छिपा रखा है और वे उसे कहीं बेचने की जुगाड़ में हैं।

दारा स्त्रियों का बहुत शौकीन था। उसने सिपाही के साथ जाकर गुप्त रूप से उस लड़की को देखा—और अधिक झंझट न खड़ा कर उन चोरों से उसे खरीद लिया और वे किसी से उसके सम्बन्ध में चर्चा न करें इसलिए उन्हें दिल्ली से बाहर भेज दिया।

जब वह आर्मिनियाना लौंडी दारा के ऐश महल में पहुँची तो उसके रूप और चमक को देख कर महल की सारी औरतें दंग रह गईं। उसने बड़ी-बड़ी माँगें पेश कीं जो दारा ने तत्काल पूरी कीं। देखते ही देखते वह अपने रुआब से मलिका की तरह रहने लगी। वह वैसी सुन्दर और मनहर थी—वैसी ही मुँहफट और शराबी भी थी। वह

बढ़िया श्रीमती बिलायती शराब पीती और शराब के झोंक में मनमाने हुक्म जारी करती थी। इतना होने पर भी उसने दारा को अपना अंग छूने नहीं दिया। उसने साफ़ कह दिया—हज़रत, जब तक निकाह न पढ़ाएँगे—मुझे न पा सकेंगे। मैं हुज़ूर की लौंडी नहीं मलिका बना चाहती हूँ।

परन्तु यह बड़ी कठिन बात थी। बादशाह किसी भी हालत में एक ख़रीदी गुलाम को बेगम बनाने को राज़ी नहीं हो सकते थे। इस चुलबुली और नखरेवाली गुलाम को ख़रीदने की बात जब बादशाह ने सुनी तो उनने बहुत नाराज़ी ज़ाहिर की और इस बेअदबी करवाई के लिए दारा से जवाब तलब किया। दारा उस लौंडी को पाने के लिए इतना बेचैन हो गया कि जान देने पर आमादा हो गया। अन्त में उसने अपनी बड़ी बहिन बड़ी बेगम जहाँआरा का सहायता लेने का निर्णय किया और वह उसके पास गया।

जहाँआरा बेगम भी कुछ ऐसे ही मर्ज़ में मुब्तिला थी। वह भी अपनी शादी कराने में मुग़ल-मर्यादा के विपरीत थी। वह दारा की मदद माँग चुकी थी और दारा ने उसे वचन दिया था कि बादशाह होने पर वह अवश्य उसकी शादी उसके मनचीते आदमी से कर देगा। इसी से बेगम दारा ही को बादशाह बनाना चाहती थी। दारा ने बहिन से मुलाक़ात कर उससे इस काम में मदद माँगी।

: १८ :

फौज-क़रार

वलीअहद दारा बड़ी बेगम के महल में तशरीफ़ लाए, साधारण शिष्टाचार के बाद भाई-बहन ने दिल खोल कर बातचीत प्रारम्भ की। पहले बेगम ने कहा—"अब वह वक़्त आ गया है कि हमारे दिलों के अरमान पूरे हों और बिरादर, मेरी सारी उम्मीदें सिर्फ़ तुम पर ही हैं।"

"तो मैंने जो क़ौल तुम्हें दिया है, पूरा करूँगा, अब तो तुम इस बात से खुश हो कि बंगाल पर फ़ौजकशी नहीं होगी।"

"लेकिन हज़रत सलामत तो अमीर नजावत ख़ाँ से शादी करने को राज़ी ही नहीं होते।"

"यह सब उस मरदूद शाइस्ता ख़ाँ की कारगुज़ारी है। उसी ने हज़रत सलामत को समझाया है कि यदि नजावत ख़ाँ से बेगम की शादी कर दी गई तो उसे अवश्य ही शाहज़ादों की पदवी देनी होगी।"

"मैंने भी तो उस दोज़ख़ी कुत्ते से पूरा बदला ले लिया है।"

"लेकिन क्या नजावत ख़ाँ बंगाल का शाहज़ादा नहीं है, और क्या वह इस रुतबे को पहुँचने के काबिल नहीं?"

"लेकिन हज़रत सलामत तो अभी तक यह समझते हैं कि कभी न कभी शाहे बंगाल से लड़ना ही पड़ेगा।"

"और तुम्हारा वादा। तुमने कहा था कि बंगाल पर कभी फ़ौज कशी नहीं होगी?"

"इतना ही नहीं—मेरा यह भी वादा है कि बादशाह होते ही तुम्हारी शादी नजावत ख़ाँ से कर दूँगा, तब तक मेरी प्यारी हमशीरा, तुम अपने दूल्हाभाई पर ही सब्र करो।"

"आह तो तुम्हें भी कुछ ऐसा शक है?"

"शक की क्या बात है बेगम, आख़िर वह जानेजाना है ही, शाहज़ादियों और अमीरज़ादियों जानेजानों से तक़रीह कर सकती हैं?"

"मैंने जो उसे तीन हज़ारी जात का रुतबा देकर उसे सिपहसालार बनाया है इसी से तुम शक करने लगे?"

"बहस से क्या फ़ायदा। मगर मेरा काम, उस पर भी तो गौर करो बेगम।"

"मुझे तुम्हारा पैग़ाम मिला था। तुम्हारा काम बहुत मुश्किल है बिरादर, एक अदना ज़रख़रीद ग़ुलाम को बेगम बनाना मुनासिब नहीं। आख़िर तुम शहन्शाहे हिन्द हमले वाले हो। क्या हिन्दुस्तान के हिन्दू

राजा और दीगर अमीर यह पसन्द करेंगे कि वे एक बरखरीद आर्मि-नाना लौंडी को मलिका समझ कर उसे सलाम करें।"

"तो अब तुम भी नसीहत देने लगीं!"

"नहीं, नहीं, मैं मौका पाकर हजरत सलामत से अर्ज करूँगी, लेकिन तुमने उस मयकर महाबत की हरकत देखी।"

"लेकिन इसमें कसूर बूढ़ा मिर्जा का ही है, उसे महाबत खाँ के सामने अपना झण्डा रह कर देना था। तुम तो जानती हो कि वह एक पुराना और बहादुर सरदार है। जन्नतनशीन जहाँगीर को भी उसने नीचा दिखाया था। हजरत सलामत ने जब सुना कि उसने महाबत के मुकाबले झण्डा उड़ाया है तो उन्होंने बूढ़ा मिर्जा का झण्डा झुकवा दिया।"

"मैं यह कर्दाश्त नहीं कर सकती और तुम—जो जानते हो कि मैं उसपर मिहरबानी रखती हूँ—भी यह कर्दाश्त न करोगे, यह उम्मीद है।"

"तो मैं क्या करूँ?"

"वह काबुल का हाकिम है, काबुल तुम्हारी ही जागीर है। उसे वहाँ से हटा कर कहीं दूर फेंक दो।"

"अल्लाह, अम्मा वह कभी पसन्द न करेंगे।"

"लेकिन मैंने उससे वादा किया है। बराबर, आखिर मुझे भी तुम्हारा काम करना है, जो करीब-करीब नामुमकिन है।"

"खैर, तो तुम मेरी महबूबा मुझे दिलवा दो तो मैं भी महाबत के पंख काट दूँगा।"

"यह तो आज ही रात को हो जायगा।"

"तो वह भी चल हो गया समझो।"

"तसल्ली हुई बराबर, लेकिन इस पाजी शाहस्ता खाँ से होशियार रहना।"

"और तुम उस बेईमान मीरजुमला के कमीने पर नजर रखना। कहे देता हूँ—उस कमीने ने दगा की तो उसकी और उसके बेटे अमीनुद्दीन की औरत को मैं बाजार में बेचा दूँगा।"

"इत्मीनान रखो। आज ही मैंने उस पर रहमोकरम किया है। लेकिन मुझे तुमसे एक राज की बात कहनी है बराबर। वह मैं तुम्हीं से कह सकती हूँ।"

"बेशक कहो।"

"हकीकत यह है कि मैं नजावत खाँ के साथ शादी करना नहीं चाहती।"

"अर्रे, तो क्या कोई नया गुलरू नजर चढ़ गया।"

"बराबर, मैं बूँदी के राव छत्रसाल पर मर मिटी हूँ। मेरी शादी या तो उसी से होगी या कब्र के साथ।"

"तोबा, तोबा, और नजावत?"

"बिलफेल तुम उस मीरजुमला के हमराह दक्कन भेज दो।"

"क्या वहाँ तक?"

"और छत्रसाल को पाँच हजारी जात का मनसब दे दो।"

"लेकिन मैं समझता था तुम अमीर नजावत खाँ को पसन्द करती हो।"

"पसन्द करती हूँ, मिहरबानी भी करती हूँ, मगर उसे सब्र ही नहीं आता।"

"वह चाहता क्या है?"

"यही, कि मुगल शाहजादियाँ भी मुहब्बत का दर्द बर्दाश्त करें।"

"लेकिन बेगम, यह दर्द तो आप ही उठ खड़ा होता है, शाहजादियों और शाहजादों की ओर देखता भी नहीं, मेरा ही हाल देखो।"

"काफरों बराबर, उस गुलाम लौंडी को तुम इतना चाहते हो?"

"बेगम, अगर उससे मेरी शादी न हुई तो मैं जान दे दूँगा।"

"वहाँ तक! तोबा, तोबा!" शाहजादी हँसते-हँसते मसनद पर

साफ़ गई, फिर उसने दारा को पान देते हुए कहा—"बुरा हाफ़िज़, बड़ी अहद की बात इतनी सस्ती नहीं है। मैं आज ही अम्बाबान से अर्ज़ करूँगी।"

दारा ने बेगम का पल्ला चूमा—और चला गया।

१६ :

दरबारे खिलवत

इस दरबार की तैयारियाँ भी बहुत ठाठ से की गई थीं। यद्यपि यहाँ इने-गिने ख़ास-ख़ास दरबारी ही बुलाए गए थे। परन्तु इस दरबार का रोबदाब निराला ही था। दीवाने ख़ास, जिसमें यह दरबार जुड़ा था—समूचा संगेमर्मर का बना हुआ था और इसकी छत पर अद्भुत सुनहरा काम किया गया था। यह एक लम्बे दालान महराबों पर बना हुआ था तथा जमना की ओर से खुली उपजी हवा इसमें निरन्तर आती रहती थी।

बादशाह एक चकाठ कुर्सी पर बैठे थे। उन्होंने हल्के राख के वस्त्र पहने थे। वज़ीर और उमरा जो बुलाए गए थे—हाथ बाँधे सिर झुकाए अपने-अपने स्थान पर खड़े थे। बड़ी अहद शाहज़ादा दारा एक छोटे से सुनहरी तख़्त पर बादशाह के क़दमों में बैठा धीरे धीरे बादशाह से बातें कर रहा था। बड़ी बेगम भी खिलमन में तशरीफ़ रक्खे थीं और खिलमन के निकट ही मख़मली पर्दे के पास कई ख़ानगी बाँदियाँ और लोहा सरदार अब्बास हाथ बाँध इस इन्तज़ारी में चाक चौबन्द खड़ा था कि आवश्यकता होने पर बेगम के हुक्म की तामील कर दी जाय।

खम्भों पर रङ्गीन ज़रीकाम के वस्त्र लपेटे हुए थे और रेशमी बंदुए, जिनमें रेशम और ज़री के फुँदने टँके थे, तने हुए थे। फ़र्श

पर नर्म नमदे और कीमती कालीन बिछे थे जिन पर पैर पड़ते ही पैर हाथ भर धँस जाता था।

मीरजुमला और उसके बेटे की अवाई की सूचना नकीब ने दी। इसके साथ ही मीरजुमला ने आकर बेटे समेत शाही चौखट चूमी और कोर्निश करके बादशाह को एक लाल नजर किया जिसकी कीमत एक लाख रुपये थी।

बादशाह ने नीची नजरों से मीरजुमला और उसके बेटे की ओर देखा, फिर झुककर दारा से कुछ कहा।

दारा इस वक्त बहुत भड़कीली पोशाक पहने था और प्रकट में वह बहुत गम्भीर था पर उसके माथे पर चिन्ता और असन्तोष की रेखाएँ प्रकट हो रही थीं।

अमीर मीरजुमला और उसका बेटा अमीन खाँ शाही अदब बजा लाकर पीछे हटकर खड़े हो गए। बादशाह ने उनकी ओर रुख करके धीमे स्वर में कहा—

'अमीर मीरजुमला, खुश आमदेद। हम तुम्हारी बहादुरी और इमानदारी से बहुत खुश हैं।'

मीरजुमला ने झुककर सलाम किया और जरा आगे बढ़ कर कहा—'जहाँपनाह, गुलाम हमेशा से तख्त का वफादार खादिम रहा है और ताबीस्त रहेगा।'

"हमें यकीन है, अमीर मीरजुमला, तुम्हारे उस लासानी जवाहर का नाम हमने कोहेनूर रक्खा है।"

इसपर दरबारी इसी जबान से कह उठे—'सुबहान अल्लाह—करामात-करामात—'

मीरजुमला ने फिर सलाम किया और धीमे किन्तु दृढ़ स्वर में कहा—

"हुजूर, मालकुयडा राज पर, जहाँ ऐसे-ऐसे अनगिनत जवाहरात

के ढेर हैं, कब्जा करने में अब तआम्मुल न होना चाहिए। बल्कि यह गुलाम तो यहाँ तक कहने की जुर्रत करता है कि हुजूर को उस वक्त तक दक्खन पर फौजकशी करनी चाहिए जब तक कि कन्याकुमारी तक का मुल्क तख्ते मुगलिया के कब्जे में न आ जाय।"

बादशाह के चेहरे पर मुस्कुराहट आई, उन्होंने कहा—"अमीर मीरजुमला, हम तुम्हारी मुफीद सलाह पर अमल करने पर आमादा हैं और तुम्हें कल्ले तख्त का खिताब अता फर्माते हैं। हम चाहते हैं कि दक्खन पर एक फौज मेजी जाय और उसकी कमान तुम्हें सौंपी जाय। साथ ही तुम्हारी मदद को नवाबत खाँ, महाबत खाँ, उनका बेटा और सलाबत खाँ जाय रहें।"

मीरजुमला ने सिर झुकाया और कहा—

'यह सर मिटने वाला खादिम बसरोचश्म इस मुहिम के लिए तैयार है।"

बादशाह ने कुछ इधर उधर करके नर्म स्वर में कहा—"अमीर मीरजुमला, इसमें कुछ शर्तें होंगी," यह कहकर उसने दारा की ओर देखा।

दारा ने कुछ शब्दों में जरा उच्च स्वर से कहा—जिससे जिलमन में बैठी बेगम भी सुन लें, "मीर साहब, पहली शर्त तो यह कि इस मुहिम में औरंगजेब नहीं शरीक होगा, न उसका आपसे कुछ वास्ता रहेगा। न आप उससे मिल सकेंगे, न वह दौलताबाद को छोड़कर बाहर इधर उधर कहीं जा सकेगा।"

मीरजुमला ने चेहरे पर कोई भाव प्रकट न करके गम्भीरतापूर्वक कहा—"दूसरी शर्त क्या है?"

"आपके बाल-बच्चे, रिश्तेदार और आपका बेटा अमीन खाँ आगरे में रहेंगे और शादी लगाने से उनका बदला दिया जायगा।"

मीरजुमला के चेहरे पर असन्तोष के भाव प्रकट हुए। उसने बादशाह की ओर देखा। बादशाह ने कहा—

'इत्मीनान रक्खो अमीर मीरजुमला, तुम्हारे अहला-अयाल बहुत जल्द तुम्हारे पास पहुँच जाएँगे। फिलहाल हमारी दिली ख्वाहिश है कि तुम्हारा फर्जन्द मुहम्मद अमीन अभी कुछ दिन हमारी नजरों का सेहन करे।" बादशाह के इतनी खुशामद करने पर भी मीरजुमला के चेहरे का असन्तोष दूर नहीं हुआ।

उसने कहा—"जहाँपनाह के हुक्म और मर्जी के खिलाफ कोई काम वह गुलाम नहीं करना चाहता, मगर हुजूर शाहजादा इस जाँनिसार पर राजी हों तो रहने दिया जाय।"

"नहीं, नहीं, सिर्फ हमारे इत्मीनान के लिए। बस-हम तुम्हारी कमान में शाही तोपखाना समेत पचास हजार फौज देते हैं जिसका कमूद इन्तजाम अपने साथी सिपहसालारों के साथ—जो तुम्हारे हम राह होंगे, तुम कर सकते हो।"

इसके बाद बादशाह ने जड़ाऊ तलवार, सात हजारी जात का मनसब और कीमती सिरोपाव देकर अमीर मीरजुमला को विदा कर दरबारे लिलवत खत्म किया।

२०

दलित कुसुम

आइए हम अब जरा शाइस्ता खाँ के मकान की एक झाँकी देखें। शाइस्ता खाँ की विशाल हवेली फैज बाजार में थी। वह बादशाह का साला था और एक चतुर और उच्चाशय अमीर था। उसकी बीवी एक ईरानी अमीर की इकलौती बेटी थी। वह बड़ी सती-सच्चरित्र और पवित्रात्मा थी। वह जैसी अद्वितीय सुन्दरी थी वैसी ही अस्मत वाली भी थी। वह एक नई उम्र की बड़ी ही नाजुक मिजाज मासूम युवती थी।

बादशाह की उस पर एक अमीर के यहाँ दावत में दृष्टि पड़ी।

रिश्तेदार होने के कारण वह बादशाह के सामने आने को विवश की गई थी। बूढ़े कामुक बादशाह ने अपनी बड़ी बेटी के हाथ उसे एक शिकायत देकर रनिवास में बुलवा लिया—बेगम अकबर आकर उसे फुसला कर बादशाह के उस रहस्यपूर्ण कमरे में ले गई, जिसमें अनगिनत सतियों का सतीत्व लूटा जा चुका था। भोली-भाली लड़की हाथ में बेसुध पड़ गई। और जब वहाँ उसने अपने को बादशाह के चंगुल में फँस कर असहायावस्था में पाया तो छूटने को बहुत हाथ पैर मारे, बड़ी छटपटाई, पर वह अपने को बचा न सकी। बादशाह ने उसका सतीत्व भंग कर दिया। फिर वह बहुत सी भेंट और नजराने देकर वापस भेज दी गई।

परन्तु, उस मुगल राज्य में जिस प्रकार की और अमीरों की औरतें होती थीं—वह वैसी न थी। उसने घर आकर सब हाल अपने पति से कह दिया और खाना-पीना तथा वस्त्र बदलना भी छोड़ दिया। इस घटना को आज १३ दिन बीत चुके थे। वह कुचली हुई पुष्पमाला की भाँति बिस्तर पर पड़ी थी। समाप्त घर भर में उदासी छाई थी। प्रातःकाल का समय था। उसके नेत्रों में मरने का दृढ़ संकल्प था। उसके पलँग के पास उसका प्यारा पति बैठा था। दोनों रो चुके थे। अब जिस प्रकार एक कठोर संकल्प करने का भाव उस सती के मुख पर था, उसी प्रकार बदला लेने का उस वीर युवक अमीर के मुख पर भी था।

उसने कोमलता से पत्नी का हाथ अपने हाथ में थाम कर कम्पित स्वर से कहा—'प्यारी, अपना यह भयानक इरादा छोड़ दो, जीती रहो—मेरी नजर में तुम पाकसाफ हो। मैं उस जालिम बादशाह से ऐसा बदला लूँगा कि दुनिया देखेगी।" बात पूरी करते-करते उसकी आँखों से आग निकलने लगी और बदन काँपने लगा।

बेगम ने पति का हाथ दोनों हाथों में लेकर अपनी छाती पर रखा। वह कुछ देर चुपचाप आँखें बन्द किए पड़ी रही। फिर उसने धीरे

स्वर में कहा—"मेरे प्यारे शौहर, इतने ही दिनों में मैंने तुमसे वह प्यार पाया कि जिन्दगी का सब सुख उठा लिया, अब मेरी जिन्दगी में किरकिरी मिल गई। मैं नापाक कर दी गई। अब मैं तुम्हारे लायक न रही प्यारे, मेरे जिस्म का उस नापाक कुत्ते ने छुआ है मैं उसमें न रहूँगी, न रहूँगी और ताकयामत मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगी।"

"मगर प्यारी बेगम, मैं तुम्हारे बिना कैसे दुनिया में जिन्दा रहूँगा? मेरी जिन्दगी तुम हो, मेरी आँखों में सिर्फ तुम्हारी रोशनी है। तुम्हारे बिना दुनिया में मेरा कोई नहीं है।"

युवती की आँखों से आँसू टपकने लगे। उसने पति के हाथों को प्यार से चूम कर कहा—"रहना पड़ेगा—मेरे मालिक, मैं जिन्दा नहीं रह सकती, मैं आबादाना नहीं ले सकती, आह! उस ज़ालिम ने न मालूम मुझ जैसी कितनी बेबस कमजोर औरतों को बर्बाद किया होगा। मुमकिन है वे सब अस्मतफरोश न हों, लेकिन इस मुगल सल्तनत में एक भी ऐसा बहादुर आदमी नहीं, जो इन बेकसों को उस ज़ालिम भेड़िये से बचाए। मेरे प्यारे मालिक, तुम वादा करो कि बदला लोगे।"

"मैं वादा करता हूँ प्यारी, कि जब तक मैं तुम्हारी बेहुर्मती का बदला न ले लूँगा चैन से न बैठूँगा। बदला नहीं, चाहे जान भी चली जाय।"

"तो प्यारे, फिर मैं बड़ी खुशी से मर सकती हूँ, इसका मुझे बड़ा फ़ख्र है।"

"मगर मेरी प्यारी बेगम—तुम अपने इस इरादे को बदल दो, खुदा के लिये मुझ पर रहम करो, मैं तुम्हें उसी तरह आँखों की पुतली बना कर रखूँगा।"

"नहीं प्यारे, मेरी ग़ैरत यह इजाजत नहीं देती, इस तरह ज़लील होकर मैं किस तरह जिन्दा रह सकती हूँ। नहीं, नहीं, किसी भी तरह नहीं। मालिक, एक मर्द की तरह तुम मुझे विदा करना—हम लोग फिर मिलेंगे—और वैसे ही पाकसाफ़ जैसे उस दिन थे—जब कि हम

पहली बार मिले थे।" इतना कहते-कहते उस बेगम की आँखों से आँसुओं की धार बहने लगी—उसकी साँस जोर-जोर से चलने लगी और उसका सारा शरीर थर थर काँपने लगा। कुछ सुस्ता कर उसने कहा—"प्यारे, तुम्हें वह दिन याद है जब मैंने अपने मेंहदी से रँगे हाथ तुम्हारे सुपुर्द किए थे, तुम्हें अपना बनाया था, और तुमने मुझे अपनाकर निहाल किया था! हम लोग कितना हँसते थे, दुनिया कितनी मीठी लगती थी, दिन कैसे सुहावने थे, सूरज कैसा चमकता था, फूलों कैसी खुशबू थी रात कैसे हँसा करती थी, चाँद दूध बखेर कर दुनिया को कैसा बना देता था, हम लोग बातें करते थे, हँसते थे, रूठते थे, प्यार करते थे, लड़ते थे, फिर एक हो जाते थे, आह! इतनी जल्दी वे सब दिन ख़त्म हो गये!!"

शाइस्ता ख़ाँ ने उन्मत्त की तरह पत्नी को छाती से लगा कर कहा—"नहीं, नहीं, प्यारी, वह दुनिया वैसी ही है। देखो बाहर सूरज है—चाँद है—फूल हैं, उनमें खुशबू है कोयल है, प्यारी, वह दुनिया वैसी ही मीठी है। आओ एक बार हम फिर उसी तरह हँसें, लड़ें, रूठें और फिर प्यार करें।"

उसने विह्वल होकर मुमूर्षु पत्नी के अनगिनत चुम्बन ले डाले। फिर वह उसकी छाती पर सिर रख कर फफक-फफक कर रोने लगा।

बेगम भी रो रही थी। कुछ देर रो लेने पर जब जी हल्का हो गया तो शाइस्ता ख़ाँ ने कहा—"तो प्यारी, कह दो कि हम लोग जीएँगे।"

"नहीं प्यारे, हमारी जिन्दगी में कीड़ा लग गया है। अब हम उस तरह नहीं जी सकते। औरत की जिन्दगी उसकी अस्मत है, वह गई तो जिन्दगी भी गई। मेरे प्यारे शौहर, मुझे जाना होगा—मुझे मरना होगा। मगर ओफ़, यह कभी न सोचा था कि इतनी जल्द! ओफ़, ओफ़!"

बेगम ने एक चीख मारी और बेहोश हो गई। शाइस्ता ख़ाँ पागल की तरह लौंडियों और दाइयों को पुकारने लगा। महल में

दलदल मच गई, और वह फूल की तरह सुन्दर और कोमल अरमान वाली हमेशा के लिए चुप हो गई।

: २१ :

रोशनआरा

नौ की नौबत बज रही थी। शाहजादी रोशनआरा अलसाई-सी अपने कमरे में आकर मसनद पर लुढ़क गई। वह कुछ थकी हुई थी। कुछ चिन्तित भी थी। परन्तु वासना की तीखी चमक उसकी आँखों में थी—और किसी उत्तेजना से उसका चेहरा असाधारण रीति से लाल हो रहा था। वह ढाके की महीन मलमल की तीहरी पोशाक पहने थी। फिर भी उसमें उसका मनोरम शरीर झलक रहा था। उसपर सुनहरी जरी का निहायत नफीस काम हुआ था। उसकी चोटी निहायत नफासत से गुँथी थी और सुगन्धित तैलों से तर थी। माथे पर लापरवाही से हल्के पीरोजी रङ्ग की एक जरबफ्त की ओढ़नी पड़ी थी। उसकी गर्दन में पाँच बड़े-बड़े लालों की एक माला पड़ी थी जिसके सिरों पर मोतियों के गुच्छे लगे थे। वह माला उसके पेट तक लटक रही थी। माथे पर मोतियों की बेंदी थी जो उसकी चिकनी काली केशराशि पर खूब फब रही थी। उसके पास ही एक चढ़ाऊ तौक था जिसके बीच में अत्यन्त तेजस्वी एक लाल जड़ा था। आस-पास मोती थे। कानों में चढ़ाऊ फूल थे। कानों पर एक विचित्र हरा फूल रहा था, जिसमें आश्चर्यजनक बड़े-बड़े हीरे जड़े थे। कलाई पर नीलम की पहुँचियाँ थीं जिनमें जगह-जगह मोतियों के गुच्छे लगे थे। उसकी प्रत्येक उँगली में अँगूठियाँ थीं। दाहिने हाथ के अँगूठे पर एक आरसी थी जिसके आईने के इर्द-गिर्द मोती जड़े थे। कमर के चारों ओर तोले का दो अंगुल चौड़ा पटका था, जो बड़ी कारीगरी से जवाहरात से जड़ा हुआ था। अजारबन्द के दोनों सिरों पर दो अंगुल

लम्बी पाँच-पाँच मोतियों की लड़ें लटक रही थीं। पैरों में भी पायजेब की जगह बड़े-बड़े मोतियों की लड़ें पड़ी थीं। पोशाक इत्र में शराबोर थी।

कुछ देर शाहजादी चुपचाप मसनद पर उठँगी पड़ी रही। फिर उसने दस्तक दी। एक बाँदी ने आकर शाहजादी का इशारा पा उनका कपड़ा उतार दिया, और पैरों पर एक कीमती शाल डाल दिया, इसके बाद उसने शराब की सुराही और जाम सामने चौकी पर रख दिया। वह दुबान् होकर बेगम के पास बैठ गई और जाम भर-भर कर देने लगी।

शाहजादी चुपचाप वह सुवासित मदिरा पीने लगी। दो-चार प्याले पीने पर उसने बाँदी को राग-रागनी छेड़ करने और गानेवालियों को बुलाने की आज्ञा दी। क्षण भर में कमरे में सुरीले गायन की स्वर-लहरी भर गई। गानेवालियाँ यद्यपि अपनी कलाएँ दिखा कर शाहजादी को खुश किया चाह रही थीं परन्तु शाहजादी का दिल आज खुश न था। शराब और संगीत दोनों ही उसे प्रसन्न न कर सके। उसने रुक कर गाने वालियों को चले जाने का हाथ से संकेत किया। उस समय शराब की उत्तेजना से उसका चेहरा लाल हो रहा था। उसकी खास बाँदी फहमिदा बानू चुपचाप हाथ बाँधे हुक्म के इन्तजार में खड़ी थी। बेगम ने पूछा—

"हजरत सलामत इस वक्त कहाँ हैं?"

"हुजूर वे अभी गुस्लखाने के दरबार में हैं।"

"क्या बाकरेनबीस राजनामचा सुना गया?"

"अभी नहीं हुजूर खुदावन्द इस वक्त हुजूर बड़ी बेगम से कुछ जरूरी मशवरे में मशगूल हैं।"

"तू जा और देख कि बाकरेनबीस क्या नई खबर सुनाता है।"

"जो हुक्म।"

"ठहर, बुक्लिनबीस की दारोगा को यहाँ भेज दे।"

"जो हुक्म," बाँदी अदब से झुककर चली गई।

उसके चले जाने पर शाहजादी ने अपने हाथ से दो प्याला शराब ढाली। उसमें गुलाब दिया और चुपचाप गटगट पी गई। इसके बाद उसने प्याला कालीन पर एक तरफ फेंक दिया, और हुक्म में बैठती सुसज्जित कनीज़ों मोमबत्तियों की तरफ एक टक देखती रही। कुछ ठहर कर उसने दस्तक दी। पहरेदार बाँदी ने हाजिर होकर कोर्निश की।

शाहजादी ने कहा—'क्या तू जानती है कि नर्गिस इस वक्त कहाँ है?'

"वह हुजूर के हुक्म के इन्तजार में बैठी है।"

"उसे भेज दे, और देख चाहे भी वैसा जरूरी काम हो मगर कोई आने न पावे।"

"जो हुक्म।" बाँदी झुककर चली गई।

नर्गिस ने आकर शाहजादी को सलाम किया।

शाहजादी ने अलसाई नजर से देखकर कहा—

"काम हुआ?"

"जी हाँ, सरकार।"

"मनानी ज्योतिषी मिला?"

"जी हाँ।"

"वह बात कही?"

"हुजूर सब ठीक हो गया है।"

"उसने दारा को तेरे कहे मुताबिक बहलाया?"

"जी हाँ सरकार।"

शाहजादी फिर मसनद पर लुढ़क गई। वह देर तक कुछ सोचती रही। इसके बाद उसने एक प्याला चढ़ाकर कहा—

"दूसरा काम?"

"वह भी हो गया हुजूर।"

"इत्मीनान से?"

"जी हाँ खुदावन्द !"

"कौन है वह ?"

"हुजूर, एक मतवाला अफ़ीमची है, मैं उसे मुद्दत से जानती हूँ।"

"काम बहुत नाजुक है।"

"सरकार, आप बेफ़िक्र रहें।"

"एक प्याला शीराज़ी का दे।"

बाँदी ने प्याला भर कर पेश किया। बेगम ने कहा—

"बैठ, तीसरा काम ?"

"हुजूर, हो गया।"

"कहाँ है ?"

"हुजूर के खास कमरे में।"

बेगम ने गले से एक मोतियों की माला उतार कर उसपर फेंकी। फिर मुस्कुराकर शराब देने का संकेत किया। बाँदी प्याले पर प्याला देने लगी।

फ़हमिदा बानू ने आकर आदाब बजाया। बेगम ने नर्मित से आने का इशारा किया। उसके आने पर उसकी ओर झूमते हुए नेत्र घुमाकर कहा—

"बादशाह सलामत क्या आरामगाह में तशरीफ़ ले गए ?"

"जी नहीं हुजूर।"

"बकाऐमबीस का खत्तनामचा सुन लिया गया ?"

"जी हाँ खुदावन्द।"

"कोई खास बात ?"

"शाहज़ादा दारा ने उन चालीसों कैदियों के हाथ कटवा डाले हैं जो शुजा की लड़ाई में गिरफ्तार हुए थे।"

बेगम ने होंठ काट कर हुँकारा भरा। फिर पूछा—"और कुछ ?"

"हुजूर, बादशाह सलामत और वली अहद में बहुत दुश्वत हो रही है।"

"किस अमर में ?"

"बादशाह सलामत फर्मा रहे हैं कि फौरन सुलेमान शिकोह को वापस बुला लो, मगर बली अहद की राय है कि उसे शाहजादा शुजा का बंगाल तक पीछा करने दिया जाय।"

बेगम मुस्कुरा दी—"बहुत खूब फहमिदा बानू, तुम हजरत सलामत के ख्वाबगाह जाने तक वहीं हाजिर रहो।"

"जो हुक्म हुजूर, मगर खुफियानवीस की दारोगा "

"वह सुबह गुस्ल के बाद हाजिर हो।"

"जो हुक्म" कह कर फहमिदा बानू चली गईं। बेगम ने दस्तक दी। नसीम आ हाजिर हुई।

"मजानी ज्योतिषी ने दारा से क्या कहा था ?"

"हुजूर, उसने उन्हें समझा दिया है कि सुलेमान शिकोह इस मुहिम में पूरी फतह करके लौटेंगे। उनके सितारे बुलन्द हैं। अभी हाथ उन्हें बंगाल, बिहार और उड़ीसा हासिल कर लेना चाहिए।"

"बहुत खूब नसीम।"

"हुजूर—"

"तूने कहा—वह खूबसूरत है।"

"हुजूर अमीरजादा है।"

"शीराजी है।"

बाँदी ने प्याला भर दिया। बेगम ने प्याला खाली कर कालीन पर लुढ़का दिया। फिर अँगड़ाई लेकर कहा—"चल कमरे खास का रास्ता दिखा।"

बाँदी ने लहरा देकर शाहजादी को उठाया और वह लड़खड़ाती हुई कमरे खास की ओर चली गई।

—:—

मीरजुमला का कूच

फ़रमान और फ़ौज का अधिकार मिलते ही मीरजुमला ने फिर दिल्ली में ठहरना ठीक नहीं समझा। उसने अपने और औरङ्गज़ेब के विश्वस्त अमीरों की एक गुप्त सभा की और उसमें भविष्य की सब योजनाएँ तैयार कर तथा अपने गुप्त आदेशों की पूर्ति का प्रबन्ध कर अपने पुत्र अमीर खाँ को सब ऊँच नीच से सावधान कर दिल्ली से तुरन्त कूच बोल दिया। उसने दूसरा कूच करते हुए जल्द-से-जल्द दिल्ली से दूर होने तथा औरङ्गज़ेब के निकट होने की चेष्टा की।

मीरजुमला एक मँजा हुआ सिपाही और दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। वास्तव में उसका मूल उद्देश्य, इस भारी सेना से औरङ्गज़ेब को लाभ पहुँचाना था। परन्तु एक तो उसका परिवार दिल्ली में दारा के अधिकार में था, दूसरे उसके साथ बादशाह ने जो सिपहसालार और उमराव लगा दिए थे उन पर उसके मन का भेद प्रकट न था और न वह उन पर अपना असल अभिप्राय प्रकट करना ही चाहता था—इसलिए उसे प्रत्येक बात में बहुत सावधानी की आवश्यकता थी।

वह अपने प्रत्येक आचरण से यही प्रकट करना चाह रहा था कि वह प्रत्येक मूल्य पर बादशाह की आज्ञा का पालन करना चाहता है। परन्तु उसका गूढ़ उद्देश्य यह था कि वह औरङ्गज़ेब के यथासम्भव निकट ही रहे और उसके पक्ष में अपनी कूटनीति का दूसरा कदम समय आने पर उठाने में किसी बाधा को अपने बीच न फटकने दे।

सन् १६६६ की सन्धि में मुग़ल साम्राज्य और गोलकुण्डा तथा बीजापुर के दोनों राज्यों की सीमाएँ स्पष्ट निर्धारित हो गई थीं। कृष्णा नदी से कावेरी पार तंजौर तक कर्नाटक प्रदेश था जिसमें विजयनगर

राज्य के भग्नावशिष्ट छोटे-छोटे हिन्दू राज्य फैले हुए थे, जिनपर अब मुस्लिम शासकों का आधिपत्य होने लगा था। चिलकम झील से पेनार नदी तक के प्रदेशों को जीतती हुई गोलकुण्डा की सेनाओं ने उस राज्य की सीमाओं को बंगाल की खाड़ी तक फैला दिया था।

बीजापुर राज्य दक्षिण की ओर बढ़ते हुए जिंजी और तंजौर के किनारों को वश में कर अब पूर्व की ओर बढ़ने लगा। विजयनगर के अन्तिम ध्वंसावशेषों को संगठित करके ही चन्द्रगिरि राज्य की स्थापना की गई थी। पूर्व में नेलोर से पांडिचेरी तक और पश्चिम में मैसूर की सीमा तक यह राज्य फैला हुआ था। उत्तर और दक्षिण दोनों दिशाओं में इन दोनों मुसलमानी राज्यों के बीच यह हिन्दू खण्ड राज्य एक प्रकार से घिर ही गया था, और अब बीजापुर और गोलकुण्डा दोनों राज्यों के बीच इसे हड़प लेने की होड़ चल रही थी। अबतक गोल कुण्डा की इस काम में जो प्रगति हुई थी उसका अधिकांश श्रेय मीरजुमला ही को था।

बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिल शाह मर गया। उसके प्रधान मन्त्री खान मुहम्मद और सुलतान की बेगम बड़ी साहिबा ने मृत सुलतान के १८ वर्षीय पुत्र को अली आदिलशाह द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा दिया। इस पर दक्षिण के मुगल सूबेदार औरंगजेब ने बादशाह को सूचना दी कि अली वास्तव में मृत सुलतान का पुत्र नहीं है। वह एक अनाथ लड़का है जिसे मुहम्मद आदिलशाह ने हरम में रखकर पाला था। औरंगजेब ने इस सूचना के साथ ही बीजापुर पर तुरन्त आक्रमण करने की अनुमति भी माँगी थी। उधर आदिलशाह की मृत्यु होते ही कर्नाटक में बड़ी भारी गड़बड़ी मच गई। जमींदारों ने जितनी चाही जमीन अपने अधिकार में कर ली। राजधानी की दशा और भी खराब हो गई। बीजापुर के सरदार आपस में एक-दूसरे से अपने-अपने हाथ में शासन-सत्ता लेने को लड़ने लगे। प्रधान मन्त्री खान बहादुर चारों ओर से इन घरेलू शत्रुओं से घिर गया। इस

दुष्प्रचार से औरङ्गजेब ने पूरा लाभ उठाया और उन बिगड़ैल सरदारों को तोड़-फोड़ कर एक षड्यन्त्र खड़ा कर दिया। बीजापुर राज दरबार के अनेक सरदार, अमीर, औरङ्गजेब की सहायता करने को तैयार हो गए।

मीरजुमला के दिल्ली पहुँचने से प्रथम ही वहाँ से शाही फर्मान औरङ्गजेब के पास आ गया कि बीजापुर के मामले को वैसा मुनासिब समझे तय कर लो।

परन्तु यह वास्तव में बीजापुर के विरुद्ध स्पष्ट युद्ध-घोषणा थी, जो बीजापुर राज्य के प्रति सरासर अन्याय था। बीजापुर मुगल साम्राज्य का अधीन राज्य न था। मित्र राज्य था। इसलिए मुगल दरबार को उसके भीतरी मामलों में दखल देने का कोई अधिकार न था। परन्तु औरङ्गजेब तो ऐसे ही सुयोग चाह रहा था, और अब वह बड़ी बेचैनी से मीरजुमला के प्रत्यागमन की राह देखने लगा।

मीरजुमला बीस हजार सुशिक्षित सैन्य और उमदा तोपखाना लेकर औरङ्गाबाद आ पहुँचा। अब उसने दारा के इस बदलम्म की कुछ भी परवाह न की कि औरङ्गजेब से वह दूर रहे। उसने औरङ्गजेब को साथ ले बीदर के दुर्ग का घेरा डाल दिया। वहाँ के किलेदार तिरी मरजान ने भारी अवरोध किया पर मीरजुमला के सुशिक्षित तोपचियों के सामने उसकी एक न चली। किले की दीवारें भङ्ग हो गईं और दुर्भाग्य से एक गोला बारूद के भरे हुए मकान पर गिरने से किले का आधा भाग एकबारगी ही उड़ गया। मरजान बुरी तरह अपने दो पुत्रों सहित घायल हुआ, और विजयी मुगल नगर में घुसकर लूटपाट मचाने लगे। लाचार मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए मरजान ने अपने सात पुत्रों को किले की चाबी देकर औरङ्गजेब के पास भेज दिया। इस प्रकार केवल २७ दिनों में बीदर का दुर्गम दुर्ग औरङ्गजेब ने जीत लिया। इसमें बहुत-सी सामग्री के साथ नकद बारह लाख रुपए, आठ लाख मूल्य का गोला-बारूद, अनाज और दो सौ तीस तोपें उसके हाथ

लगी। निस्सन्देह इस विजय का श्रेय मीरजुमला को था जिसने अपूर्व दक्षता से सैन्य-संचालन किया था।

इसके बाद उसने महावत खाँ की कमान में पन्द्रह हजार घुड़सवारों को आगे बढ़ा कर शत्रु के सैनिकों के एकत्र दल को मार भगाने को सही रवाना कर दिया। जिन्होंने पश्चिम में कल्याणी और दक्षिण में गुलबर्गा तक के सारे बीजापुर राज्य को लूट कर उसे उजाड़ दिया। बीजापुर के बीस हजार सैनिकों ने प्रमुख बीजापुरी सेनानायक खान मुहम्मद—अफजल खाँ, रुस्तम खाँ तथा रहाना के पुत्रों के नेतृत्व में कराड़ अवरोध किया—परन्तु वीर सेनानी महावत खाँ के आगे आखिर उनके पैर उखड़ गए।

अब उसने कल्याणी की ओर रुख किया। बीदर से चालीस मील पश्चिम में, गोलकुण्डा से सुप्रसिद्ध तीर्थ तुलजापुर जाने वाले प्राचीन मार्ग पर, कल्याण प्रदेश है, जहाँ चालुक्य राजाओं की प्राचीन राजधानी कल्याणी थी। मीरजुमला ने तावड़-तोड़ पहुँचकर कल्याणी पर घेरा डाल दिया। किले की रक्षक-सेना दीवारों पर से रात-दिन गोलियों की वर्षा करने लगी। खाइयों में भयानक मारकाट मच गई। किले के चारों तरफ भी छुटपुट आक्रमण-प्रत्याक्रमण होने लगे और यह युद्ध एक गम्भीर रूप धारण कर गया। बूँदी के राव छत्रसाल हाड़ा ने इस युद्ध में वीरत्व प्रदर्शन किया। खान मुहम्मद के घुड़सवारों का उसने बड़े दर्प से अवरोध किया। उधर बहलोल खाँ के बेटों ने राव यशसिंह सीसोदिया पर भारी दबाव डालकर उसे घायल कर दिया। अन्त में महावत खाँ ने आगे बढ़कर उसका उद्धार किया।

इधर जब औरङ्गजेब किले के घिरे अवरोध को सफल बनाने में व्यस्त था उसे सूचना मिली कि उसके पड़ाव से सिर्फ चार मील दूर तीस हजार बीजापुरी सेना युद्ध को सन्नद्ध खड़ी है। औरङ्गजेब मीर-जुमला पर किले का भार छोड़ वीरदर्प से अपनी सेना से आगे बढ़ा। महावत खाँ, राव छत्रसाल और कुछ सेनानायक उसके साथ थे।

घमासान युद्ध हुआ—और मुगल सेना ने दाएँ-बाएँ ऐसा दबाव दिया कि बीजापुर की सेना के पैर उखड़ गए। वह भाग खड़ी हुई। भागती सेना पर पीछे से करारी मार पड़ी। सारी ही सेना नष्ट कर डाली गई। बीजापुरी पड़ाव का शस्त्र, गोला, बारूद, तोप, स्त्रियाँ, घोड़े, सामान ढोने वाले जानवर आदि सारा सामान लूट लिया।

उधर मीरजुमला का अवरोध चल रहा था। किलेदार दिलावर, जो अबीसीनिया का निवासी एक हब्शी गुलाम था, बड़ी वीरता से मीरजुमला का मुकाबिला कर रहा था। अन्त में शाही सेना ने खाई पार कर किले की एक बुर्ज पर अपना कब्जा कर लिया और अन्ततः दिलावर ने किले की चाबियाँ औरङ्गजेब को सौंप दीं। उसे पुरस्कृत किया गया तथा बीजापुर लौट जाने दिया गया।

कल्याणी का पतन होने पर बीजापुर के सुलतान ने सन्धि की बात चलाई। दिल्ली में उसके प्रतिनिधि पहुँचे। उन्होंने दारा का अनुग्रह प्राप्त कर लिया और आदिलशाह ने बीदर, कल्याणी और परेण्डा के किले और उनके आस-पास का भूभाग मुगलों को दे दिया। इसके अतिरिक्त क्षतिपूर्ति स्वरूप एक करोड़ रुपया भी दिया। शाहजहाँ ने औरङ्गजेब को तुरन्त लौट आने की आज्ञा दी। मीरजुमला से मिलकर औरङ्गजेब औरङ्गाबाद लौट गया और मीरजुमला ने अपनी समूची मुगल सेना सहित कल्याणी पुर में अपनी छावनी डाली।

: २३

मुगल सल्तनत डगमग

इसी समय बादशाह दिल्ली में एकाएक बीमार पड़ गया। शाही हकीम उसे आरोग्य करने में सफल नहीं हुए। उसकी बीमारी बढ़ती ही गई। नित्य लगने वाला दरबार भी बन्द हो गया, और झरोखे में बैठ कर दर्शन देना भी बन्द हो गया। शाही हकीमों की मुगल दरबार

में बड़ी मरमार थी। इनकी दरबार में बड़ी इज्जत भी होती थी। इन्हें 'अजमी उलमसल' का और लाँ का खिताब मिला हुआ था, और इन्हें वार्षिक वेतन बीस हजार रुपए से लेकर दो लाख रुपयों तक मिलता था। परन्तु इनकी योग्यता पुरानी तिब्बी किताबों तक ही थी। ये साधारण इलाज कर सकते थे पर बड़ी-बड़ी बीमारियों में इन्हें सफलता नहीं मिलती थी।

अनेक फिरंगी डाक्टर भी दरबार में थे जो बहुधा फस्द खोलते और जख्मों को दवादारू किया करते थे। ये सभी हकीम डाक्टर महलसरा में बुर्का उढ़ा कर ले जाए जाते थे। इनमें से कोई भी बादशाह का आराम नहीं कर सका।

यह बीमारी वास्तव में बादशाह ने अपने ही हाथों मोल ली थी। तरसठ वर्ष की आयु होने पर भी वह निरन्तर कामशक्तिवर्द्धक और खम्मन की दवाइयाँ खाता रहता था—जिन्हें वह पचा नहीं सकता था न उनके विषैले प्रभाव को उसका जीर्णशीर्ण शरीर सह सकता था। परिणाम जो होना था वही हुआ। उसकी मूत्र-पिण्ड-ग्रन्थियाँ बढ़ गईं और उसका मूत्र-प्रवाह रुक गया। रक्त में मूत्र मिल जाने से उसकी दशा संकटापन्न हो गई और वह बहुत कमजोर हो गया।

इस समय दिल्ली का वातावरण अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा था। वास्तव में उस प्रबल क्षोभ का उत्पन्न करने वाला प्रमुख सूत्रधार मीरजुमला था। दिल्ली में वह यद्यपि एक सप्ताह भी नहीं ठहरा था परन्तु इसी बीच में वह अपनी ऐसी कूटनीति का जाल दिल्ली दरबार में बिछा गया था कि बादशाह के बीमार पड़ते ही बादशाह के कैद होने, मरने तथा बहुत बीमार होने की अफवाहें साम्राज्य भर में फैल गईं और जब तक अमीर मीरजुमला कश्मीर पहुँचे तब तक तो साम्राज्य भर में सन्देह और अराजकता के लक्षण दीखने लगे थे।

मीरजुमला की फैलायी हुई अफवाहों में खूब अंकुर उगा था। बादशाह की बीमारी में दारा और बेगम जहाँआरा ने बादशाह की

बड़ी सेवा की थी। शाहजहाँ अब जीवन से निराश हो गया। उसने रोगशय्या पर ही एक खास दरबार किया और सब विश्वासी और बड़े-बड़े अमीरों को बुला कर अपनी अंतिम इच्छा प्रकट की कि वे अब दारा ही को बादशाह मान कर उसकी आज्ञा का पालन करें। परन्तु दारा ने राज्यारोहण नहीं किया—पिता के नाम पर ही शासन कार्य करता रहा। उसने मीरजुमला को प्रधान मन्त्री के पद से बर्खास्त कर दिया और महाबत खाँ आदि सेनापतियों को सेना सहित दक्षिण से लौट आने की आज्ञाएँ प्रचारित कर दीं। रोगशय्या पर बादशाह बुरी बुरी खबरें सुनने लगा। सब से पहिले सुल्तान शुजा ने, जो बंगाल का सूबेदार था—अपने को बादशाह घोषित कर दिया, और बेशुमार फौज भरती करना आरंभ कर दिया। उसने उस प्रान्त के शहरों और जमींदारों से लूट-पीट कर बहुत-सा धन एकत्र कर लिया था। इससे वह बहुत जल्द एक भारी सेना का अधिनायक बन गया, और उसने आगरे की ओर कूच बोल दिया।

उसने अपने लश्कर में यह बात प्रसिद्ध कर दी कि दारा ने बादशाह को जहर देकर मार डाला है, इसलिए हम इस लूले नाहक और इरकसे नाशाइस्ता का बदला लेने और उससे सल्तनत को, जो खाली है, छुड़ाएँगे। उसे दरबार के शिया ईरानी अमीरों का बहुत भरोसा था, जिन्हें अपने पक्ष में करने को उसने स्वयं शिया धर्म का बाना पहिना था—और रुपया पानी की भाँति लुटाया था।

दक्षिण और गुजरात में औरंगजेब और मुराद ने भी यही किया। औरंगजेब तो पहिले से ही चौकन्ना बैठा था। उसने तुरन्त ही अपनी तैयारियाँ आरम्भ कर दीं। वह शीघ्रता से खजाना और फौजें संग्रह करने लगा। चारों भाई अपने अपने मित्रों और सहायकों को इकट्ठा करने लगे। दरबार में सभी के दोस्त दुश्मन थे, परन्तु परिस्थिति ऐसी थी कि किसी को न अपने दोस्त पर भरोसा था न दुश्मन पर।

सच पूछा जाय तो यह कहना ही संभव न था कि कौन किसका दोस्त है और कौन किसका शत्रु।

इन तमाम खबरों से राजधानी में अन्धेर मच गया था, और बादशाह रोगी और कमजोर होने पर भी आगरा को चल पड़ा। आगरे आकर दारा ने बेशुमार फौज भरती करना शुरू कर दी तथा आगरा और देहली नगर का प्रबन्ध खास अपने हाथ में ले लिया। इस सम्बन्ध में उसने बादशाह के हुक्म की भी परवाह न की। उसे डराया और धमकाया भी। इससे बादशाह बहुत भयभीत और शंकित हो गया। अब वह रोगी, अशक्त और बूढ़ा बादशाह प्रतिक्षण अपने प्यारे पुत्र दारा पर शक करके यह भय करने लगा कि कहीं यह मुझे विष देकर मार डाले या कैद न कर ले।

विद्रोहियों के अनेक पत्र और वक्तव्य दारा ने प्रकट करके बादशाह को दिखाए। बेगम जहाँआरा ने भी बहुत हाथ-पैर मारे पर बादशाह का जड़ हो गया। उसे किस पर भरोसा करना चाहिए यह भी वह नहीं सोच सका। इन सब दुश्चिन्ताओं के कारण बादशाह की बीमारी और कमजोरी भी बढ़ गई। परन्तु उसने दैनिक दरबार करना नहीं छोड़ा। दूर-दूर के हाकिमों को अपनी तन्दुरुस्ती और जिन्दा रहने के परचे भिजवा दिए। इसी प्रकार के पत्र उसने अपने उन पुत्रों के पास भी भिजवाए जो फौजें लिए आगरे की ओर बढ़ कर चुके थे।

जब बादशाह का एक ऐसा ही पत्र शुजा को मिला तो उसने जवाब में बादशाह को लिखा—"मुझे बन्दगानेवाला की सलामती पर यकीन नहीं आता, और जिसकर्ज हुजूर जिन्दा और सलामत हैं तो कमजोरी दाखिल करके और इर्शाद व अहकाम से तर्कताज होने की मुझे क्यों तमन्ना है।" इसी प्रकार की बदामेजाबियाँ दूसरे भाइयों ने भी कीं। इसका परिणाम यह हुआ कि लोग खुलेआम कहने लगे कि अब तलवारें ही चारों भाइयों की किस्मतों का फैसला करेंगी। परन्तु इस युद्ध में केवल दो ही बातें थीं—या तो जय या मृत्यु। उधर इस भावी

फूल कर कुप्पा हो जाता, और बहुधा उन्हें अपने मुशाहिबों को पढ़-पढ़ कर सुनाया करता था।

इस प्रकार जब उसने दारा और बादशाह का दिल मुट्ठी में ले लिया तो उसने दारा को लिखा कि आप किसी तरह यहाँ से मेरी बदली करा दें। मैं यहाँ बीमार रहता हूँ और यहाँ का जलवायु मेरे अनुकूल नहीं है। यदि मुझे दक्षिण भेज दिया जाय तो मैं प्रसन्नता से वहाँ जाना स्वीकार कर लूँगा।

परन्तु वास्तव में दक्षिण जाने का उसका गूढ़ उद्देश्य यह था कि गोलकुण्डा और बीजापुर की राजधानियों के निकट रहने से उसे अधिक-से अधिक सेना रखने और कभी-न-कभी उन इलाकों पर हमला करने के सुअवसर प्राप्त हो ही जायँगे। फिर वहाँ की उपजाऊ भूमि, हीरों की खानें, समुद्र का किनारा, तथा भाँति भाँति की वस्तुओं की प्राप्ति की सुविधाएँ थीं।

परन्तु मूर्ख दारा इन बातों पर विचार नहीं कर सका। वह उसके झाँसे में आ गया। उसने बादशाह को समझा-बुझा कर औरंगजेब को दक्षिण भेजने की आज्ञा दिलवा दी। बादशाह ने बहुत कहा कि तुम आस्तीन के साँप को पल्ले बाँधते हो। खबरदार रहो, पछताओगे। पर उसने हँस कर टाल दिया।

दक्षिण पहुँचते ही औरंगजेब ने पैर फैला दिए। उसने पहले औरंगाबाद नाम का एक नया नगर बसाया। और वहाँ बैठ कर और बढ़िया-बढ़िया महल बना कर अपनी कुटिल राजनीति का चक्र चलाने लगा। भाग्य से उसका चक्र चल भी गया। मीर जुमला की मैत्री उसे अनायास ही मिल गई। पाठक जानते ही हैं कि किस प्रकार गोलकुण्डा पर अवसर पाकर उसने छापा मारा। यद्यपि बादशाह के हुक्म से उसके पंजे से गोलकुण्डा निकल गया था और इससे वह बहुत खीझ भी गया था, परन्तु उसने उसकी आज्ञा नहीं छोड़ी। दोनों

धुन के पक्के मित्र परस्पर मिलकर नए-नए मनसूबे गाँठ रहे थे। इतने ही में बहादुर बादशाह ने मीरजुमला को दिल्ली दरबारे शाही में बुला भेजा।

अब औरंगजेब क्या करे? वह औरंगाबाद में बैठा अनेक जासूसों द्वारा दिल्ली के समाचार मँगा रहा था। दरबार में मीरजुमला की जो प्रतिष्ठा हुई थी वह सब सुन चुका था और चतुर मीरजुमला ने किस कौशल से बादशाह का बलख पर चढ़ाई करने का इरादा बदल दिया था वह भी वह सुन चुका था। अब वह इस प्रतीक्षा में था कि मीरजुमला ज्योंही एक सुगठित सेना और उमदा तोपखाना लेकर दक्षिण में आये तो वह भी अपने मनसूबे पूरे करे। मीरजुमला का तो यही इरादा था। अतः उसके आते ही दोनों ने झटपट बीदर और कल्याणी का दुर्ग जब्त करके बीजापुर राज्य को आघात पहुँचा दिया। अब मीरजुमला को कल्याणी के दुर्ग में शाही सेना सहित व्यवस्थित करके वह अपनी मावी योजना बनाने औरंगाबाद आ बैठा।

अभी औरंगाबाद पूरा आबाद न हो पाया था। शाही महल बनते जा रहे थे। फौजों की बारकें बन रही थीं। हजारों मजदूर और कारीगर काम कर रहे थे। बड़े बड़े बाजार तैयार किए जा रहे थे और देश देश के व्यापारियों को मोटी माटी सुविधाएँ दे दे कर यहाँ बसाया जा रहा था।

अपनी बारहदरी में औरंगजेब एक चटाई पर बैठा हुआ कुरआन लिख रहा था। पास ही तसबीह रखी थी। दो-तीन गुलाम कुछ हट कर हाथ बाँधे खड़े थे। दिल्ली से एक जरूरी सन्देश का जवाब आने की प्रतीक्षा में वह कुछ विकल सा हो रहा था। कभी-कभी वह बड़बड़ा उठता और हाथ का काम छोड़ देता था। कुछ ठहर कर उसने मीर बाबा को तलब किया। मीरबाबा आदाब बजा कर चुपचाप सामने बैठ गया। औरंगजेब ने कहा—

'भाई खान, आज तीसरा चाँद है, कातिब को आज से पहले

ही पहुँचा जाना चाहिए था। बुरहानपुर तक तो वह आ चुका है—तुमने कहा था।"

"जी हाँ, और उसे आज यहाँ पहुँच जाना चाहिए।"

ये बातें हो ही रही थीं कि काशिद के आने की सूचना मिली। औरंगजेब ने तुरन्त उसे सामने बुला भेजा। काशिद बहुत थका हुआ था। उसने औरंगजेब को तीन थैलियाँ दीं। तीनों थैलियाँ कमखाब की थीं और उन पर बहुत कीमती जरी का काम हो रहा था। तथा तीनों पर बादशाही सील-मुहर थी। उनमें एक खत बादशाह का था, दूसरा मीरजुमला का और तीसरा उसकी प्यारी बहिन रोशनआरा का था।

तीनों खरीतों की सील-मुहर को बहुत सावधानी से देखने के बाद उसने पूछा—

"जबानी खबर क्या है?"

दूत ने और निकट आकर धीमे स्वर से कहा—

"हुजूर, अमीर मीरजुमला बहुत बड़ी शाही फौज और तोपखाना लेकर दक्खन आ रहे हैं। दिल्ली के अनकरीब तमाम अमीर दारा से बदखन हो गए हैं और हुजूर का साथ देने को तैयार हैं।"

औरंगजेब ने दोनों होठों को बन्द करके आकाश की ओर दृष्टि की। फिर कहा—

'और बादशाह सलामत?'

"हुजूर, वे सुबह के चिराग हैं। इस वक्त तो बादशाह दारा हैं, मगर दरबार में उनके दोस्त बहुत कम हैं।" कुछ देर चुप रह कर औरंगजेब ने उसे जाने का संकेत किया—फिर खरीतों को अच्छी तरह देख कर मुस्करा दिया। उन्हें मीरबाबा के सुपुर्द करके कहा—"आज रात को इन पर गौर किया जायगा।"

मीरबाबा ने पत्र से खरीतों को सम्हाल कर कहा—'अब हजरत, आप उठिए और भीतर महल में तशरीफ ले चलिए।'

औरङ्गजेब कुछ सोचता हुआ उठा और धीरे-धीरे भीतर चला गया। उसकी तस्बीह और कुरआन शरीफ वहीं चटाई पर पड़ी रह गई।

: २५

औरङ्गजेब का हरम

इस समय तक इस फकीर शाहजादे के हरम में केवल तीन बेगमें थीं। बादशाह बेगम दिलरस बानू थी। वह फारस के शाहशाह इस्माईल सफवी के छोटे पुत्र के प्रपौत्र शाहनवाज की नजरेबाग बेटी थी। अब से नौ वर्ष पूर्व इसका विवाह औरङ्गजेब के साथ आगरे में बड़ी धूमधाम से हुआ था। उस समय औरङ्गजेब की आयु केवल उन्नीस वर्ष और बेगम की सत्रह वर्ष की थी। प्रारम्भ में दोनों पति पत्नियों में प्रेम रहा—परन्तु शीघ्र ही दोनों में खिंच गई। वास्तव में यह बड़े तीखे स्वभाव की स्त्री थी और उसे अपने फारस के राजवंश का बड़ा घमण्ड था। वह सदा अपने को मुगलों से श्रेष्ठ समझती थी। इस समय तक इसकी चार सन्तान हो चुकी थीं। सबसे बड़ी पुत्री जेबुन्निसाँ थी जो इस समय उन्नीस वर्ष की नवयुवती थी। उसमें पिता की तीव्र बुद्धि और अपनी माशूक सादिस्त-मिजाजी थी। इसी उम्र में उसे पढ़ने लिखने का गहरा शौक हो गया था और उसने अनेक पुरुष नई-नई पुस्तकों की नकल करने को नियुक्त कर दिए थे, जो निरन्तर उसके पसन्द के ग्रन्थ नकल करते रहते थे। उनका वेतन वह अपने निजू खर्च से देती थी। वह स्वयं भी अच्छी कविता करने लगी थी। सात वर्ष की अवस्था में जब उसने कुरान कण्ठस्थ करके अपने पिता को सुनाया तो औरङ्गजेब ने बड़ी धूमधाम से इसका उत्सव दिल्ली में मनाया था—सारी सेना को दावत दी थी। इसके अतिरिक्त तीस हजार अशर्फियाँ गरीबों को बाँटी थीं। साम्राज्य भर में अन्न

मनाया गया था तथा दफ्तर बन्द रहे थे। जेबुन्निसाँ अरबी की भी बड़ी पण्डित थी। वह स्वयं नस्तालीक, नख्श, और रिकस्त खत लिखने में प्रवीण थी। उन दिनों काश्मीरी लोग नस्तालीक लिखने में होशियार होते थे। उनसे लिखवा-लिखवा कर वह पुस्तकें संग्रह करती थी। बड़े होने पर उसने अरबी और फारसी दोनों भाषाओं में काव्य-रचना की। उसने अपना उपनाम 'मख्फी' रखा था। नसीर अली, सरहिन्दी सनाय, शम्सबक्शी उल्फा, ब्राह्मण बहराज के सत्संग से वह आध्यात्मानन्द लेती थी। उसका मन सूफी सिद्धान्तों पर उड़ गया था। वह पिता की मौलि कट्टर न थी और अपना सारा वेतन विद्वानों और कवियों को पुरस्कृत करने में खर्च कर देती थी।

औरङ्गजेब और दिलरस बानू की दूसरी सन्तान जीनतउन्निसाँ थी। जो इस समय चौदह साल की किशोरी थी। आगे चलकर वह बादशाह बेगम के नाम से प्रसिद्ध हुई और दक्षिण में औरङ्गजेब की मृत्यु के बाद भी कोई बत्तीस वर्ष तक शाही राजघराने का सारा काम-काज देखती रही। वह एक पवित्र और दानशीला महिला थी।

इनकी तीसरी सन्तान बुलन्द उन्निसाँ थी जो इस समय छः साल की थी। इसका विवाह आगे चलकर भाग्यहीन दारा के दूसरे पुत्र सिपर शिकोह के साथ हुआ था।

चौथी सन्तान मुहम्मद आजम शाहजादा था—जिसकी आयु इस समय चार साल की थी।

दिलरस बानू इस समय रोगों और रोगिणी थी—और शाही हकीम उसकी देखभाल कर रहे थे। दिल न मिलने पर भी इस बेगम को औरङ्गजेब बहुत चाहता था—उससे भय भी खाता था।

औरङ्गजेब की दूसरी बेगम रहमत-उन्निसाँ थी, जो महलों में मलाय बाई के नाम से मशहूर थी। यह काश्मीर के अन्तर्गत राजौरी राज्य के राजा राजू की पुत्री थी। पहाड़ी राजपूत घराने में उसका जन्म हुआ था। शाहजादा मुहम्मद सुलतान और मुअज्जम दोनों

शाहजादे इसी के पुत्र थे। इन शाहजादों की इस समय आयु क्रमशः अट्ठारह और चौदह साल की थी। इसी बेगम की एक खूबसूरत शाहजादी बदहमिर्ज़ों थी जिसकी आयु इस समय दस साल की थी।

'औरङ्गाबादी महल' नाम की एक और बेगम औरङ्गजेब के हरम में थी, जिसे हाल ही में उसने हरम में डाल लिया था।

परन्तु इस समय इस फकीर और ढोंगी शाहजादे के हरम में सबसे दिलचस्प हीराबाई थी, जो औरंगजेब के मन पर चढ़ गई थी और उसे मनमाना नाच नचाती थी। वह एक असाधारण सुन्दरी, चतुर और नृत्य-संगीत में निपुण स्त्री थी। महल में वह जैनाबादी के नाम से प्रसिद्ध थी।

इसका किस्सा ऐसा है कि मीर खलील नामक एक व्यक्ति के साथ औरंगजेब की माँ की बहिन का रिश्ता हुआ था। उसकी मौसी उन दिनों बुरहानपुर में रहती थी और वह किसी लौंडी उसकी गुलाम थी। कतल के किसी बर्फ़रोश से उसने इसे बड़े दामों में खरीदा था और स्वयं मीरखलील भी इस पर लट्टू था।

औरंगजेब की तबाही का भार उसकी मौसी ने इसी चंचल लौंडी को सौंप दिया और औरंगजेब उस पर इस कदर लहालोट हो गया—कि मौसी की खुशी-खुशी करके उससे इसे माँग लिया। बूढ़ी मौसी की सौतिया डाह मिटी और इस तबकी को बूढ़े के स्थान पर जवान स्वामी मिल गया।

इस तबकी दासी का औरंगजेब पर उन दिनों ऐसा नशा छाया हुआ था कि राजकाज से फारिग होते ही वह उसी के महल में आ पहुँचता था। वहाँ उसे शराब भी पीनी पड़ती थी और उसका नृत्य संगीत भी देखना पड़ता था।

: २६

हीराबाई

कमरा छोटा था किन्तु सुरुचिपूर्ण ढंग से सजा था, फर्श पर कीमती ईरानी कालीन बिछे थे, खम्भों और महराबों पर मोतिया के ताजे फूलों की मालाएँ लटकी हुई थीं। तीन-चार हजारा झाड़ों में सुगन्धित मोमबत्तियाँ जल रही थीं। उस कमरे में वह अनिन्द्य सुन्दरी बाला मसनद पर अलसाई पड़ी अपनी कोमल उँगलियों से पास पड़े एक दिलरुबा के तारों को छेड़ रही थी। वह अप्रतिम सुन्दरी बिलकुल नवोढ़ा बाला थी। एक छोटी-सी पोशाक अस्त-व्यस्त उसके अंग पर पड़ी थी। वह पोशाक इतनी बारीक थी कि उसमें झलकर उसका अंग आर-पार साफ दिखाई दे रहा था। वह पोशाक महीन ढाके की मलमल की थी। उसका रंग यद्यपि सफेद था पर उस चम्पकवर्णी के अंग का नवीन केले के पत्ते के समान रङ्ग छन-छन कर जो फूट आ रहा था, उससे वह पोशाक भी चम्पकवर्णी-सी दीख रही थी। एक कमखाब की चादर उसके वक्ष को छू रही थी। और एक महीन रेशमी इजारबन्द उसकी कमर में लिपटा हुआ था। उसके सुनहरे सुघड़ नंगे पाँव उस रंगीन कालीन पर ताजे गुलाब के फूलों के ढेर से दीख पड़ रहे थे।

उसका सौन्दर्य उत्तेजक था और देह की पहन निराली। उसकी चमकीली और घुँघराली लुटें उसके चाँदी के समान चमकते माथे पर अठखेलियाँ कर रही थीं। उसके शरीर पर बहुमूल्य मोती और हीरे के आभूषण सुरुचि कारीगरी से बनाए गए थे। उसकी आँखें काली, बड़ी-बड़ी और कटीली थीं। संक्षेप में वह कल्पना की जीती जागती मूर्ति थी। विचारों की लहर मनमें उठते ही उसका चेहरा

गहरा गुलाबी हो जाता था। उसका हास्य निराला था और उसके लाल अधरों पर धवल दन्तपंक्ति की बहार मन को पागल कर देती थी।

उसकी कमर में एक काश्मीरी शाल बँधी थी। मुरादीदार गर्दन में बड़े-बड़े मोतियों की माला और भुज मृणाल में बड़ाऊ पहुँचियाँ पड़ी थीं। नीचे को सलवार पहने थी वह गुलाबी साटन की थी—जिस पर सलमे-सितारे का बहुत उमदा काम हो रहा था।

कमरा सुगन्ध से महक रहा था और वहाँ की मधुर रोशनी छिटकी हुई चाँदनी का आनन्द दे रही थी।

इसी पारे की भाँति चपल सुन्दरी का नाम हीराबाई था। उसे पाकर औरंगजेब का मुरझाया दूर हो गया था। सदैव का गम्भीर, चुप और मक्कार औरंगजेब इस चपला नारी के सामने आकर दीवाना हो जाता था और प्यासी चितवनों से देखता नहीं अघाता था।

औरंगजेब को धीरे धीरे कमरे में आते देख सुन्दरी खिलखिला कर हँस पड़ी। हँसते-हँसते वह फर्श पर लोट गई। उसे इतने जोर से हँसती देख औरंगजेब ने झुककर कर कहा—"इस कदर क्यों हँसती हो बानू?"

"बाह हुजूर हँसू भी नहीं! आप की भी क्या चाल है, ऐसी चुपके-चुपके चलते हैं जैसे बिल्ली चूहे को पकड़ने चलती है। वाह! यह भी कोई चाल है?"

चुप मरदी में उस कुटिल राजकुमार की गम्भीरता नष्ट हो गई। उसने हँसकर कहा—

"यह चूहे को पकड़ने की चाल है, वह चूहा पकड़ा!" औरंगजेब ने लपक कर सुन्दरी की कमर को दबोच लिया। दोनों पास बैठ गए। परन्तु औरंगजेब के चेहरे को देखकर वह फिर हँस पड़ी। मतलब न समझने पर भी औरंगजेब भी हँस दिया। उसने कहा—

"क्या कर रही थी दिलबर?"

"मैं कुछ सोच रही थी।"

"क्या सोच रही थी ?"

"एक बात ?"

"कौन बात ?"

"हुजूर के सुनने की नहीं है।"

"सुनूँ तो ?"

"न कहूँगी।"

"कहो प्यारी।"

"अच्छा कान में।"

सुन्दरी चुपचाप औरंगजेब के कान के पास मुख ले गई और चट से उसका मुँह चूम लिया।

"आह, बात कहो जानेमन।"

"यही तो बात थी हुजूर।"

"इसी बात को सोच रही थी तुम ?"

"जी हाँ।"

"दिलबर, तुम मुझे इतना प्यार करती हो ?"

"जाइए, मैं क्यों प्यार करती ?"

"हीरा", औरंगजेब का स्वर काँपा—वह कूटनीति और कपट का पुतला इस चंचल बालिका के सम्मुख प्रेम में विभोर होकर अपने को भूल गया। उसने कस कर उसे छाती से लगा लिया।

हीराबाई ने कहा—"अच्छा एक बात बताइएगा ?"

"कौन-सी बात सितमगर ?"

"बादशाह होने पर आप लौंडी को याद रखेंगे ?"

"लौंडी को ? प्यारी, तुमसे किसने कहा कि मैं बादशाह होना चाहता हूँ।"

"मैं खुद कहती हूँ शाहजादे, मैं किसी दिन तुम्हारी इस तस्वीह को फेंक दूँगा। तुम्हें बादशाह बनना होगा।"

"किस लिए ?"

"मेरे लिए !"

"तुम्हारे लिए !"

"हाँ हाँ, मैं शान से मलिका बन कर मसनद पर बैठना चाहती हूँ। और जब आप दरबारे आम से आया करेंगे तो मैं आपकी अर्ज़-पमाइ करूँगी। सब महल की औरतें मुझ पर रश्क करेंगी। मेरे शाहज़ादे, मैं इसका हमेशा सपना देखती रहती हूँ।"

"सपना देखती रहती हो !"

"हाँ हुज़ूर !"

औरंगज़ेब गम्भीर हो गया। उसने धीमे अस्फुट स्वर में कहा—

"माही बानू, प्रेम और सपना ही तुम्हारी दुनिया है।"

"और आपकी दुनिया ? कुरान शरीफ़, तस्बीह लोगों से फुसफुस-फुसफुस बातें करना, कुछ सोचना, आसमान की ओर देखना, बिल्ली की तरह चलना, कभी न हँसना, न बोलना—यही न आपकी दुनिया है ! बाइए मैं आपसे नहीं बोलती—"

औरंगज़ेब ने काँपती आवाज़ से कहा—"हीरा प्यारी हीरा—"

परन्तु हीराबाई ने एकदम नाराज़ होकर कहा—

"मैं कहती हूँ कि मैं आपकी इस दुनिया में आग लगा दूँगी। मुझे ये सब बातें पसन्द नहीं हैं। आपको बादशाह होना होगा।"

औरंगज़ेब ने उत्तेजित होकर कहा—

"बानू !"

"ठहरिये हज़रत", उसने दस्तक दी। बाँदी दस्तबस्ता आ हाज़िर हुई। हीराबाई ने इशारा किया। वह शराब का प्याला ले आई और उसे सामने रखकर चली गई। हीराबाई ने भर कर कहा—"पीओ !"

"आह, क्या करती हो बानू ? नहीं, यह नाजायज़ "

"नाजायज़ बात मत कहो—पीओ !"

"ठहर बानू !"

"पीओ-पीओ-पीओ प्यारे," उसने औरंगज़ेब के गले में हाथ

मुगलों से तङ्ग आकर गोलकुण्डा का सुलतान तो एकबारगी ही शिवाजी से जा मिला। बीजापुर अब झिझक और हिचकिचाहट के बाद शिवाजी के आसरे जा खड़ा हुआ। खास कर जब आदिल शाह द्वितीय शराब और औरतों में मस्त रहने लगा, और दरबार के अमीर सुलतान और राजधानी पर अधिकार जमाने लगे—तब नाबालिग सुलतान सिकन्दर के गद्दी पर बैठते ही बीजापुर की हालत एकदम बिगड़ गई और इस सुअवसर से शिवाजी ने पूरा लाभ उठाया।

शिवाजी ने मुगलों की ईमानदारी पर तनिक भी विश्वास नहीं किया। इसी से उसने दक्षिण में मुगल प्रदेश को हथियाने का कोई सुअवसर नहीं छोड़ा। बीजापुर को बिना दबोचे वह अपना उत्थान न कर सकता था परन्तु जब आदिलशाही मन्त्रियों ने उसके साथ समझौता कर लिया तो उसने बीजापुर को सताना छोड़ दिया।

सन् १६५८ में औरङ्गजेब मुगल तख्त का दावेदार बनने के लिए दक्षिण से चला और २४ वर्ष बाद सन् ८२ में वापस लौटा तो यहाँ उसे पूरे पच्चीस वर्ष घोड़े की पीठ पर ही व्यतीत करने पड़े। इस बीच के २४ वर्षों में दक्षिण में पाँच सूबेदारों ने शासन किया। इस बीच न कोई निर्णयात्मक विजय हुई न युद्ध। जो युद्ध हुए वे सफल नहीं हुए। शाहजादा शाह आलम विलासी और आरामतलब आदमी था। शराब में मस्त अन्तःपुर की स्त्रियों में मौज मजा करना उसे पसन्द था। उसका सेनापति दिलेर खाँ की उससे कभी ताल मेल नहीं खाई और वह शाहजादे की आज्ञाओं की कभी परवाह भी न करता था। वे दोनों परस्पर विरोधी उद्देश्यों पर चलते रहे। अन्य सेनानायकों में हिन्दू नायक इस हिन्दू धर्म-उद्धारक नए मराठा राजा से सहानुभूति और प्रेम रखते थे। पीछे शाहजादा अकबर का विद्रोह करके शम्भु जी की शरण जाना दिल्ली तख्त के लिए एक नए संकट का सन्देश लाया जिसका सामना करने को औरङ्गजेब को दक्षिण आना और निरन्तर २५ वर्ष युद्ध करना पड़ा।

अब यहाँ जरा मराठों की जन्मभूमि की भौगोलिक दशा पर भी विचार कीजिये। पश्चिमी घाट और हिन्द महासागर के बीच एक लम्बी किन्तु सँकरी जमीन का हिस्सा दूर तक चला गया है। इसकी चौड़ाई कहीं कम और कहीं अधिक है। बम्बई और गोआ के बीच के इस प्रदेश को कोंकण कहते हैं। गोआ के दक्षिण में कनड़ प्रदेश शुरू हो जाता है। कोंकण में अधिक बरसात होती है। यहाँ की मुख्य पैदावार चावल है। आम, केला और नारियल के बाग यहाँ बहुत हैं। घाट पार करने पर पूर्व दिशा में लगभग बीस मील चौड़ा भूखण्ड है जो लम्बा चला गया है। यही 'मावल' कहाता है। यह भूभाग ऊँची नीची घाटियों से परिपूर्ण है। समतल स्थान बहुत कम है। इससे आगे पूर्व की दिशा में पश्चिमी घाट की पहाड़ियों की ऊँचाई कम होने लगती है, यहीं से 'देश' नामक प्रदेश का प्रारम्भ होता है। यह एक लम्बा-चौड़ा उपजाऊ मैदान है जहाँ की मिट्टी काली है और जो दक्षिण के मध्य भाग में दूर तक फैला हुआ है। यहाँ के लोग सीधे-सादे और परिश्रमी हैं।

सोलहवीं शताब्दी में अन्य सभ्य जातियों की अपेक्षा मराठों में सामाजिक भेदभाव कम था। पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में जो संत मराठों में जन्मे, उन्होंने जन्म की श्रेष्ठता पर चरित्र की श्रेष्ठता को उच्च बताया। मराठा समाज की भाषा और साहित्य यद्यपि उन दिनों अविकसित थे, पर उनमें एकता के भाव थे। इसी मराठा जाति को सत्रहवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में शिवाजी ने राजनैतिक एकता में बाँध कर जीवन से परिपूर्ण कर दिया। शिवाजी की सेना में कुर्मी और मराठा सैनिक थे। जो स्वभाव ही से सीधे, निष्कपट, स्वच्छन्द और परिश्रमी थे। ईसा की १४ वीं शताब्दी में जब मुसलमानों ने दक्षिण भारत अधिकृत कर लिया और मराठों के अंतिम हिन्दू राजा का भी अंत हो गया तब इस प्रदेश के मोहल्लों के छोटे-छोटे दल भिन्न-भिन्न नायकों के नेतृत्व में संगठित हो गए। इन दलों को यह

देकर मुसलमान नायकों ने अपने-अपने बल में समय-समय पर किया। इस प्रकार शिवाजी के उदय से पूर्व अनेक मराठा घरानों ने अपने पार्श्ववर्ती मुस्लिम शासक की सहायता करके अपनी धन-दौलत खूब बढ़ा ली थी।

इसी प्रकार का एक संपन्न घराना भोंसलों का था। जो पूना प्रान्त में पाटस नामक ताल्लुके में रहता था। और वहीं के दो गाँवों की पटेली करता था। वे खेती करते थे और अपने धार्मिक जीवन और उदार व्यवहार के कारण आस-पास बहुत प्रसिद्ध थे। संयोग से उन्हें खेत में पड़ा हुआ धन भी मिल गया, जिससे उन्होंने शस्त्रास्त्र और घोड़े खरीदे और निजामशाही राज्य के सेनानायक बन गए। मालोजी के ज्येष्ठ पुत्र शाहजी भोंसले भी ऐसे ही एक नायक थे। वे निजाम शाह के वजीर मलिक अम्बर की बचपन के दिनों में अपने कुटुम्ब की छोटी-सी टुकड़ी के नायक होकर नौकर हुए थे। पीछे मलिक अम्बर की मृत्यु होने पर वे पहले मुगलों से फिर बीजापुर से जा मिले। पीछे उन्होंने शक्ति प्राप्त कर निजाम शाह के एक शाहजादे को नाम मात्र के लिए गद्दी पर बैठा कर—पूना और चाकन से लेकर बालाघाट तक के सारे प्रदेश तथा गुजर, अहमदनगर, संगमनेर, त्र्यम्बक, नासिक आदि स्थानों के आस-पास का सारा निजामशाही इलाका छीन लिया। और इस सुलतान के नाम से तीन वर्ष तक सारा ही राज्यभार सम्हाला

अंत में मुगलों की एक बड़ी सेना से उन्हें युद्ध में परास्त होना पड़ा और वे महाराष्ट्र छोड़ कर बीजापुर चले गए।

सन् १६६७ के लगभग शाहजी जब फिर बीजापुर की नौकरी पर आए तब मुगल साम्राज्य की दक्षिणी सीमाएँ निश्चित हो चुकी थीं। इसलिए वे अपने नए स्वामी के लिए तुङ्गभद्रा और मैसूर के पठार की ओर और फिर वहाँ से मद्रास के समुद्री तट की ओर के प्रदेश जीतने चले गए।

शिवाजी इन्हीं शाहजी के दूसरे पुत्र थे। परन्तु शिवाजी और

उनकी माता उपेक्षित थे। वे उनके कर्मचारी दादाजी कोण्डदेव की देख रेख में पूना में अपनी माता के साथ रहते थे। पति की उपेक्षा के कारण जीजी बाई की इच्छाएँ अन्तर्मुखी हो गई थीं और उनकी स्वाभाविक धार्मिक भावनाएँ उभर आई थीं, जिनका शिवाजी पर काफी प्रभाव पड़ा। वे अकेले थे। साथ खेलने को कोई भाई-बहन न था। इस एकाकीपन ने माता-पुत्र को एक दूसरे के अति सन्निकट ला दिया और वे माता को देवी की भाँति पूजने लगे। साथ ही वे स्वावलम्बी भी हो गए, और बिना ही किसी की सहायता के अपने संगी-साथी मराठा लड़कों को जोड़ कर अपना दल बना लिया। वे शुभ्र श्वेत घोड़े पर चढ़ कर वनों और पर्वतों में साथियों सहित चक्कर लगाया करते, उनके संगी-साथी मावली बालक थे। इस प्रकार उन्हें कठोर और परिश्रमी जीवन का अभ्यास हो गया और स्वतन्त्रता से प्यार हो गया। मुसलमानों की अधीनता में दासता करने से वे घृणा करने लगे।

जिन दिनों औरंगजेब बालाघाट का सूबेदार था, शिवाजी को दक्षिण में उदय होने का अवसर मिला। बीजापुर का मुहम्मद आदिलशाह लगभग बीमार पड़ा और दस साल रोग-शय्या पर पड़ा रहा। इन दस वर्षों तक उसकी राज्य-व्यवस्था बड़ी ही ढीली रही जिसका शिवाजी ने पूरा लाभ उठाया। उसने तोरण का किला वहाँ के किलेदार से छीन लिया जहाँ उसे दो लाख हून हाथ लगे। इसके बाद ही उसने राजगढ़ का किला बनवाया। पीछे उसने बीजापुर वालों से कोण्डाना का किला भी छीन लिया। और साथ ही अपने पिता की पश्चिमी जागीर के सभी भागों को अपने अधिकार में कर लिया।

इसी बीच शाहजी को बीजापुर के सेनानायक मुस्तफा खाँ ने कैद कर लिया और उनकी सारी सेना और जायदाद को जब्त कर लिया। इस समय मुस्तफा खाँ दक्षिणी अर्काट के जिले में जिंजी नामक

किले का घेरा डाले हुए था। शाहजी के पाँवों में बेड़ियाँ डाल दी गईं। अन्त में अहमद खाँ के, जो बीजापुर दरबार का सरदार था और शाहजी का मित्र था, बीच में पड़ने से समझौता हुआ और शाहजी ने बंगलौर, कोण्डाना और कन्दर्पी के तीन किले बीजापुर के सुलतान को भेंट कर के छुटकारा पाया।

उस समय जावली एक बड़े राज्य का केन्द्र था। यह एक सम्पन्न गाँव था जो सतारा जिले के उत्तर-पश्चिमी कोने में बिलकुल छोर पर था। इस राज्य का स्वामी मोरे नाम का एक मराठा सरदार था। इस सरदार के पास पहाड़ी जाति के परिश्रमी बारह हजार सैनिक थे जो मावली ही के समान थे। अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यह जावली की छाती की स्थिरता दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम दिशा में शिवाजी की राह का एक रोड़ा बन गयी थी। शिवाजी ने अपने सरदार रघुनाथ बल्लाल कोरडे के द्वारा इस सरदार को मरवा डाला और फिर चढ़ाई करके जावली को अपने अधिकार में कर लिया। जावली को जीत कर शिवाजी ने वहाँ से दो मील पश्चिम में प्रतापगढ़ नाम का किला बनवाया और अपनी इष्टदेवी भवानी की स्थापना की। रायगढ़ का किला भी मोरे कुटुम्ब के ही हाथ में था। उसे भी शिवाजी ने उनसे छीन लिया। यही रायगढ़ का किला आगे चलकर शिवाजी की राजधानी बना।

जब सन् १६६ में मुहम्मद आदिल शाह की मृत्यु होने पर औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किया तो शिवाजी ने अपनी नीति बदली और बीजापुर की सहायता करने की ठान ली। जब औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किए, तब उधर तो औरंगजेब के बीदर और कल्याणी पर आक्रमण हो रहे थे—इधर शिवाजी ने मुगलों के दक्षिणी पश्चिमी कोने में घुस कर लूटपाट और अन्धेरगर्दी मचाई हुई थी। तीन हजार घुड़सवारों को लेकर आना जी मोतले ने भीमा नदी पार कर मुगल राज्य के चमारगुण्डा तालुका के गाँवों को लूट

लिया। इसी समय काशी नामक दूसरा सरदार भीमा पार कर रायसीन के ताल्लुके में लूट-खसोट करने लगा। अभी इस प्रतिक्रिया को एक वर्ष भी न बीता था कि मुगल साम्राज्य के दक्षिणी सूबे के प्रधान नगर अहमदनगर की चहारदीवारी तक इन मराठा सरदारों ने उत्पात और लूट मार प्रारम्भ कर दिया। जब अहमदनगर की नाक पर बसे पेठ नगर पर मराठों का धावा पड़ा—तब मुगल साम्राज्य में चिन्ता की लहर फैली। उधर शिवाजी स्वयं भी उधर में दुन्नार तालुका में अंधेरगर्दी मचा रहे थे। वे मौका पाकर एक अँधेरी रात में रस्सियों की सीढ़ी लगा कर दुन्नार शहर की सड़कों को कूद गए और वहाँ के पहरेदारों को मार-काट कर तीन लाख हूण और दो सौ घोड़े और बहुत से आभूषण और सामान लूट ले गए।

आखिर औरंगजेब का इधर ध्यान गया। उसने नसीरी खाँ और हसन खाँ की कमान में तीन हजार सवार देकर अहमदनगर भेज दिया। उधर मुस्तफा खाँ ने भी चमारगुण्डा में मराठों से एक मोर्चा लिया। उधर शिवाजी से नसीरी खाँ की भी मुठभेड़ हो गई। अब मुगलों की सेना शिवाजी के इलाकों में घुस गई और गाँवों को जलाना, लोगों को कत्ल करना और लूटना आरम्भ कर दिया।

इसी समय आगरे में भारी मारी चढ़ाई हुई। बादशाह बीमार पड़ गए और मुगल तख्त को अधिकार करने चारों ओर से शाहजादों ने आगरे की ओर कूच कर दिया। शाहजादा औरंगजेब भी दक्षिण से चल पड़ा। उधर मुगलों से लगातार लड़ते रहने से बीजापुर के सरदारों में वैमनस्य फैल गया और बीजापुर के वजीर खान मुहम्मद की हत्या कर डाली गई। अतः अब शिवाजी को अपनी महत्वाकांक्षा पूरी करने का पूरा अवसर मिल गया। उनकी राह में जब कोई बाधा न थी। पश्चिमी घाट के पहाड़ों को पार कर वे कोंकण में जा धमके। आजकल जो थाना जिला कहाता है, तब वह कल्याण प्रान्त का भाग था। वहाँ का शासन मलावत मुल्ला अहमद नाम का एक

अरब करता था जिसकी गिनती बीजापुर के प्रमुख सरदारों में थी। कल्याण और भिवंडी के शहर सम्पन्न तो थे—पर इनकी शहरपनाह न थी। शिवाजी ने थोड़े ही प्रयास से इन दोनों नगरों को अधिकृत कर लिया। वहाँ से उन्हें बेशुमार धन और व्यापारिक सामग्री हाथ लगी। शिवाजी ने कल्याणी और भिवंडी को अपनी बलसेना और जहाजों का एक अड्डा बना दिया। इस प्रकार मुगल सल्तनत की उन्नतिगाहट के साथ-साथ ही दक्षिण में शिवाजी के मराठा राज्य की नींव स्थापित हुई।

२८

औरंगजेब का कूटचक्र

पहले औरंगजेब ने बादशाह का ख़रीता खोला। उसमें लिखा था—"तुम्हारे ख़त से हमें तसल्ली है और हम चाहते हैं कि तुम इत्मीनान से अपने मुल्क का इन्तज़ाम करो—हमने सुना है कि तुम बराबर फौजें भरती कर रहे हो और अपने सदर से बाहर की ओर कूच करना चाहते हो। हमारा हुक्म है कि तुम अपने सदर ही में मुक़ीम रहो और वहाँ से न हटो। नई फौज भरती करने की फ़िलहाल ज़रूरत नहीं। हमने सारे गोलकुण्डा और बाद बीजापुर से मुज़ाहिर की है। बस, हम नहीं चाहते कि तुम कोई ऐसी हरकत करो जो उसके ख़िलाफ़ हो।"

औरंगजेब की भृकुटी में बल पड़े और उसने अपने होंठ सिकोड़े, फिर उसने दूसरा ख़त खोला। दूसरी चिट्ठी उसकी बहन शाहज़ादी रोशनआरा की थी। उसमें लिखा था—

मेरे प्यारे बरादर,

मुझे उम्मीद है तुम तन्दुरुस्त होगे। तुम्हारी हिदायतों के मुताबिक सब काम हो रहा है। बादशाह अपने डेरे पर हैं, शाइस्ता खाँ को बीबी के साथ बादशाह सलामत ने जो ज़ख़्म दाग़ा है उससे उस औरत ने

जाने दे दो। उसके मरने से तमाम दरबार में बादशाह के खिलाफ़ जोश और नाराज़ी फैल रही है। अफ़सोस तो इस बात का है कि लाल बेगम ने अब्बा को इस काम में मदद दी है, मगर बिरादर, फ़िक्र की कोई बात नहीं। तुम्हारे हक में यह सब बहुत अच्छा है। शाइस्ता ख़ाँ बेटा बहादुर अब तुम्हारी मुट्ठी में आ गया है। वह बादशाह से बदला लेगा। मालिका इसके बादशाह सलामत को इसका पूरा यक़ीन हो गया है कि कबीर साहुस्ता ख़ाँ की मौत में दारा का हाथ है और वे डरते हैं कि कहीं वह बादशाह पर भी हाथ साफ़ न करे। इससे बादशाह भीतर-ही भीतर दारा के खिलाफ़ सोच रहे हैं। अलबत्ता तो दारा यह है कि दारा की बढ़ती हुई बेअदबी और ताक़त को चुनौती देने ही के लिए बादशाह ने अमीर मीरजुमला की राय मानकर उसकी कमान में मुकम्मिल तोपखाने समेत इतनी बड़ी फ़ौज दक्खिन भेजना मंजूर फ़र्माया है जो वक़्त ज़रूरत तुम्हारे ही काम आएगी। अब तुम बहुत जल्द देखोगे कि तमाम दरबार तुम्हारी मुट्ठी में है।"

इस ख़त को पढ़कर औरंगज़ेब ने दाँत के नीचे होंठ दबाया और दो-तीन बार सिर हिलाया। फिर उसने तीसरा ख़त खोला। यह ख़त मीरजुमला का था। उसमें लिखा था—"मुबारक, आपने जो चाहा था वही हुआ, आपकी मुराद बर आई। मगर हज़रत, ख़बरदार रहिए। अब मैं बादशाह का नौकर हूँ, और उनके हुक्म की पाबन्दी मेरे लिए बहुत ज़रूरी है। इसलिए फ़िलहाल मैं आपको कोई ख़ास मदद नहीं पहुँचा सकूँगा, मगर फिर भी याद रखिए कि मेरा दिल आपके साथ है।"

औरंगज़ेब कुछ देर आँखें बन्द किए कुछ सोचता रहा। उसे वे सब बातें एक-एक करके याद आने लगीं जो दौलताबाद में इन दोनों दोस्तों से होती थीं। वह समझ गया था कि इस आदमी की दोस्ती हिन्दुस्तान के इतिहास में अमर रहेगी और मुझे जो कुछ मिलेगा इसी की मदद से।

दारा के हाथ से बंगीर साहुल्ला का खून किया जाना औरंगजेब के हक में एक जबरदस्त बात थी। वह जानता था कि बंगीर साहुल्ला खाँ की जोड़ का बुद्धिमान आदमी उस समय एशिया भर में न था। बादशाह उसी पर इतने बड़े राज्य का भार सौंपकर बेफिक्र था। वह उसका विर्द विश्वास ही नहीं करता था जो कि मुगल बादशाहों के स्वभाव के विरुद्ध था, प्रत्युत वह उसका अत्यन्त आदर करता था। मगर दारा जानता था कि वह शिया है और उसके हाथ में इतनी ताकत है कि वह जिसे चाहे तख्त पर बैठाए। वह अवश्य ही शुजा की मदद करेगा। दरबार में यह भी चर्चा दबे कण्ठ से होती रहती थी कि वह बादशाह के बाद खुद बादशाह बनेगा या अपने बेटे को बादशाह बनावेगा। कुछ कहते थे कि वह पठानों को सल्तनत सौंपा चाहता है और उसके प्रभाव में कहा जाता था कि उसकी स्त्री पठानी है और उसने पठानों की एक बड़ी फौज भरती कर रखी है। दारा को उससे कुछ आशा न थी, वह कभी भी दारा की परवा नहीं करता था। इसी से दारा उसे अपने रास्ते का रोड़ा समझता था, और उसे उससे दूर कर देना ही ठीक समझा। परन्तु इस काम से बादशाह को दारा से बुरा हो गई और वह उससे बहुत नाराज हो गया। यह सब बातें औरंगजेब के लिए अत्यन्त लाभदायक थीं।

पर, औरंगजेब की अपनी आमदनी बहुत कम थी और खजाना भी खाली था। फौज उसके पास बहुत मामूली थी। नई फौज भरती करने में बड़ी-बड़ी दिक्कतें थीं इसलिए उसने अपने बुद्धि-बल पर ही भरोसा करके अर्वाचीन में पैर डाला। उसने भली भाँति समझ लिया कि दो ही ऐसे आदमी हैं जिनकी मदद से बेड़ा पार हो सकता है। एक मुराद बख्श दूसरा मीरजुमला। मीरजुमला की दोस्ती पर उसे पूरा भरोसा था। लोगों के संदेह से बचने के लिए उसने वह सब धन—जो कन्धार और बीदर के किले में उसे मिला था, सब यहीं मीरजुमला के पास छोड़ दिया था। अब वह बेधड़क मुराद पर अपना

चक्र चलाने की चिन्ता में था और उसे अपने बुद्धि-बल पर पूरा भरोसा था कि वह दुराद को अपने चंगुल में फँसा लेगा।

: २९

पहली चाल

काली रात के पर्दे ने दुनिया में अँधेरा कर दिया था। सारी दुनिया सो रही थी। पर वह पुरुष शाहजादा बेचैनी से अपने सूने महल में अकेला टहल रहा था।

खूब सोच-समझ कर उसने एक खत अपने छोटे भाई शाहजादा मुरादबख्श को लिखा, जो इस समय गुजरात का हाकिम था और अहमदाबाद में रहता था एवं उसके आगरे लौटने के मार्ग पर था। पत्र इस प्रकार था—

"प्यारे भाई, मैंने पुख्ता खबर सुनी है कि दारा ने हमारे वालिद बुजुर्गवार शाहंशाह शाहेजहाँ को जहर देकर मार डाला है और खुद बादशाह बना चाहता है। इसीलिए शाहजादा शुजा ने तख्त के हुकूक और वालिद की मौत का बदला लेने के लिए एक बड़ा भारी लश्कर लेकर देहली की ओर कूच किया है।

आप को इस बात की याद दिलाने की कोई जरूरत नहीं कि अमूरे सल्तनत की मेहनत उठाना मेरे असली मिजाज और तबियत के कितने कदर खिलाफ है। इस वक्त जब कि दारा और शुजा निहायत सरगर्मी से हुकूमत सल्तनत के लिए कोशिश और सई कर रहे हैं, मैं सिर्फ फकीराना जिन्दगी बसर करने में मुतरफिज हूँ। मगर, प्यारे अजीज, अगर्चे सल्तनत के हक हकूक और दावों से मैं बिलकुल दस्तबरदार हूँ। ताहम इस राय और जजबात से आपको मुत्तिला करना वाजिब समझता हूँ कि न सिर्फ यही कि दारा शिकोह फर्मांरवाई औरंगजेब से खाली है, बल्कि इसलाम और काफिर होने की वजह से बिलकुल खाब व तख्त

के काबिल नहीं। बड़े-बड़े उमराए सल्तनत और अरकाने दौलत उससे मुतनफ्फिर हैं। अलहाजा कुमाश शुजा भी सल्तनत के काबिल नहीं। क्योंकि वह राफ़ज़ी मज़हब का पाबन्द और हिन्दुस्तान का दुश्मन है। बस इस सूरत में इस अजीमुश्शान सल्तनत की फर्माँबरदारी के लायक सिर्फ आप हैं। यह मसला मेरी ही राय नहीं—बल्कि पाए तख्त के तमाम मशीर और अमीर जो आपकी बहादुरी के कायल हैं सब इसमें इत्तफ़ाक़ राय रखते हैं और हमजबान होकर दारुल खिलाफ़त में आपकी रौनकअफ़्ज़ी के मुन्तज़िर हैं। मेरी बाबत तो यह तसव्वुर कर लीजिए कि अगर आपकी तरफ से मुस्तहकम तौर पर मुझे यह वादा मिल जायगा कि जब खुदा के फ़ज़्ल से आप बादशाह हो जाएँगे तो मुझे खिदमत के मौके का गोशए-आफ़ियत-बहमीनान खातिर इबादत इलाही बजा लाने के लिए इनायत फर्माएँगे, तो बस मैं इतने ही से फौरन आपकी तरफ़दारी में खिदमत बजा लाने को आमादा और तैयार हो जाऊँगा। और तलाश व मशवरे से अपने दोस्त व रफ़ीकों से मय अपनी तमाम फौज आपके हुक्म में कर देने से, गरज किसी किस्म की मदद से मैं दरेग न करूँगा। बिलफ़ेल मैं आपकी खिदमत में एक लाख रुपया भेजता हूँ, और उम्मीद करता हूँ कि आप इसे बतौर नज़र कुबूल करेंगे जो कि मेरी खुशी का बाइस होगा। हुनर आशनाई और वफ़ादारी का यही वक्त है। बस आप एक लमहा भी बाधा न कीजिए। मौके को गनीमत समझिए और जल्दी से सूरत के किले पर, जहाँ मुझे खूब मालूम है कि बेशुमार दौलत मदफ़ून है कब्जा कर लीजिए।"

रात के घोर सन्नाटे में औरंगज़ेब ने यह खत अपने हाथ से लिखकर कई बार पढ़ा, फिर उसने अपने दूधभाई मीरबाबा को बुलाकर खत उसके सुपुर्द करके कहा—'तुम अभी इसी दम गुजरात को रवाना हो जाओ और जबानी हर तरह उसकी तसल्ली कर दो और उसे आमादा करो कि वह फौरन सूरत के खजाने को लूट ले। तुम्हारे

हमराह जाने के लिए पाँच सौ सवार तैयार हैं। जाओ भाई, अभी कूच कर दो—तुम्हारी इस कूच की कामयाबी पर ही हमारी उम्मीदें हैं।' इतना कहकर औरंगजेब ने मीरबाबा के हाथ चूम लिए और अपना कीमती जड़ाऊ खंजर उसकी कमर में खोंस दिया और गले से मोतियों की एक कीमती माला उतार कर उसके गले में डाल दी।

मीरबाबा ने तुरन्त ही कूच बोल दिया। उसके जाने के बाद औरंगजेब हाथ मलता हुआ कुछ देर टिमटिमाते तारों को देखता रहा—फिर उसने फौरन ही अपने बड़े बेटे सुलतान मुहम्मद को तलब किया। उसे एक बहुत गोपनीय खरीता देकर कहा—'तुम्हें अभी कल्याणी की ओर कूच करना होगा वहाँ हमारा दोस्त और मददगार अमीर मीरजुमला काबिज है। उनसे तुम निहायत आजिजी से कहना कि निहायत जरूरी काम आ पड़ने से एक जरूरी मसले पर आपसे मशविरा लेना है। इसलिए वहाँ आकर मुझसे मिल जायँ। यह खरीता उन्हें बिलकुल पोशीदा ढंग से देना और जैसे मुमकिन हो उन्हें साथ ले ही आना। पाँच सौ सवार तुम्हारे हमराह जाने को तैयार हैं। मेरे प्यारे वफादार बेटे अभी इसी दम कूच बोल दो। इत्मीनान रखो कि तुम्हारी बदनामी और बदख्वाही फिजूल न जायगी।' उसने पुत्र को छाती से लगाया।

शाहजादा ने बन्दगी की और चल दिया। औरंगजेब ने फिर सुदूर तारे पर दृष्टि जमा दी। इस बार उसने अपने विश्वासी मुशाहिब अमीर खाँ को तलब किया और कहा—"तुम्हें मालूम है कि हमें तुम्हारा कितना कदर मालूम है। अब वह वक्त आ गया है कि हमें अपने काम करने चाहिए। मैं तुम्हें एक नाजुक काम सौंपना चाहता हूँ।"

'मैं बन्दाखरूम हाजिर हूँ। हुक्म कीजिए।"

"यह खत लो और सतारा चले जाओ। वहाँ बहादुर मराठा शिवाजी है, उसे खत दो और समझाओ कि वह अगर हमारी मदद करेगा तो हम बीजापुर से लड़कर उसे नई सल्तनत कायम करने में मदद दे

चाहते हैं। उसे यह भी समझा देना कि बिना ऐसा किए उसका दिल्ली में अपनी हुकूमत कायम करना बिलकुल मुमकिन नहीं। उसके लिया—वह अगर हमारी मदद करेगा तो मैं वादा करता हूँ कि कन के एक हिस्से की चौथ हम हमेशा उसे देंगे।"

इसके बाद औरंगजेब ने और भी जरूरी बातें उसे समझाईं। कर कहा—'अगर तुम्हें यह खतरनाक सफर अकेले खुफिया तौर पर करना होगा। जिसका तुम उस्तादी से बन्दोबस्त कर लोगे।' यह कह र उसने अपना चढ़ाऊ कमरबन्द उसकी कमर में बाँध दिया।

अमीर खाँ ने हँस कर कहा—"आप इतमीनान रखिए। ठीक त पर जनाब हुजूर की खिदमत में पहुँच जायगा।" वह सलाम करके ला गया। औरंगजेब उस समय तक उसे देखता रहा, जब तक उसकी ठ अँधेरे में गायब न हो गई। इसके बाद उसने दस्तक दी।

एक अधेड़ बोहरा दस्तबस्ता आ खड़ा हुआ। औरंगजेब ने दमी नजर से उसे देख कर कहा—'मुबारक, तुम्हें पोशीदा तौर पर भी इस आदमी के पीछे जाना होगा और इसकी तमाम हरकतों का र इसके आने से पेश्तर ही जाना होगा। उसने एक छोटी सी थैली ो अशर्फियों से भरी थी, उसकी हथेली पर रख दी। मुबारक बिना क शब्द बोले झुक कर चला गया। औरंगजेब के होठों पर मुस्कान ी एक हल्की रेखा आई और वह धीरे-धीरे कुछ सोचता हुआ महल चला गया।

: ३० :

शिकार

शाहजादा मुराद बख्श एक बलिष्ठ और सुन्दर युवक आदमी था। शिकार, युद्ध, शराब और रमणी इन चार चीजों में उसकी जान थी। ाला और बरछा फेंकने में वह मुगल साम्राज्य भर में एक था। शराब

और रमणी से जब उसका मन ऊबता तो वह शिकार को चला जाता। वहाँ से ऊब कर वह महलसरा में घुस कर सुरा-सुन्दरी की आराधना में डूब जाता। यही उसका जीवन, यही उसका अस्तित्व, यही उसका पुरुषार्थ था। यद्यपि उसमें भी दिल्ली और आगरे की सब हलचलों को सुन रखा था और राजलिप्सा अन्य भाइयों की अपेक्षा उसमें कम न थी, पर वह उतना बुद्धिमान न था जितना एक राजकुमार को होना चाहिए। इसलिए जब दारा, शुजा और औरंगजेब लोहू और लोहे के सपने देख रहे थे और बड़े-बड़े राजनीति के ताने-बाने बुन रहे थे, मुराद वक्त शिकार-शराब और सौन्दर्य में डूब उतरा रहा था।

सुबह ही से शिकार की तैयारियाँ हो गईं। सजे हुए हाथियों पर तमाम मुसाहिब और खास-खास अमीर बैठे थे, शाहजादा मुरादबख्श एक ऊँचे हाथी पर सवार था। हाथियों पर सुर्ख होदे कसे थे। सबके हाथों में बन्दूकें थीं।

जंगल में शिकार का इन्तजाम पहले ही करा दिया गया था और जंगल के चारों ओर मजबूत जाल लगा दिया गया था, जिसमें बाहर आने-जाने का सिर्फ एक ही रास्ता था। जाल के बाहर थोड़े-थोड़े फासले पर सिपाही भाले और बन्दूकें लिए मुस्तैद खड़े थे, मगर वे शेर का शिकार नहीं कर सकते थे न शेर ही इन्हें कुछ हानि पहुँचा सकता था।

सवारी जंगल को चली। आगे-आगे बड़े-बड़े भीमकाय भैंसे थे, उनके भयानक विशाल सींग देख कर भय होता था। उन पर मोटे चमड़े पड़े हुए थे जो सिंह के आक्रमण से उनकी रक्षा करते थे, वे भैंसे लगभग एक सौ थे, इन पर एक-एक आदमी नेजा लिए सवार था।

जंगल में पहुँचते ही शाहजादे को खबर मिली कि आज साबरमती के कछार में एक जोड़ा बहुत बड़े शेर और शेरनी का है। शाहजादे ने खुशी से चिल्ला कर घेरा करने की आज्ञा दी। शेर घेर कर जंगले

में से आए गए। चारों तरफ हल्ला हो रहा था। दोनों जानवर घबरा कर चीखते रहे थे। कहीं निकल भागने की उनके लिए जगह न थी। लिहनी एक ग़ार में चुपके से छिप गई। मगर शेर ने भैंसों को देखते ही एक छलांग मारी। भैंसों पर के आदमी फुर्ती से कूद पड़े और छलांग मारते ही भैंसों ने शेर को सींगों में उठा लिया। यह सब काम ऐसी फुर्ती और कौशल से हुआ कि शेर की कोमल पेट की खाल में उनके तीखे सींग पूरे घुस गए। वह दर्द से कराहने और चीखने लगा। शाहज़ादे ने आनन्द से हाथ मलते हुए अपने एक सुपाहिब को गोली दागने का हुक्म दिया। गोली दागी गई और शेर मर कर ढेर हो गया। तमाम सिपाही उस पर टूट पड़े। किन्तु हौदेवालों ने चिल्ला कर कहा—"खबरदार! सवारियों से न उतरिए, कछार में शेरनी है।"

शीघ्र ही शेरनी की क्रुद्ध हुंकार से वन गूँज उठा। वह बारंबार *दहाड़ रही थी—उसकी दहाड़ सुन कर शाहज़ादे ने सब भैंसों को* घेरे से बाहर कर देने का हुक्म दिया। इसके बाद उसने आगे अपना हाथी बढ़ाया।

शेरनी पर सब से पहली नज़र शाहज़ादे की पड़ी और उसने इस से गोली दाग दी। गोली शेरनी को घायल करती हुई निकल गई। इस पर झल्ला कर शेरनी शाहज़ादे के हाथी पर झपट पड़ी और ज़ोर से हाथी के माथे पर पंजे गड़ा कर लटक गई। महावत डर कर ज़मीन पर गिर पड़ा। शाहज़ादे ने फ़ायर किया, पर खाली गया। आख़िर उसने अपने प्राण संकट में देख कर दोनों हाथों से बन्दूक पकड़ कर शेरनी को पीटना शुरू किया। फिर भी उसने अपनी गिरफ़्त को न छोड़ा। जब हाथी ने यह देखा कि उसका कोई दाव-पेंच ही नहीं चलता तो वह भागकर एक भारी वृक्ष से जा टकराया। उसने इस कौशल से वृक्ष में टक्कर मारी कि शेरनी कुचली जाकर भयानक रीति से चीख उठी और छूट कर दूर जा गिरी। इतने ही में एक सवार ने गोली दाग कर उसका काम तमाम कर दिया।

शाहजादे ने उस हाथी का रातिब बढ़ा दिया। उस दिन फिर और शिकार नहीं हुआ। शाहजादा अपने खीमों में लौट आया। दोनों जानवर उसके सामने लाए गए। फिर मूँछों के अफसर ने उसकी मूँछ काट ली।

शाहजादा एक हफ्ते शिकारगाह में रहा। उसने सैकड़ों हिरन, नीलगाय, बारने भैंसे, चिड़ियाँ वगैरह आदि जानवर मारे। हजारों आदमी उसके साथ इधर-से उधर दौड़-धूप करते फिरे। अन्त में एक सप्ताह तक शिकार का आनन्द लूट कर वह अहमदाबाद लौट आया।

३१

मीरबाबा से मुलाकात

शिकार से लौटने पर उसे औरंगजेब के दूत मीरबाबा के आने की सूचना दी गयी। मीरबाबा से मिलकर मुराद बहुत खुश हुआ। उसकी बहुत खातिर-तवाजा की। और औरंगजेब के हाल-चाल पूछे। मीरबाबा ने उसे औरंगजेब का खत देकर कहा—'मैं चार दिन से आपका इन्तजार कर रहा हूँ। मुझे बड़ा अफसोस है कि आप जैसे शाहजादों का वक्त एक-एक लमहा कीमती है आप अपना वक्त इस तरह शिकार में जाया करते हैं।' इसके बाद उसने औरंगजेब की तरफ से बड़ी-बड़ी लम्बी-चौड़ी बहुत बातें कहीं। वह सब सुनकर, खत पढ़ और लाख रुपए देख कर वह फूल कर कुप्पा हो गया और वह समझने लगा कि मानो हम बादशाह हो ही गए।

मुराद की आमदनी बहुत ही कम थी, सेना भी उसके पास नहीं थी, वह भी इस मौके पर अपनी भाग्य-परीक्षा करे यह सोच कर रह जाता था। इसका कारण कुछ तो उसका आलस्य-व्यसन और कुछ कमअक्ली थी। अब इस प्रकार अतर्कित सहायता मिलती देख वह बहुत आशान्वित हो गया। उसने नगर अहमदाबाद के तमाम अमीरों,

शहर के बड़े बड़े व्यापारियों, मुसाहिबों और जिम्मेदार आदमियों को बुलाकर एक छोटा सा दरबार कर डाला। उसमें उसने खुले आम यह सब सबको सुनवाया और ज़ोर देकर लोगों से धन और सेना की सहायता माँगी। उसने साहूकारों को तुरन्त धन की कमी पूरी करने का हुक्म दिया और विश्वास दिलाया कि सूरत का खजाना हाथ आते ही वह अच्छे सूद के साथ उन्हें उनकी रकम लौटा देगा। विवश साहूकारों को भी उसकी बात माननी पड़ी। देखते-देखते हलचल मच गई। और धड़ाधड़ सेना भरती होने लगी। धुने, धुनाई, मोची, कुम्हार सब सिपाहियों में भरती होने लगे। उन्हें अच्छी तनख्वाह, लूट का लोभ और सिपाहियाना ठाठ, बस और क्या चाहिए।

मुरादबख्श का एक गुलाम खानाजाद शाह अब्बास नामक था। वह बड़ा वीर और मुराद का हुक्मबिरदार था। उसे मुराद ने तीन हजार फौज देकर सूरत पर आक्रमण करने को तुरन्त रवाना कर दिया।

मीरबाबा ने वह सब बन्दोबस्त अपने सामने करा दिया। और इसके बाद वह मुराद की मूर्खता पर मन-ही मन हँसता हुआ उसको अच्छा खासा सब्जबाग दिखा उसका खत औरङ्गजेब के नाम लेकर वापस लौटा। मुराद ने बनाव में औरङ्गजेब को लिखा था—

'इसलाम की पुख्ता पनाह, आलिम व दाना और वफादार भाई औरङ्गजेब, आपका खत पढ़कर और मेरी तरफ को आपका रहम व करम है जान कर मुझे अत्यन्त खुशी हुई है। खास कर यह देखकर कि आप कुरान शरीफ पर भरोसाकर होने और अपने पाक मजहब को इस तबाही से बचाने के लिए इस कदर मुतफिक हैं, जिसका हमारे दोनों भाइयों में से किसी के भी बादशाह न होने पर तबाह होने में शकोशुबहा नहीं है। मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ और कुरान की कसम खाता हूँ कि मैं बादशाह होने पर आपके बाल-बच्चों को वह दर्जा दूँगा जो शाहजादों को दिया जाता है। और सबसे बढ़कर वह

कि मैं आपको अपने बाप से बढ़कर समझूँगा। आपके ऊपर मुझे कितना यकीन है यह आप इसी से समझ लीजिए कि आपके भेजे हुए रुपयों से मैंने आनन-फानन लश्कर इकट्ठा करके उसे सूरत के किले को फतह करने भेज दिया है, इसके अलावा मैं तैयारी कर रहा हूँ कि जल्द हमारा लश्कर कूच करे। खुदा हमारी मुराद पूरी करेगा। नई खबरें देते रहिए। मुझे आपके बारे पर पूरा यकीन व इत्मीनान है।"

: ३२

मीरजुमला की शह

मुहम्मद सुलतान मीरजुमला के पास से निराश और क्रुद्ध होकर लौटा। उसने उनके साथ बेवफाई का बर्ताव किया था। और उसने सब लोगों के सामने ऊँची आवाज में मुहम्मद सुलतान की मजाकिया करते हुए कहा—"मैं शाहंशाह का सेवक हूँ, न कि औरंगजेब का। न मैं उसकी बात मान सकता हूँ न मदद कर सकता हूँ। क्योंकि शाहंशाह सलामत जिन्दा हैं और उनके मरने की खबर झूठ है। असली खबर मुझे मिल गई है।" राजनीति से अज्ञात मुहम्मद सुलतान का मुखड़ा सूख गया यह सुनकर लोग उठा। और वह होंठ काटता हुआ लौट चला। मीरजुमला ने मुहम्मद को औरंगजेब के लिये एक खत भी दिया। पत्र में उसने लिखा था—'बख्तावरी का किला छोड़ और फौज से अलहदा होकर मेरा दौलताबाद आना नहीं हो सकता। अलावा अपनी आप यकीन फर्माएँ, कि मैंने आगरे से अभी इस मजमून की ताजी खबर पाई है कि शाहजहाँ हनूज जिन्दा हैं। इसके सिवा यह बात भी है कि जब तक मेरे अहलोअयाल राग शिवोह के काबू में हैं, तब तक मैं आप के साथ शरीक नहीं हो सकता—बल्कि मेरी अलबत्ता मंशा तो यह है कि मैं इस हंगामे में किसी का भी तरफदार न रहूँ।"

बहुत आवाज औरंगजेब ने जब यह खत पढ़ा तो वह मुस्कुरा

दिया। कुछ सोच-विचार कर उसने अपने छोटे बेटे सुलतान मुअज्जम को, जो अभी केवल १४ साल ही का था, फिर मीरजुमला के पास भेजा। उसके साथ उसने तीन हजार सेना दी और उसे हुक्म दिया कि तुम घेरन किले पर गोलाबारी शुरू कर देना। पीछे से हम भी आते हैं।

सुलतान मुअज्जम जब कल्याणी के निकट पहुँचा तो उस समय किले में मीरजुमला और उसके कुछ नौकर से सरदार थे। दूसरे शाही अमीर उलायत खाँ, महाबत खाँ और नजावत खाँ किले से एक मील के अन्तर पर अपनी-अपनी छावनी डाले पड़े थे।

औरंगजेब की हिदायत के अनुसार मुअज्जम ने मीरजुमला को कहला भेजा कि या तो किला हमारे सुपुर्द करके हमारी खिदमत में हाजिर हो वरना लड़ो। मीरजुमला ने हँसकर कहा—"मैं बादशाह का नौकर हूँ, औरंगजेब को किला नहीं दे सकता—क्योंकि वह बादशाह बगावत खड़ी कर रहा है।" इतना कह, उस कूटनीतिज्ञ ने प्रकट में सेना को लड़ने की आज्ञा दे दी, परन्तु गुप्त रूप से अपने सेनापतियों को आदेश दिया कि हवा में गोले और बन्दूकें दागते रहो, ऊपर से चाहे जितनी धूमधाम दिखाओ, पर—औरंगजेब की फौज को नुकसान न पहुँचाओ।"

रातभर गोले-गोलियाँ चलती रहीं। किले से गोले सनसनाते हुए हवा में जाकर बीहड़ जंगल में गिरते रहे। दिन निकलते-निकलते गोलों का धड़ाका रोक दिया गया और मीरजुमला ने सुलतान मुअज्जम को आत्मसमर्पण कर दिया। वह अपने घोड़े से अफसरों और कुछ सिपाहियों के साथ शाहजादे के पास चला गया। किले पर शाहजादे का अधिकार हो गया। उसका प्रबन्धभार एक सेनानायक को दे शाहजादा मीरजुमला को औरंगजेब के पास ले चला। सूरज निकलने तक वह अद्भुत विजेता शाहजादा कल्याणी से बहुत दूर निकल गया था। मार्ग में उसने अपनी चपलता और विनय से मीरजुमला को खूब प्रसन्न कर लिया। उसकी औरंगजेब ने शाहजादा को पूरी पदवी पढ़ा दी थी।

ह प्रसन्न कर लिया। जितनी औरंगजेब ने शाहजादा को पूरी पट्टी
ा दी थी।

मार्ग में ही दोनों मिल गए। औरंगजेब अपनी समस्त सैन्य
ए धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। ज्योंही उसने मीरजुमला को
केवल घोड़े पर शाहजादा मुअज्जम के साथ आते देखा—वह घोड़ा
ड़ा कर बाबाजी, बाबाजी, कहता हुआ दोनों हाथ फैला कर
उधर ओर चला। उसके पास पहुँच कर वह घोड़े से उतर पड़ा।
नों मित्र बारंबार गले मिले। फिर एकान्त में बैठकर दोनों में बातें
ईं। औरंगजेब ने कहा—"मुझे बखूबी मालूम है कि आपने जो
कुछ मुहम्मद से इन्कार किया था वह बिलकुल दुरुस्त था और
साथ मेरे सब दूरन्देश अहले दरबार की भी यही राय है कि जब तक
आपके बाल-बच्चे दारा शिकोह के कब्जे में हैं, तब तक जाहिरा आपको
कोई ऐसी हरकत न करनी चाहिए जो कि हमारे हक में मुफीद
ाबत हो। लेकिन आप जैसे आकिल शख्स को यह बात समझाने
की कोई जरूरत नहीं कि दुनिया में हर मुश्किल काम की आखिर
एक तदबीर होती है। चुनांचे एक तदबीर मेरे जेहन में आई है,
जिससे बजाहिर आप हैरान होंगे। मगर जब उसके नतीजोंपर आप
र बखूबी गौर करेंगे तो बिलाशुबहा—आपके अहलोअयाल की
सलामती के लिये एक बहीनी जरिया हो जायगा। तदबीर यह है कि
आप बजाहिर कैद होना मंजूर कर लें। इससे तमाम जहान को मेरी
आपकी दुश्मनी का यकीन हो जायगा और इस हिकमत से हम लोग
अपनी तमाम मुराहिदों में कामयाब हो सकेंगे। क्योंकि किसी शख्स को
हरगिज ऐसा गुमान नहीं होगा कि आप जैसे रुतबे का कोई आदमी इस
तरह अपनी खुशी से कैद हो गया।" इतना कह कर औरंगजेब तीखी
नजरों से उसे देखने लगा। मीरजुमला ने कनखियों से इधर उधर
देखा। पीठ के पीछे सुलतान मुहम्मद और सुलतान मुअज्जम नंगी
तलवार लिए खड़े थे। यह देख कर मीरजुमला जोर से हँस पड़ा।

उसके हँसने का ठीक मतलब समझ कर औरंगजेब भी हँस पड़ा। मीरजुमला ने कहा—"शाहंशाहे आलम, यह तब तो मैं पहले ही से सोच कर निकला हूँ, और तो मेरी फौज का क्या होगा?"

औरंगजेब की आँखें चमकने लगीं। उसने धीरे से कहा—"उसे मैं जिस दशा से और जिस हैसियत से आप पसन्द करेंगे और मुनासिब समझेंगे—नौकर रख लूँगा।"

"बहुत खूब, मैंने अपने अफसरों को ताकीद कर दी है कि वे आपकी फौज में आपके कहते ही मिल जायँ।"

"शुक्रिया, और मुझे यह भी यकीन है कि आप जैसा कि मुझसे हमेशा वादा करते रहे हैं इस वक्त कुछ रुपये देने से इन्कार न करेंगे, क्योंकि इस वक्त मुझे रुपयों की अशद्दद जरूरत है, आपके इस रुपये और लश्कर से मैं अपनी किस्मत-आजमाई करूँगा।"

मीरजुमला ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"आप इत्मीनान रखिए, आपके लिए एक अच्छा खजाना मैं हमराह लाया हूँ।"

इस पर खुशी से दोनों हाथ मल कर औरंगजेब ने कहा—"तो बस, अब आप इजाजत दीजिए कि मैं आपको इसी वक्त दौलताबाद के किले में पहुँचा दूँ। वहाँ मेरा एक शाहजादा आप की खिदमत में रहेगा। इसके बाद हम दोनों इस मुहिम की दुरुस्ती की तदबीरें पर बाहम गौर और फिक्र कर सकेंगे। इस सूरत में हरगिज मेरे ख्याल और ख्वाब में नहीं आता कि दारा शिकोह के दिल में कोई खुबहा पैदा होगा और वह ऐसे शख्स के बाल-बच्चों के साथ बदसलूकी करेगा जो बजाहिर इस कदर दुश्मन हो।"

औरंगजेब ने अत्यन्त नम्रता और विनय से ये बातें कहीं और मीरजुमला ने उन्हें स्वीकार कर लिया। अब औरंगजेब ने एक क्षण की भी देर न लगाई। शाहजादा मुअज्जम के साथ मीरजुमला को दौलताबाद भेज, उसने तेजी से नहरवाली की ओर बाग मोड़ी और

दो पहर से प्रथम ही अपने प्रथम विजित दुर्ग पर अपना विद्रोही झंडा खड़ा कर दिया।

: १३ :

औरंगजेब की दूसरी चाल

मीरजुमला के पुराने अनुभवी सरदार के इस प्रकार अचानक वार कर किला खाली कर देने और कैद हो जाने की खबर सुनकर शाही फौज में हड़बड़ मच गई। सेनापति, सरदार सब सन्नाटे में रह गए। परन्तु जब किले पर औरंगजेब का विद्रोही झण्डा फहराते और लोगों को शाही सेना की ओर मुँह किए आग उगलने को तैयार देखा तो अमीर लोग किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए।

वे सब मिलकर सलाह-मशवरा करने लगे। इसी बीच बीजापुर से आई हुई मीरजुमला की फौज ने—एक बाँध कर किले को घेर लिया और उस पर जोर का आक्रमण कर दिया। शाही उमराव और सेनापति यह तमाशा देख कुछ भी अपना कर्तव्य निर्णय न कर सके।

अब औरंगजेब स्वयं किले की तरफ पर आकर खड़ा हो गया। उसने पुकार कर कहा—

"प्रधान सरदार कौन है?"

पाँच-छः सरदारों ने आगे बढ़कर संकेत किया।

औरंगजेब ने उनसे बात करने और उन्हीं के इच्छानुसार काम करने का उन्हें आश्वासन दिया।

फिर दोनों सेनाओं के बीच में उसने सरदारों से बातचीत की।

"अब आपलोग क्या चाहते हैं?"

"हमारे सरदार को छोड़ दीजिए।"

"मगर वे तो अपनी ही मंशा से कैद हुए हैं। यह तो एक अलग एक चाल है जो मेरी और उनकी सलाह से हुई है।" इसके बाद उसने सब सरदारों को भारी-भारी इनाम और कीमती खिलाये

दिए और बड़े-बड़े वादे किए। इसके बाद उसने कहा—'आप सब से मेरे सरदार हुए। आपकी सब फौज भी मेरी हुई। इस फौज के सिपाहियों को अबसे दुगुनी तनख्वाह मिलेगी, और तीन महीने की पेशगी तनख्वाह उन्हें आज ही दे दी जायगी।'

मीरजुमला की सेना और सरदार अब औरंगजेब की जय-जयकार करने लगे। अब इनसे निपट कर उसने शाही अमीरों को एक-एक पैगाम भेजा। उसमें कहा गया कि चूँकि बादशाह सलामत मर गए हैं आप लोगों को लाजिम है कि हमारी तरफदारी करें। वरना आपको सख्त की खिदमत बजानी पड़ेगी, जो काफिर और इस्लाम का दुश्मन है, आप जैसे बहादुरों और दीनदार अमीरों को एक काफिर के आगे सिर झुकाना सचमुच शर्म की बात है। इसके साथ ही औरंगजेब ने बहुत-सी बहुमूल्य भेंटें उनके लिए भेजीं।

महाबत खाँ ने औरंगजेब की कोई बात नहीं सुनी। उसने तुरन्त आगरे की ओर कूच बोल दिया। शेष सरदारों ने सलाह करके जवाब दिया—"जब तक हमें यह तसल्ली नहीं हो जाता कि बादशाह सलामत मर गए हैं हम आपसे नहीं मिल सकते। इसके लिए हम पचास दिन की मोहलत चाहते हैं। इस अरसे में हम अपने जासूस भेजकर दिल्ली और आगरा से सच्ची खबरें मँगा लेंगे और अगर खबर सच्ची हुई तो हम आपकी खिदमत बजा लायेंगे।"

यह सुलह पैगाम कुरान उठा कर बन्द हो गए तब औरंगजेब ने एक विश्वासी आदमी को बुरहानपुर के किलेदार मिरजा अबुतुरा के पास यह सन्देश देकर भेज दिया कि जो आदमी आगरे से दक्षिण को आ रहा हो उसे बिना तलाशी लिए आगे न बढ़ने दे और यदि उसके पास कोई ऐसा खत हो जिसमें बादशाह के जिन्दा रहने का हाल हो तो उसका सिर काट ले और खत को जला दे।

इधर यह सब काम हो ही रहे थे कि उसे सूचना मिली कि खुसरो का किला जीत लिया गया। अब वह प्रसन्न होता हुआ—और गुप्तरूप

से मीरजुमला से मिलकर आगे के मनसूबे बाँधने के लिए चुने हुए सवारों के साथ अन्धेरी रात में अम्बाबी के दुर्ग से निकल कर दौलता बाद को चल दिया।

: ३५ :

सूरत

सूरत उन दिनों मुगल साम्राज्य का सबसे सम्पन्न और बड़ा बन्दर था। योरोप और अरब, मक्का, बसरा, साइस चारोमण्डल, माला बार, मछली पट्टम, बङ्गाल, श्याम, चीन, कैरा, मालदेव, मलाक्का, बटेविया, मनैला आदि तथा समुद्र के उस पार के देशों से भारत का सम्पर्क सूरत ही के द्वारा था। यह सुन्दर नगर ताप्ती नदी के किनारे समुद्र से नौ फर्लांग के अन्तर पर था। यद्यपि इसके इर्द-गिर्द फसीलें न थीं पर यह अत्यन्त आबाद नगर था। ताप्ती का पाट समुद्र से कम न था और सम्पूर्ण नद छोटे-बड़े जहाजों से परिपूर्ण था। बड़े-बड़े जहाजों का माल गहरे समुद्र में उतार कर नावों द्वारा भेजा जाता था। ऐसी नावों का वहाँ तट पर जूम हजूम रहता था। सैकड़ों नावें माल से लदी-फदी इधर-से-उधर आ जा रही थीं। देश-विदेश के व्यापारियों से ताप्ती का किनारा भरा रहता था। वे माल नकद लेकर या बदले में माल देते-लेते रहते थे। सूरत में जहाज बनाने के भी अनेक कारखाने थे। इन कारखानों में बहुत बड़े-बड़े जहाज बनाए जाते थे, क्योंकि यहाँ जहाजों के योग्य लकड़ी बहुतायत से मिलती थी। सूरत के बने हुए जहाज विलायती जहाजों की अपेक्षा मजबूत थे सस्ते और आकार में बड़े होते थे। ये कारखाने अंग्रेजों के और पुर्तगेजों के थे। एक कारखाना हाल ही में फ्रान्सीसियों ने भी बनाया था। इस प्रकार यह नगर मारवाड़ियों, फ्रान्सीसियों, अंग्रेजों, डचों और अरबों का सम्पन्न निवासस्थान और व्यापार-केन्द्र बना हुआ था।

नगरनिवासी सभ्य और सुखहाल थे। संध्या काल में हिन्दू, पारसी स्त्री पुरुष उच्च व श्वेत परिधान धारण किए—वाटी के सुखद समीर का सेवन करते थे। स्त्रियाँ परदा नहीं करती थीं। पारसियों की यहाँ अच्छी आबादी थी।

अभी दोपहर नहीं हुआ था। एक जहाज हरमज द्वीप से अभी बहुत से यात्रियों और माल असबाब लेकर आया था। हरमज द्वीप फारस का भारी बन्दरगाह था—यहाँ सैकड़ों करोड़पति बनिये थे जो भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यापार करते थे। इस द्वीप में नमक की अनेक खानें थीं। जहाज पर अनेक अरबी, फारस निवासी व्यापारी बनाहगाव, मोती, सुगन्ध, मोम, लकड़ी, घोड़े, इबरत बहूँद, आदि वस्तु लाए थे।

इनके बदले में वे गुड़, चाँदी, बेदन का तेल, नारियल आदि लेना चाहते थे। जिनके व्यापारी जहाज पर पहुँच कर सौदे कर रहे थे।

जहाज से दो योरोपियन यात्री उतरे। एक प्रौढ़ आयु का पुरुष था जिसकी नीली तेज आँखें और भूरी छोटी-सी दाढ़ी उसकी दृढ़ता और बुद्धिमत्ता को प्रकट कर रही थीं। उसके साथ एक और युवक था, जो खूब बलिष्ठ और फुर्तीला नवयुवक था।

दोनों पुरुष इधर उधर देखते हुए बन्दरगाह से बाहर आए। दोनों योरोपियन नवागन्तुक थे। उन्होंने देखा—लोग खाल-खाल थूक रहे हैं। यह देख उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। प्रौढ़ पुरुष ने एक योरोपियन प्रवासी से जो वहीं रहता था पूछा—"यह क्या बात है मोसिए, ये देशी लोग खून क्यों थूक रहे हैं?"

वह बूढ़ा फ्रान्सीसी बहुत दिनों से सूरत में रहता था और वाटी तोपखाने का जाबक दारोगा था। उसने आगन्तुकों की ओर ध्यान से देखा, और कहा—"खून नहीं थूक रहे हैं मोसिए, ये लोग पान खा रहे हैं।"

"पान, यह क्या कोई दवा है? और इनके मुँह में कोई बीमारी है?"

"नहीं, नहीं, पान एक पत्ता है जिसे ये लोग चौक से चबाते हैं और पोर्चुगीज जिसे 'बीटल' कहते हैं। इससे होंठ सुर्ख हो जाते हैं, और मुँह से खुशबू आने लगती है, कुछ लोग पान के साथ तम्बाकू भी खाते हैं।"

"तम्बाकू खाते हैं? क्या वे पाइप नहीं पीते?"

"नहीं मोशिए, वे हुक्का पीते हैं। आप शायद हिन्दुस्तान में पहली ही बार आए हैं।"

"जी हाँ।"

"तभी, यह पान हिन्दुस्तान में सब लोग खाते हैं, आप देखेंगे कि हिन्दुस्तान के बादशाहों का पान खाने का बड़ा खर्चा है, और यह सूरत का बन्दरगाह जिसकी भारी आमदनी है, बादशाह ने बड़ी बेगम साहेब के पानदान के खर्च के लिए दे दिया है।"

"क्या पान खाने का खर्चा इतना ज्यादा होता है?"

"मोशिए, यह एक तहजीब की चीज है और आप चूँकि हिन्दुस्तान में नए आए हैं, मैं आपको नेक नसीहत दूँगा कि जब कोई हिन्दुस्तानी दोस्त आपको पान पेश करे तो कभी इन्कार न करना। वरना इसे वह ऐसी बेइज्जती और बदतमीजी समझेगा कि फिर कभी आपसे बात भी न करेगा।"

"यह तो बड़ी अजीब बात है।"

"बेशक, पान खाने की आदत हो जाती है, और हिन्दुस्तानी औरतों का श्रम ही सिर्फ पान खाना और गप्पें उड़ाना है। वे एक मिनिट भी बिना पान मुँह में दिए नहीं रह सकतीं।" इतना कह कर वह बूढ़ा रसिक फ्रान्सीसी हँसने लगा। कुछ ठहर कर उसने कहा—"आप पान खाना चाहें तो मैं पेश कर सकता हूँ, मेरा एक दोस्त पास ही है जिसकी पान की बढ़िया दूकान है।"

तरुण अफ्री ने उत्सुक होकर कहा—"जरूर, जरूर मोशिए, खिलाइए पान, यह हिन्दुस्तान की नई तहजीब सबसे पहिले हमें

सीखनी चाहिए।" उसकी उत्सुकता देख कर उसका साथी ओर से हँस पड़ा। और बूढ़ा फ़ान्सीसी लपक कर आगे बढ़ा और उसने दो बीड़ा पान बढ़िया बनाने का हुक्म अपने दोस्त दूकानदार को दिया। और जब मसाला लगाया तो उसने बाबियों को कत्था-चूना-सुपारी का भेद बताया। युवक ने दोनों बीड़े खा लिए। कदाचित् कुछ दूकानदार ने उसमें थोड़ा चर्रा इन बेवकूफ़ योरोपियनों को उल्लू बनाने के लिए डाल दिया। उसे खाते ही युवक का सिर घूमने लगा और वह मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा। उसके साथी ने तलवार खींचकर दूकानदार से कहा—"बदमाश! तूने मेरे साथी को ज़हर दे दिया है, शहर कोतवाल के पास अभी चल!"

हंगामा सुनकर बहुत लोग इकट्ठे हो गए। इस भीड़-भाड़ में एक मुग़ल सिपाही भी था। उसने मामले की हक़ीक़त जान कर कहा—"फ़िक्र न करो! यह अभी ठीक हुआ जाता है!" इतना कह कर उसने ज़रा-सा नमक युवक के मुँह में डाल दिया जिससे उसे होश आया। और उसने आँखें खोलीं।

इस पर बूढ़े फ़ान्सीसी ने सिर हिला कर कहा—"पहिले-पहल पान खा कर ऐसा ही होता है, लेकिन बाद में सब ठीक हो जाता है।"

अभी यह बातें हो ही रही थीं कि चार सिपाही आए और वे आगन्तुकों के सामान की राई रत्ती तलाशी लेने लगे। तलाशी लेने पर एक ने कहा—

"क्या तुम्हारे पास कोई बेशक़ीमती जवाहरात है?"

"जी नहीं!"

"कोई उम्दा मोती है?"

"जी नहीं, हम तो रोज़गार की तलाश में हिन्दुस्तान आए हैं। जौहरी नहीं हैं।" इस पर वे लोग बड़ी देर तक बहस-हुज्जत करते रहे। उनके सरदार ने कहा—"हमारे हाकिम साहेब का हुक्म है कि कोई क़ीमती जवाहरात भीतर हिन्दुस्तान में नहीं जाना चाहिए। बादशाह

-का सख्त हुक्म है कि ऐसे सब अवाहरात खरीद कर शाही खजाने में रख दिए जायँ।"

इन लोगों से अभी इन आगन्तुकों का पिंड छूटा ही था कि बहुत से लोग भागते-दौड़ते इधर-से उधर आने लगे। वे कह रहे थे—शहर में लूट हो रही है। शाहजादा मुराद को चोरों ने घिरे की घेर लिया है।

थोड़ी ही देर में बन्दूकों की आवाज और आदमियों की चीख-चिल्लाहट चारों ओर से आने लगी। फ्रेंच बूढ़े ने कहा—"मोंसिए, बेहतर हो आप लोग तुरन्त योरोपियनों की बस्ती में मेरे साथ भाग चलिए। वरना जान नहीं बचेगी। ये दुष्ट बिना सोचे-समझे योरोपियनों के सिर काट लेते हैं।"

इसके बाद तीनों व्यक्ति तलवारें नंगी करके तेजी से एक ओर को रवाना हो गए।

थोड़ी ही देर में लूट और आग का बाजार गर्म हो गया। जो योरोपियन लोग सूरत में रहते थे और शाही सेना में नौकर थे, वे शाही सेना के साथ भाग चले। उनमें से कुछ लुटेरों के साथ मिल कर शहर लूटने को चल दिए। इन तीनों नवागन्तुकों ने इस अवसर से लाभ उठाया और लूट बढ़-चढ़ कर हाथ मारे। यह बूढ़ा फ्रान्सीसी बड़ा धुरंधर निकला। वह सूरत की उन सब गली-कूचों से जानकार था, जहाँ धनी लोग रहते थे। वह कुछ लुटेरों को वहीं ले गया। वहाँ खूब लूट-पाट कर ये तीनों नवागन्तुक तुरन्त ही आगरे की राह चल पड़े। वहाँ इस समय बहुत लोग आ-जा रहे थे।

: ३५ :

जीनतुल-निसाँ

चैत का महीना था। दिन गर्म होते थे और रातें ठण्डी। औरंगजेब के शाही हरम में हलचल होने लगी थी। लौंडियाँ, बाँदियाँ और

के झोंके लेती—गिरती-पड़ती उठ अपने-अपने काम में लग रही थीं। शाहज़ादी ज़ीनतुल् निसाँ आलमानी बुज़ाके से अपना स्वर्णगात लपेटे हुक्म की मीठी झड़कियाँ दे रही थी। दो बाँदियाँ चुपचाप मोरछल लिए छपरखट के पास खड़ी मक्खियाँ उड़ा रही थीं, वे डर रही थीं कि कहीं ऐसा न हो कि कोई मक्खी उसे सता दे। मखमल का गद्दा और रेशम के तकियों में शाहज़ादी अपनी गोरी-गोरी बाँहों को बगल में दबाए कनियों की सारी उपमाओं को बेकार कर रही थी।

इसी समय शाहज़ादी की पुरानी विश्वासी बूढ़ी बाँदी नादिरा ने आकर धीरे से कहा—"अब-तक अभी तक शाहज़ादी सो रही हैं?"

शाहज़ादी के उनींदे प्राणों में आवाज़ गई। धीरे-धीरे आँखें खोलीं, अँगड़ाई ली, बाल सम्हालती उठी। बाँदियों ने कपड़े सम्हाल दिए। शाहज़ादी की नज़र सामने खड़ी नादिरा पर पड़ी। त्योरियों में बल पड़ गए—"अल्लामा दहर, चुड़ैल, नींद बर्बाद कर दी, किसी के दर्द को भी देखती है, ज़रा मक्खियाँ तक नहीं उड़ाई जातीं, मज़ा ही उड़ा, आज तेरे बल निकालूँगी।"

नादिरा ने बलैया ली, कहा—"बहुत तो सो हुज़ूर, मैं सदके, अब उठिए और दीनो-दुनिया की खबर लीजिए।"

"तो तुझे क्या? सोते हैं तो अपना ही नफ़ा खोते हैं।"

परन्तु नादिरा को जवाब देने का समय नहीं मिला। महलों में इधर-से-उधर सनसनाती बाँदियाँ, आया, मामी, हब्शा छुहू, धाई माँ, बलिहारी माँ, के तार बाँधती एक-एक करके जितनी इकट्ठी हो गईं, एक से बढ़ कर एक का तैयार, कुछ लौंडियाँ चाँदी की किश्तियों में विविध इत्र लेकर आईं और शाहज़ादी को इत्र से सराबोर करने लगीं। इतने में नाचनेवालियों का हुजूम आ गया। बाँदियों ने मसनद लगा दी और नाचनेवालियाँ अदा से नाचने लगीं। अब एक एक पर [illegible] ठठोलि[illegible] [illegible] गी। सबने बूढ़ी नादिरा को देखा तो उसे [illegible] बने [illegible] "अच्छी बुआ, तुम यहाँ क्यों आईं?"

दूसरी ने नखरे से कहा—"देखो तो जरी, तीन कलाकर बड़ुओं में आ मिली हैं।"

तीसरी ने कहा—"अब हम, उस पोरले मुँह में मिस्सी की बहार तो देखते ही बनती है।"

चौथी ने कहा—"हरगोरे तुम्हारी सूरत, कल में खाने को बैठी हो पर बिना नाच देखे चैन नहीं पड़ा।"

पाँचवीं ने कहा—"बुआ, ये तुम्हारे बाले-बुन्दे तो गजब ढा रहे हैं।"

छठी ने कहा—"तो चली क्यों मरती हो, उनके मियाँ ने पहनाए हैं। अपना-अपना शौक।"

शाहज़ादी ने यह चुहुल सुनी और हँस दी। उसने कहा—"अच्छा, हम गुस्ल करेंगे।" शाहज़ादी उठ खड़ी हुई। छम-छम करती सब कनिज़ें, तुर्किनियाँ, कल्माकनियाँ, उर्दूबेगनियाँ, अबीसीनियाँ और क़ाबाबरा पीछे-पीछे चलीं।

शाहज़ादी का वह जुलूस महल के हम्माम में पहुँचा। अनूपा हम्माम अठपहलू संगमर्मर का बना हुआ था, दीवारों पर रौशनदान थे जिनसे रौशनी आती थी, धूप नहीं आती थी। वह हम्माम गर्मियों में ठण्डा और सर्दियों में गर्म रहता था। बीच में एक बड़ा हौज़ था, जिसमें सुगन्धित जल भरा था, उसमें गुलाब के ताज़ा फूल तैर रहे थे। कनीज़ों ने शाहज़ादी की पोशाक उतारी। वे आपस में नोक-झोंक करने और शाहज़ादी के साथ जल-क्रीड़ा करने लगीं। जीवित सौन्दर्य वहाँ अपना सौरभ बखेरने लगा।

पता नहीं कब से वह गुलाब जल से लबालब हौज़ पड़ा है। वे शताब्दियों से हौज़ की गोद सूनी पड़ी है जहाँ ये अप्रतिम सौन्दर्य की प्रतिमाएँ केलि-क्रीड़ाएँ करती थीं। हाथ-मुँह धोने के ये हौज़, जो खिले कमल के समान एक बड़ी रकाबी के आकार के थे, जिनमें भरे निर्मल जल में नीचे की काँपती हुई पच्चीकारी और बुलबुली सुन्दरियों-

का कौंधता प्रतिबिम्ब परस्पर प्रतिस्पर्धा-सा करता दीख पड़ता था, अब भला गुलाबजल और इत्र तो उन होजों का कहाँ सुबहत्तर, कभी टूटी छतों से बर्सातो पानी बह आता है। फूल अब इनमें कौन डाले? पूल गर्द तक की सफाई नहीं होती। न जाने कहाँ से इधर उधर से सूखी पत्तियाँ और कूड़ा-कर्कट उड़कर ढेर हो गया है। संगमर्मर के वे जालदार उम्मदह तले भी अब काई से काले पड़ गए हैं। अब तो वे दीख वैसे उस रहमदल के कलेजे के बड़े-बड़े घाव हैं जो कभी न भरेंगे।

हौज से शाहजादी निकली। बाँदियों ने एक हल्की तनजेब से उसका शरीर ढँक दिया। तनजेब से छन-छन कर शाहजादी का यौवन झाँकने लगा। इसी समय तोशेखानेवालियाँ कमखाब का दुकचा लेकर आ उपस्थित हुईं। बाँदियों ने शाहजादी को पोशाक पहनाई। इत्र लगाया। बाल गूँथे, सिंगार किया। बाँदियाँ बड़ाऊ गहनों की भरी सिनिटयाँ लिए अदब से आ खड़ी हुईं। मनपसन्द जेवरात शाहजादी ने पहने। अब शाहजादी बारहदरी में आई। चाँदी का नक्काशीदार तख्त बिछा था, पीछे तकिया, आगे तीन सीढ़ियाँ, पायों में फूल-पत्ते। ऊपर कलकी तारा का तख्तपोश।

सामने बहिनियाँ, बुआनियाँ, फूफीजानियाँ बैठीं, बगल में हुँहलयी बाँदियाँ और अदबिनियाँ। मिठाई और मेवों के सजे खान पेश हुए। एक चाँदी की बड़ी भारी किश्ती में बड़ा-सा कलाबा, पाँच पानों का एक बीड़ा, हरी दूब, मिश्री के टुकड़े, चाँदी के छड़ते, ऊपर कमखाब का फरशीपोश, जिसमें कलाबत्तू की झालरें। बतौलिनी ने दस्तबस्ता अर्ज की—"हजरत तशरीफ लाए हैं।"

शाहजादी अदब से खड़ी हो गई। हजरत औरंगजेब आए। खुला आबनूस का रंग, पाँच हाथ का लंबा-तगड़ा शरीर, तीन मन की लाश, जैतूनी रंगी दाढ़ी, पान कचरते, होंठ कड़काते। नंगा बदन हजरत अलबद पर बैठे। उन्होंने पहिले हजरत अलमगीर, फिर बादशाह

आदि की मनाहीं दी। फिर किसी से कलावा निकाला। सुबहान अल्लाह-अल रहमान रहीम—कहकर उसमें गिरह दी। दूसरी गिरह में पान का बीड़ा बाँधा, तीसरी में हरी दूब और मिश्री की डली बाँधी चौथी में चाँदी का छल्ला बाँधा, पाँचवीं गिरह शाहजादी के सिर से छुआ कर उस कलावे में लगाई। होठों में बड़बड़ाए। दुआ दी और चल दिए। इन सब झंझटों से शाहजादी थक गई। घेरन मौलवार, सदावहार, नगीन, मानकुँवर, मीन कुँवर, सहेलियाँ और पाँव दाबने लगी।

शाहजादी ने मुँह बनाकर कहा—"हमारे सर में दर्द है।" बाँदियों के होश उड़ गए। वे दौड़ी शाही हकीम के पास। अम्मा-मानी-बुआ-कुहू सब इकट्ठी हो गईं—"हाय, हाय, किस कमबख्त ने हुजूर शाहजादी को दोष दिया।" अम्मा ने शाहजादी को देखकर गम्भीरता से कहा—'अरी दौड़ो कोई चन्दाग़ी के पाँच सेर की मिट्टी पूरे में बताओ। कई बाँदियाँ दौड़ी। कुहू ने कहा—'बताएँ लूँ मैं हजरत फ़ातिमा हजरत मुहम्मद के नाम की सौगात बोलती हूँ।'

शाहजादी खिलखिला कर हँस पड़ी। लौंडी बाँदियाँ—सब 'सुबहान अल्लाह' चिल्ला उठीं। शाहजादी ने कहा—अच्छी अम्मा, अब हम गुड़िया खेलेंगे।" बाँदियाँ दौड़ चलीं और शाहजादी की गुड़ियाँ उठा लाईं। छोटी-बड़ी अनेक, बरबफ़्त और बनाहगत से सजी थीं। शाहजादी गुड़िया खेलने लगी। एक ने कहा—"अब मैं वारी, हुजूर की इस छोटी गुड़िया की तो आज सालगिरह है।"

बस अब तो नाच मुजरा और मुबारकबादी की झड़ी लग गई। शाहजादी बहुत खुश हो गई। उसने अँगूठी, कंगन, माला, अशर्फ़ी, हुजूर, रुपए जो हाथ में आया बाँदियों पर फेंकना शुरू कर दिया। बाँदियाँ मालामाल होने लगीं।

उसी समय—नादिरा बीबी ने फिर कक्ष में प्रवेश किया। उसने क्रोध भरी नजर से इस दृश्य को देखा। लौंडियाँ उसे देख मुँह बनाने

लगीं। पर उसने उनकी परवा न की—वह सीधे शाहजादी के पास तक चली गई। उसने मुड़ कर सबको चले जाने का हुक्म दिया। अतएव सबका पूरा हो गया था। नादिरा बीबी को शाहजादी मानती है यह वे सब जानती थीं। वे सब भाग गईं। शाहजादी अकेली रह गई। अकेली होने पर उसने कहा—

"शाहजादी, आप गुड़िया खेल रही हैं और सल्तनत में बगावत की आग भड़कना चाहती है।"

शाहजादी ने अपनी गुड़िया को गोद में सुलाते हुए कहा—"तो मैं क्या करूँ?"

"हुजूर, शाहजादा जंग करने के लिए आगरे आ रहे हैं।"

"इससे क्या होगा? अब्बा का इस कदर परेशान होने का मकसद?"

"हुजूर शाहजादी, उनका जल्द आगरे आना निहायत जरूरी है।"

"इस सिरत की गर्मी में?"

"अभी गर्मी कहाँ है।"

"रात ही तो उबली है, दिन में मुई आग बरसती है, अब्बा सफर की जहमत बर्दाश्त कर सकेंगे?"

"क्यों नहीं, अगर वक्त पर उन्हें कब्जा करना है तो सब कुछ बर्दाश्त करना पड़ेगा। बगावत हुई तो जंग भी करनी पड़ेगी।"

"तौबा तौबा, जंग भी।"

"तब क्या शाहजादी समझती हैं—तख्ते शाही योंही मिल जायगा, आप जानती हैं कि शाहजादी रोशनआरा ने हजरत शाहजादा को बुलाया है।

"तो मैं क्या करूँ?"

"आप भी शाहजादी रोशनआरा को खत लिखें।"

"क्या उन्होंने खत लिखा है?"

"बेशक, हजरत शाहजादा को खत मिला है।"

"तो मैं भी ख़त लिखूँगी। दावात कलम लाओ और शाहज़ादी की ओर बुलाती लाओ।"

"बहुत ख़ूब, मगर याद रखिए शाहज़ादी, यदि हज़रत शाहज़ादा तख़्तनशीन हुए तो हुज़ूर का इक़बाल ही आगरे के रंगमहल में बुलंद रहेगा।"

"यह रहना ही चाहिए, तू दावात कलम ला—मैं अभी ख़त लिखूँगी।"

"नादिरा ने मुजरा किया और चली गई। शाहज़ादी फिर अपनी ख़ुशियों से खेलने लगी।

: ३६ :

कूच का नक़्क़ारा

अमीर मीरजुमला से सब सलाह-मशविरा कर के और मीरजुमला की ओर अपनी सम्मिलित सेना लेकर औरंगज़ेब ने एक क़दम भी नष्ट न कर गुजरात की ओर कूच बोल दिया।

मुराद को धन की बड़ी आवश्यकता थी। उसने अपने विश्वासी सोलह शाहज़ादों को ६ हज़ार सवार देकर सूरत पर आक्रमण करने को रवाना कर दिया। उस समय सूरत एक धनसम्पन्न नगर और बन्दरगाह था।

परन्तु मुराद ने सूरत पर आक्रमण करने से प्रथम ही इस भेद को खोल दिया और बड़ी-बड़ी डींगें मारीं। इसका यह परिणाम हुआ कि सूरत का किलेदार सावधान हो गया। इससे केवल यही नहीं—कि सूरत की लूट में अधिक धन मुराद के हाथ नहीं आया—सूरत का दुर्ग भी नहीं जीता गया। धूर्त औरंगज़ेब यह बख़ूबी जानता था कि बिना सूरत के किले को जीते हुए आगे आगरे की ओर बढ़ने से पीठ अरक्षित रहेगी। उसने कूच के प्रारम्भ ही में अपने दूतम्बाई मीरबाबा

को बहुत सी बातें समझा-बुझा कर तथा कुछ चुने हुए सवार देकर आगे मुराद के पास भेज दिया। उसने उसके द्वारा सूरत की फतह पर मुराद को बहुत सी मुबारकबादियाँ दीं तथा मीरजुमला के साथ जो अर्पणाही की गई थी और जो फौज-कतार हुए थे वह भी सब उसने कहला भेजे। सब उसने कहला भेजे। सब के साथ उसने एक खत भी मुराद को लिखा, जिसमें उसने लिखा था—"कि मैं एक बड़ी फौज की सरदारी में हूँ और दौलत भी मेरे पास बेशुमार है। बड़े-बड़े उमराव-दरबारे शाही से मेरी पक्की बातचीत हो चुकी है, और अब बुरहानपुर व आगरे की तरफ बढ़ने में मेरी तरफ से कुछ भी देर नहीं है। बस, आप से इल्तजा करता हूँ कि आप भी कूच में देर न करें और दोनों लश्करों को एक साथ मिल जाने के लिए कोई जगह तय करके मुझे जल्द खबर दें।"

सूरत की लूट में बहुत कम खजाना मिलने से मुराद बहुत निराश हो गया था। उसने जो आशा भरे सपने देखे थे, वे जाने लगे। परन्तु अब औरंगजेब का यह पत्र पढ़ कर और मीरबाबा की कुमक पाकर वह आशा और उत्साह से भर गया। जो धन सूरत की लूट से उसे मिला था—वह सब तो उन लुटेरे सिपाहियों को तनख्वाह बाँटने ही में खर्च हो गया था—जिन्हें वह उस मुहिम पर ले गया था। अब उसने इस पत्र से उत्साहित होकर—सूरत के दुर्ग पर घेरा डाल दिया और अब सरदारों की सहायता से, जो उसकी सेना में थे—दुर्ग की सीढ़ियों को सुरंग से उड़ा दिया। जिससे दुर्ग में भगदड़ फैल गई और दुर्ग का अधिपति उसकी शरण में आ गया। मीरबाबा ने भी उस वक्त बड़ी बहादुरी दिखाई। साथ ही उसने वहाँ के ही धनिकों से जबर्दस्ती ५ लाख रुपए वसूल कर लिए।

सूरत के दुर्ग को फतह कर मुराद को बहुत प्रसन्नता हुई। उसका हौसला बढ़ गया और उसका नाम भी प्रसिद्ध हो गया। सिपाही आ-आ कर उसकी सेना में भर्ती होने लगे। औरंगजेब के पत्र तो निरन्तर

आते ही रहते थे, जिनसे वह फूल कर कुप्पा होता जाता था। स्पष्ट था कि इन पत्रों में उसकी खूब खुशी-चापलूसी की जाती थी। अब उसने धूमधाम से मुरव्वतुद्दीन के नाम से अपने को बादशाह घोषित कर दिया।

लेकिन शाहबाज़ खाँ उसका सच्चा शुभचिन्तक था। वह औरङ्गज़ेब की धूर्तता से अच्छी तरह परिचित था। जब औरङ्गज़ेब मालवा तक आ पहुँचा और मालवा में छावनी डाल कर उसने मुराद को लिखा कि 'आपका सेवक यह औरङ्गज़ेब यहाँ मालवा में अपने लश्कर समेत आपके इस्तक़बाल को हाज़िर बैठा है। अब आप कब तशरीफ़ लाइए।' तो एक बार शाहबाज़ खाँ ने उसे फिर समझाया—

"मेरे आक़ा, मुझ पर यक़ीन कीजिए। चाहे कुछ हो जाय आप गुजरात को—बल्कि अहमदाबाद को मत छोड़िए। मैं आप को इस इलाक़े के सभी मज़बूत क़िलों का मालिक बना दूँगा और बेशुमार दौलत आपके क़दमों में ला रखूँगा।"

"इस पर मुराद ने हँस कर कहा—"मगर वे सब क्या तख़्ते देहली के बराबर होंगे?"

"हुज़ूर, उसकी उम्मीद न रखिए।"

"लेकिन मेरा भाई औरंगज़ेब मेरे लिए इस क़दर तिरछी मोल ले रहा है तब मुझे मुनासिब नहीं कि ढीला पड़ूँ, और बुज़दिल कहलाऊँ।"

"हुज़ूर, मेरे आक़ा, इस दग़ाबाज़ औरंगज़ेब के फेर में न पड़िए, इस पर ज़रा भी भरोसा मत कीजिए।"

मुराद ने अविश्वास की हँसी हँस कर इस सच्चे वीर और स्वामि भक्त सेवक से कहा—"अच्छा, मैं फ़ुर्सत में तुम्हारी दास्तान सुनूँगा, मेरे प्यारे शाहबाज़, बेशक तुम एक बहादुर सिपाही हो—मगर बादशाहों के मशीर होने लायक नहीं।"

इसी समय मुहम्मद अमीन और मुहम्मद लिहीकी ने आकर मुराद

को सलाम किया। ये दोनों भी औरंगजेब के भेजिए थे, और उसी के हुक्म से मुराद के पास रहते और हर समय उससे बादशाह की भाँति व्यवहार करते थे। इस कारण मूर्ख मुराद उन से बहुत खुश रहता था। उन्हें देखते ही मुराद ने हँस कर कहा—"खुश आमदन, कहिए लश्कर के क्या हालचाल हैं?"

"जहाँपनाह, तमाम लश्कर हर तरह खैरियत है, वह कूच के लिए जहाँपनाह के हुक्म का मुन्तज़र है।"

"लेकिन आप लोगों का क्या ख्याल है कि मुझे औरंगजेब पर यकीन नहीं करना चाहिए?"

मुहम्मद अमीन ने आश्चर्य का भाव चेहरे पर लाकर कहा—"आफ़रीन हुज़ूरेवाला, दुनिया में ऐसा भाई हो नहीं सकता।"

मुराद ने मुस्कुराकर कहा—"आप कुछ कह सकते हैं कि औरंगजेब का लश्कर कहाँ तक आ चुका है?"

इसपर मुहम्मद सिद्दीकी ने कहा—"खुदावन्द, सुनने में आया है वह मालवे में जहाँपनाह के हुक्म का इन्तज़ार कर रहे हैं।"

मुराद ने बादशाही शान से कहा—"बहुत खूब, तो अब हमें एक लमहा भी न खोना चाहिए और उनसे मिल जाना चाहिए। बस आज, रात ही को कूच बोल दिया जाय।"

शाहबाज खाँ क्रुद्ध दृष्टि से दोनों अमीरों को देखने लगा। उसकी कुछ भी परवाह न कर दोनों ने अदब से मुराद को कोर्निश की और हाथ बाँध कर कहा—"जो हुक्म जहाँपनाह।"

दोनों सरदार चले गए तो शाहबाज खाँ ने फिर कुछ कहना चाहा—परन्तु मुराद ने आराम करने का इरादा प्रकट किया।

उसी रात उसने अपना लश्कर लेकर मालवे की ओर कूच बोल दिया। मीरबाबा के हाथ धन्यवाद और प्रेम के संदेश भेजना भी वह न भूला और गुजरात से सीधा पहाड़ों और जंगलों की राह कूच-दर कूच करता वह मालवे पहुँचा।

जब दोनों भाइयों की सेना आमने-सामने हुई तो औरंगजेब ने दो कोस आगे बढ़ कर मुराद की अगवानी की। आगे बढ़ कर उसकी रकाब चूमी और विनम्र भाव से कहा—"जहाँपनाह, बादशाहत और सल्तनत की मुझे जरा भी इच्छा नहीं है। यह फौजकशी मैंने केवल इसलिए की है कि जिस तरह बन पड़े काफिर दारा से—जो मेरा और आप का जानी दुश्मन है, लड़-भिड़ कर आप को तख्ते सल्तनत पर—जो खाली पड़ा है, बिठा दूँ।"

औरंगजेब ने जब यह बात खुले आम सब सरदारों के समक्ष कही तो मुराद खुशी से फूल उठा। उसने औरंगजेब और सब सरदारों से बारंबार वादे करने प्रारम्भ किए। औरंगजेब जब जब मिलता—उसे हजरत—जहाँपनाह, आदि कह कर सम्बोधित करता और साधारण सेवक की भाँति अपने को प्रकट करता।

मुराद राज्य के लालच में ऐसा अन्धा हो गया कि इस कपटी भाई के आचरण पर उसे तनिक भी सन्देह न रहा। इस प्रकार दोनों सेनाएँ मिल कर बहुत बड़ी हो गईं और वे धीरे-धीरे उज्जैन की ओर बढ़ने लगीं।

आगरे में जब यह खबर पहुँची तो वहाँ चिन्ता और घबराहट का वातावरण छा गया—बुद्धिमान लोग कहने लगे कि औरंगजेब की बुद्धिमत्ता और मुराद की मूर्खता देखिए क्या रंग लाती है।

: ३७ :

गुस्लखाने का दरबार

बादशाह गुस्लखाने में तशरीफ रखते थे। सुनिश्चित सोमवारियों का धीमा प्रकाश हो रहा था। मन्त्रीवार खलील खाँ की उस दिन की चौकी थी और वह निहायत अदब से एक कोने में खड़ा था। जगह जगह चलिह गुर्जबरदार पहरा करते फिर रहे थे और आवश्यक आज्ञाएँ

जा रहे थे, कुछ लोग शाही मशालें आदि लिए खड़े थे। सिलसिले का दरबार था इसलिए और कोई वहाँ न था। बादशाह क्रोध से काँप रहे थे और जो लोग वहाँ थे वे भय से थर-थर काँप रहे थे, एक तो इशाअत्या, दूसरे कमज़ोर शरीर, तीसरे रोग, चौथे चारों तरफ़ विश्वास-घात अविश्वास ऐसी हालत में तमाम हिन्दुस्तान के बादशाह का विचलित हो जाना स्वाभाविक ही था।

थोड़ी ही देर में दारा ने आकर बन्दगी की। बादशाह ने मुँह फेर लिया। दारा भी गुस्से में भरा था। बादशाह की नाराज़ी की कुछ भी परवाह न कर वह सीधा तनकर खड़ा हो गया। कुछ देर सन्नाटा रहा। दारा ने कहा—"हुज़ूर ने मुझे किसलिए तलब किया है?"

बादशाह ने रुखाई से कहा—"सुलेमान शिकोह और मिर्ज़ा राजा जयसिंह भी आ जायँ तो कहूँ।"

इतने ही में नक़ीब ने राजा जयसिंह और शाहज़ादा सुलेमान के आने की सूचना दी। दोनों आदाब बजाकर अपने स्थानों पर खड़े हो गए। बादशाह ने मिर्ज़ा राजा जयसिंह की तरफ़ रुख करके कहा—"आपको मालूम है कि हमारे ख़ानिसामान बशीरहसैन ख़ाफ़ुल्ला ख़ाँ को किसी ने मरवा डाला। क्या आप उस खूनी का पता लगा सकते हैं?"

राजा साहब ने कोई जवाब नहीं दिया। वे सिर नीचा किए खड़े रहे। बादशाह ने फिर कहा—"आप जानते हैं वह एशिया भर में अद्वितीय आलिम था। सल्तनत का तमाम बोझ वह उठाए था। आज उसके बिना सल्तनत डगमगा रही है। यदि आप उस खूनी को जानते हैं तो बताइए वह चाहे जो हो हम उसे माफ़ न करेंगे। फिर वह खूनी चाहे हमारा बेटा ही क्यों न हो।" यह कह कर उसने लाल-लाल आँखें करके दारा की ओर देखा। दारा ने दृष्टि नहीं मिलाई। वह ज़मीन की तरफ़ देखता रहा।

बादशाह ने फिर दारा की ओर अग्निमय नेत्रों से घूरकर लरजती हुई ज़बान से कहा—

"तुम इसकी कुछ कैफियत दे सकते हो? कर्नल्मेमन। तुम इस वक्त सख्त के वारिस—बल्कि एक तौर पर मालिक हो। स्याह सफेद सब कुछ करने का तुम्हें अख्तियार है। तुम्हें सल्तनत की सब बातें मालूम होनी चाहिए। कैफियत दो, इतना बड़ा अमीर किस तरह मारा गया?"

दारा ने नीची नजर किए हुए ही कहा—

"क्या हुजूर कुछ मुझ पर शक करते हैं?"

"शक? तो क्या तुम इस खून के मुतल्लिक कुछ नहीं जानते?"

"हुजूर के पास मेरे खिलाफ क्या सुबूत है?"

"सुबूत! तुम मुझसे सुबूत माँगते हो? तुम्हारी यह जुर्रत। तमाम में यह चर्चा आम है कि तुमने यह खून किया है और तुम मुझसे सुबूत माँगते हो?"

दारा चुप मार होंठ काटता खड़ा रहा। फिर उसने काँपते हुए किन्तु दृढ़ स्वर में कहा—"खैर, तो अब हुजूर का ऐसा खयाल है तो मेरा जवाब यह है कि सल्तनत की बहबूदी के लिए जो कुछ किया गया वह दुरुस्त है।"

"तो तुम तस्लीम करते हो कि यह खून तुमने किया है?"

"अगर हुजूर यह तस्लीम करें कि बेगम शाइस्ता खाँ का खून हुजूर ने किया तो क्या भी बेशक इस खून को तस्लीम करेगा?"

यह सुनते ही शाहशाह तिलमिला उठे। वे एकदम तख्त से उछल पड़े। परन्तु तुरन्त ही वे घायल पशु की भाँति घिर गए। उन्होंने दोनों हाथों से आँखें ढाँप लीं। उनकी उँगलियों से आँसुओं की धारा बह चली। वे बड़ी देर तक बड़बड़ाते रहे, पर इससे जरा भी विचलित न होकर दारा ने कहा—"हुजूर कैफियत माँगते हैं तो सुनिए। मरहूम वजीर साहब की पठान बेगम—जिसे हुजूर बहुत अच्छी तरह जानते हैं और जो उस बदनसीब की किस्मत का सितारा बुलन्द करने का एक अच्छा जरिया रही, अपने बेटे को तख्ते तैमूरी देने के मन्सूबे गाँठ रही

थी, उसका यह दावा था कि उसके पेटे में शाही खून का असर है, मगर यह फर्माबर्दार तो उसे पठान ही समझता है।"

बादशाह बूढ़े शेर की तरह गरज उठा। उसने कहा—"खबरदार, याद रखो अभी तक बादशाह हम ही हैं।"

परन्तु दारा उद्दण्डता से कहता ही गया—"यकीनन हुजूर बादशाह हैं और जब हुजूर ने कैफियत तलब की है तो पूरी बात सुनिए हुजूर! हमारे मामू साहब शाइस्ता खाँ, जिनकी बेगम ..."

बादशाह एक दम तख्त से खड़े हो गए और पागल की तरह अपने बाल नोचने लगे। मिर्जा राजा ने इशारे से दारा को रोका और बादशाह को सम्हाल कर तख्त पर बैठाया।

तख्त पर बैठ कर बादशाह झींकने लगे। वे फूट-फूट कर रोने लगे। अपने पापों को स्मरण करके वे बहुत विकल हो उठे। मिर्जा राजा ने कहा—

"जहाँपनाह, यह वक्त घर में फूट डालने का नहीं है। हुजूर, तख्त पर इस वक्त मुसीबत की काली घटाएँ छाई हैं। सबको मिलकर उसे दूर करने का बन्दोबस्त करना चाहिए।"

बादशाह कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर बोले, "अफसोस, हमने जो सोचा था वह न हुआ। हमने चालीस साल बिना लड़ाई झगड़े के काटे। मुल्क में अमन-आमान रहा। लोग फले-फूले। मगर अब देखते हैं—तमाम मुल्क उजड़ जायगा। हमारा इतनी मेहनत से इकट्ठा किया खजाना लुट जायगा। यह सुगल तख्त अब धूल में मिल जायगा।"

बूढ़े बादशाह को अत्यन्त दुःखी देखकर सुलेमान शिकोह धीरे-धीरे आगे बढ़ा। वह बीस वर्ष का सुन्दर युवक था। वह उदार, सरल किन्तु जिद्दी था। बादशाह उसे बहुत प्यार करते थे। उसने बादशाह के निकट पहुँचकर धीरे से कहा—"दादा जान, इस कदर रंजीदा न हों, जो होना था हो गया। हुजूर, बंगाल से हुआ और दक्खन, गुजरात

से मुराद और औरंगजेब बढ़ते आ रहे हैं। हुजूर के जितने लड़ आते हैं उनकी ये लोग कुछ भी परवा नहीं करते। लाचकर सुलतान शुजा सेना पार कर चुके हैं, उनके साथ चालीस हजार सवार और बेहद माल आदमी हैं। साथ ही बेशुमार रसद और सामान है।"

यह सुनकर बादशाह उम्मीद में आकर सुलेमान का मुँह ताकने लगा। सुलेमान ने अदब से झुककर फिर कहा—"अगर, हुजूर का हुक्म हो तो मैं चाचा जान को आगे बढ़ने से रोक दूँ या उन्हें पकड़ कर हुजूर के रूबरू हाजिर करूँ।"

बादशाह ने मिर्जा राजा जयसिंह की तरफ प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

मिर्जा राजा ने कहा—"शाहजादे की दरख्वास्त मुनासिब है, जहाँपनाह!"

'तो' कुछ सोचते हुए बादशाह ने धीमे स्वर में कहा—"हम चाहते हैं कि शाहजादे के साथ आप भी जायँ, आप न सिर्फ वक्ते मुसीबत के पुराने सैरक्षाह हैं, मेरे पुराने दोस्त भी हैं। आपकी बहादुरी दुनिया में जाहिर है। हम चाहते हैं कि आप जैसे बने शुजा को वापस बंगाल लौटा दें।"

बादशाह की अपने प्रति इतनी उपेक्षा और अपना देश वापस जल उठा। उसने धीरे से कहा—"मुमकिन है राजा साहब बहादुर हों—मगर बजाहिर तो ये एक मीयानी चीज पड़ते हैं।"

बादशाह कुछ कह रहे थे इसलिए वे शायद इन शब्दों को न सुन सके। मगर मिर्जा राजा ने सुन लिया। सुनकर भी वे सह गए। उन्होंने बादशाह के पास झुककर कहा—"जहाँपनाह की जैसी मर्जी होगी वही होगा।"

"तो हम चाहते हैं कि आप कूच की तैयारी कर दें। दिलेर खाँ भी आपके साथ रहेंगे। शाहजादा सुलेमान को मैं आपके सुपुर्द करता हूँ।"

राजा ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया। वह खोखला-सा दरबार

बर्खास्त हुआ। दारा सबसे पहिले सलाम करके चल दिया, परन्तु मिर्जाराजा जय सिंह जब जाने लगे तो बादशाह ने उन्हें रुकने का इशारा किया। एकान्त होने पर उन्होंने कहा—

"आप सूबा से कह दीजिएगा कि शाही हुक्म के मुताबिक वापस चले जाना—सिर्फ तुम्हारा फ़र्ज़ ही नहीं बल्कि फ़ौज-हुकूमत और सल्तनत की रू से भी यह निहायत जरूरी है कि वह इस तौर पर अपना ज़ोर और ताकत न दिखाए। इसलिए, जब तक एक मुनासिब मौका इस काम के लिए न आ जाय यानी जबतक कि हमारी बीमारी शाहज़ादे ॥ साबित हो या मुराद बख्श और औरंगज़ेब की मुश्तरका फौजों का कोई नतीजा न मालूम हो जाय, ऐसी जल्दबाजी तुम्हारे लिए मस्लहत नहीं है।"

महाराज जय सिंह ने बादशाह को हर तरह इत्मीनान दिलाया कि ऐसा ही होगा और जहाँ तक होगा लड़ाई बचाई जायगी। सिर्फ शाहज़ादे को वापस ही लौटा दिया जायगा।

बादशाह ने सन्तुष्ट होकर कहा—"बस, यही हम चाहते हैं और साथ ही यह भी कि जल्द-से-जल्द यह काम करके—बिना फौज को बचाए या कमजोर किए आप आगरे लौट आवें ताकि आगे न मालूम कैसा मौका हो और कैसी जरूरत पड़े।"

राजा ने यह भी स्वीकार किया और फिर बन्दगी करके चले गए। बादशाह दुःखित और चिन्तित मन से भविष्य को सोचते हुए—वक्त से उधर ईरानी सौदियों के कन्धे का सहारा ले धीरे-धीरे खवाबगाह की ओर तशरीफ ले चले।

चाँदनी छिटक रही थी। सामने ताज चाँदी के समान चमक रहा था। बादशाह ने एक नजर उस पर डाली और अतीत की सुखद स्मृतियों में विभोर हो एक ठण्डी साँस खींची।

: ३८ :

औरंगजेब की कठिनाइयाँ

बीदर और कल्याणी के दुर्ग बीजापुर से छीन लेने के बाद विहाल्न के लिए आगरे की ओर प्रस्थान करने तक के पाँच मास औरंगजेब के, भारी कठिनाइयों और परेशानियों के थे। घटनाएँ तेजी से घट रही थीं, संकट अनेक थे। इन सब का सामना करते हुए अपने ध्येय पर आगे बढ़ना आसान न था। उसका भविष्य अन्धकारपूर्ण था और जिन संकटपूर्ण स्थितियों में वह पैदा हुआ था वे साधारण न थीं। परन्तु उसने धीरज और साहस से उन सब विपरीत परिस्थितियों का सामना किया और इस समय अपनी सेना को सुगठित करने में उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी।

अभी उसने बीजापुर पर विजय प्राप्त की ही थी, और वह सोच रहा था कि उस बड़ी सैन्य से कैसे काम उठाया जाय जो मीरजुमला आगरे से ले आया है। परन्तु शाही सिपहसालार उसका साथ देने में आनाकानी कर रहे थे। यद्यपि उसने आगरे से कोई समाचार दक्षिण में न आने पाये इसकी बड़ी-बड़ी पाबन्दियाँ और रोक-थाम लगा दी थी। फिर भी यह अफवाह फैल ही गई कि बादशाह बिन्दा है और उन्होंने दक्षिण की सेना को वापस बुलाया है। महाबत खाँ तो अपनी सेना लेकर आगरे चला ही दिया था—शेष अमीर विरोधी हो रहे थे। ऐसी दशा में उसने अपनी विलक्षण बुद्धि और असीम साहस करके मीरजुमला को कैद कर लिया और उसकी सारी सेना अधिकृत कर ली।

इन सारी परिस्थितियों का प्रभाव बीजापुर दरबार पर भी पड़ रहा था। बीजापुर को इस समय शिवाजी का सहारा मिल रहा था। औरंगजेब का दूतदल शिवाजी के पास से निष्फल मनोरथ होकर लौट

आया था—चतुर शिवाजी ने अपना अवसर ताक लिया था—औरङ्गजेब की स्थिति से लाभ उठा कर बीजापुर दरबार उन सन्धि की शर्तों का अब पालन ठीक-ठीक नहीं कर रहा था जो मीरजुमला और बीजापुर दरबार में हुई थी। निस्सन्देह मीरजुमला का कैद हो जाना भी इसका एक कारण था—जिसका वास्तविक स्वरूप कोई नहीं जानता था। अब तो इसके लिए एक ही राह थी कि वह सब ओर से ध्यान हटा कर, जो कुछ भी हाथ लगे उसी को लेकर केवल एक ही ध्येय पर अपना पूरा ध्यान केन्द्रित करे और वह ध्येय था आगरे पहुँच कर मुगल तख्त को अधिकृत करना। सो उसने अब सारा ध्यान इधर ही लगाया और अपनी सारी चालों और साधनों को आगरे को अधिकृत करने में लगा दिया।

दक्षिण से रवाना होने से प्रथम उसने बीदर और कल्याणी के किलों का निरीक्षण किया, वहाँ मजबूत थाने कायम किए। किलों की मरम्मत करा कर वहाँ की सामग्री और सेना को व्यवस्थित किया। इसी समय उस पर एक वज्रपात हुआ। उसकी बड़ी बेगम दिलरस बानू ने शाहजादा मुहम्मद अकबर को प्रसव किया और प्रसूति पीड़ा ही में उसका प्राणान्त भी हो गया। यह इस समय औरङ्गजेब के सिर पर एक विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा, पर उसने बड़े धैर्य से इस आपत्ति का सामना किया। वह तुरन्त औरङ्गाबाद पहुँचा और शान्तिपूर्वक बेगम की अन्त्येष्टि क्रिया अत्यन्त सम्मान और प्रतिष्ठा से की। उसने उसे 'रबिया उद्-दौरानी' अर्थात् आधुनिक पवित्रात्मा रबिया, नाम दिया और औरङ्गाबाद में उसे दफनाया, वहाँ बाद में उसका संगमरमर का मकबरा बनाया गया, जो दक्षिण का ताजमहल मशहूर हुआ। अभी उसे बहुत काम करने थे और अपनी प्यारी बेगम का मातम मनाने का उसे समय नहीं था। उसने सबसे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक काम यह किया कि सेना भेज कर नर्मदा पार करने के सब घाटों पर अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार दक्षिण के शाही हाकिमों और दारा का सम्बन्ध एकदम विच्छेद हो गया।

उसने यह तय कर लिया था कि जबतक शाहजहाँ की मृत्यु का निश्चय न हो जाय वह विद्रोह का झण्डा न उठावेगा। परन्तु जो घटनाएँ तेजी से घट रही थीं उन्होंने उसे इस निर्णय पर दृढ़ न रहने दिया। उसे दक्षिण से सम्बन्ध रखने वाली दारा की नीति ज्ञात हो चुकी थी। उसने यह भी सुना था कि मुराद को गुजरात की सूबेदारी से हटा कर बरार का सूबेदार बनाने का हुक्म जारी हो चुका है। इसका यह अर्थ स्पष्ट था कि बरार औरङ्गजेब से छीन कर और मुराद को देकर दोनों भाइयों में झगड़ा पैदा करा दिया जाय। उसे यह भी सूचनाएँ मिल चुकी थीं कि शाइस्ता खाँ को उसका सहायक समझा था—और अभी मालवे का शासक था, मालवे से वापस आगरे बुलाया गया है तथा ऐसे ही परवाने मीरजुमला और दक्षिण के अन्य उमरावों पर भी जारी किए गए हैं।

अब उसे स्पष्ट हो गया कि बादशाह बनने के लिए अन्तिम प्रयत्न करने का समय आ उपस्थित हुआ। उसके अधीन शाहस और कूट नीति का यह अद्भुत था कि उसने मीरजुमला को बनावटी झगड़ा करके दौलताबाद के किले में कैद कर लिया और बादशाह के नाम से उसकी सारी सेना और जायदाद जब्त कर ली। प्रकट उसने यही किया कि मीरजुमला दक्षिण के दोनों सुलतानों से मिल कर षड्यन्त्र रच रहा है। इस समय आगरे में नया वजीर आजम दारा ने चाकर खाँ को नियत किया था। उसने उसे लिख दिया कि बादशाह सलामत की बाबत अफवाहों को सुनकर वह बन्दा पिता के दर्शन करने आगरे आ रहा है। इसके अतिरिक्त बादशाह को भी एक अत्यन्त विनयपूर्ण पत्र लिखा। जिसका जिक्र पीछे हो चुका है।

अब उसने गोलकुण्डा के कुतुब शाह को कर का शेषांश तुरन्त अदा करने के पत्र लिखे और गोलकुण्डा स्थित मुगल राजदूत के साथ ठीक-ठीक व्यवहार रखा जाय ऐसी हिदायतें दी गईं। इसके बाद उसने बीजापुर की राजमाता बड़ी साहिबा को बहुत से उत्तम और

बहुमूल्य उपहार भेंट प्रेम और मैत्री भाव प्रकट किया और निवेदन कराया कि जो धन भेंट देने का वादा किया गया था—वह शीघ्र भेंट दिया जाय। साथ ही उसने राजधानी और मालवा के दरबारियों को अत्यन्त तानधानी से भिन्न-भिन्न आदेश भेजे। हकीकत तो यह थी कि आगरे दरबार में अब सभी सरदार—उसी को भारत का भावी सम्राट् मान चुके थे और प्रायः सभी ने उसे कुछ-न-कुछ सहायता देने का वचन दे रखा था।

नए सैनिक वह लगातार भर्ती कर रहा था, अनेक स्थानों पर गोला बारूद बनाने के लिए गन्धक, सीसा, शोरा खरीद कर एकत्र किया गया था। दक्षिण के सब किलों से बारूद, घोड़े और अन्य आवश्यक चीजें मँगा ली थीं और जब वह दक्षिण से कूच कर रहा था तब तीस हजार सवार उसकी रक्षा के साथ थे। तथा मीरजुमला का सुसज्जित तोपखाना भी था जिसमें अंग्रेज और फ्रान्सीसी तोपची नौकर थे। इतना ही नहीं—उसके पास अच्छे योग्य और विश्वासी अधिकारी भी काफी थे। उसने दक्षिण की सूबेदारी करते-करते ही योग्य कर्मचारियों का एक गुट बना लिया था। वे सब औरङ्गजेब को एक औलिया समझते—उस पर श्रद्धा करते और उसके लिए जान देने को तैयार थे।

इस प्रकार सब भाँति तैयार होकर औरङ्गजेब ने औरङ्गाबाद से कूच किया और कूच पर कूच करता हुआ बुरहानपुर आ पहुँचा।

: ३९ :

मुताशिब-फकीर

बुरहानपुर एक बहुत साधारण कस्बा था। यहाँ न कोई किला था न नगर की सुरक्षा थी। पर औरङ्गजेब बीच-बीच में औरङ्गाबाद से यहाँ आकर रहा करता था। यहाँ उसका एक आलीशान महल था।

और उसकी प्रधान बेगम दिलरस बानू प्रायः यहीं रहा करती थी। औरङ्गज़ेब बुरहानपुर को दक्षिण का द्वार समझता था और उसने यहाँ एक विश्वासी ओहदेदार रख छोड़ा था, जिसके अधीन एक छोटी सी फ़ौज भी थी। उसे इस बात की सख्त हिदायत थी कि उत्तर से दक्षिण आने वाले प्रत्येक व्यक्ति और उसके सामान की खूब सावधानी से जाँच की जाय और उसे सब बात की इत्तला मिलती रहे।

क़स्बे के चारचफेर में ही जो नदी थी उसका स्वच्छ जल नगर निवासियों को आसानी से उपलब्ध हो जाता था। बस्ती में पारसी और आरमीनियन सौदागर बहुत थे। यहाँ फलों की काफ़ी भरमार रहती थी और फ़सल में आम तो इतना होता था कि बाजार पट जाता था। इसके अतिरिक्त नीबू, मालटा, चकोतरा, अंगूर भी खूब होते थे। सब्ज़ी तरकारियों की यहाँ कमी न थी। जंगल में लाख़दार वृक्षों की कमी न थी। जंगल में हिरन, बारहसींगा, जंगली सूँड़, मोर, फ़ाख़्ता, कबूतर आदि शिकारों की भरमार थी। परन्तु चोर डाकुओं का भय भी बहुत था। इक्कादुक्का आदमियों का यात्रा करना संभव ही न था। ये लोग तीर कमान और भाले बर्छों से लैस शिकार की तलाश में घूमते ही रहते थे।

इनायत कूच करता हुआ औरङ्गज़ेब बुरहानपुर आ धमका। बुरहानपुर में उसने नदी के किनारे पर अपनी छावनी डाली और फ़ौज की पलटन उतारने लगा। परन्तु उसका असल विचार यह था कि मीरबाबा—मुराद के सच्चे समाचार ले आवे।

औरङ्गज़ेब स्वयं तो अपने को फ़क़ीर कहता तथा लश्कर में भी फ़क़ीर की भाँति रहता था। वह चटाई पर सोता, बहुत सादा भोजन करता तथा टोपियाँ सीता या कुरआन लिखा करता। जाहिरा बहुत से फ़क़ीर उसके पास आते रहते, वह उनकी खातिर करता और बड़ी आव भगत करता। पर सच पूछा जाय तो इनमें से बहुत से उसके जासूस होते थे और दूर-दूर की खबरें ला कर उसे देते रहते थे। जो

लोग इस भेद को नहीं जानते थे, वे उसे एक औलिया समझते, उसे दाता समझ बहुत से फकीर सैराब होने उसके पास दूर-दूर से आते।

उन दिनों फकीरों की सब जगह बड़ी आव-भगत होती थी। लोग उन्हें मनमानी भीख देते—उनकी इज्जत करते और उन्हें माल-मलीदा खिलाते थे। इन फकीरों में थोड़े ही सच्चे फकीर होते थे, अधिकतर मुस्टण्डे धूर्त ही होते थे। औरङ्गजेब जो स्वयं धूर्त था और बिना जरूरत कभी एक धेला किसी को नहीं देता था, भला इन मुस्टण्डों के चंगुल में क्यों फँसता। उसे अनेक बार इन फर्जी फकीरों की चालाकियों की सूचना मिल चुकी थी और उसने इस बार उन्हें सजा देने का पूरा इरादा कर लिया।

उसने आज्ञा की कि सब फकीरों को बुरहानपुर में इकट्ठा किया जाय और उनको मोजन, धन और नवीन वस्त्र प्रदान किए जायँ। यह आज्ञा सुनते ही दूर-दूर के फकीर इस अवसर से लाभ उठाने बुरहानपुर में आ जुटे। फकीरों का एक अच्छा-खासा मेला लग गया। हजारों की संख्या में फकीर आ गए। औरङ्गजेब ने उन्हें मोजन खिला कर आज्ञा दी कि उनके पुराने वस्त्र उतार लिए जायँ और नए वस्त्र उन्हें पहनाए जायँ। फकीरों को जब इस बात का पता चला तो वे बड़े घबराए और चिल्लाने लगे कि "नहीं, नहीं, हम इन्हीं वस्त्रों में मरेंगे। हम इन्हें नहीं उतारेंगे। ये वस्त्र बड़े पाक हैं।" पर इस धूर्त शाहजादे के सामने सब बकवास व्यर्थ थी। उन्हें ये पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र पहना दिए गए।

परन्तु जब इन पुराने वस्त्रों की तलाशी ली गई तो इन गुदड़ियों में न केवल बेशुमार अशर्फियाँ, अपितु बहुत से जवाहर भी सिले हुए मिले। इस मुफ्त के माल को पाकर औरङ्गजेब बहुत खुश हुआ।

इसी समय एक पोर्तुगीज व्यापारी ने औरङ्गजेब को एक अत्यन्त कीमती मोती दिखाया और औरङ्गजेब ने उन फकीरों के धन से वह मोती खरीदने का इरादा किया।

मीरजुमीर औरङ्गजेब का एक विद्वान् मित्र था। उससे औरङ्गजेब ने पूछा—'क्या मोती इतनी कीमत का है कि उसे इतनी अशर्फियों में खरीद लिया जाय।' इस पर मीरजुमीर ने आँखें नीची करके कहा—'यदि हुजूर, इससे बड़े-बड़े बहुत से मोती नहीं खरीदना चाहते तो इसे ही खरीद लीजिए, परन्तु मेरा तो यह ख्याल है कि आप इस धन से नए सिपाही भर्ती करें जिनकी बदौलत आप इससे भी उत्तम बहुत से मोती खरीद सकें।'

मित्र की इस बात से औरङ्गजेब खुश हो गया और मीरजुमीर की बात उसने गाँठ बाँध ली। दूसरे ही दिन से बुरहानपुर में औरङ्गजेब ने नई फौज भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। उसने अपने विश्वस्त अनुचरों से हँस कर कहा—'फकीरों की यह सैरगाह हिन्दुस्तान से कुफ्र उठाने में काम आएगी, यह अच्छा है।' औरङ्गजेब को इस प्रकार कहते सुन कर खुशामदियों ने उसे 'मुताखिब-ऊमीर' कह कर उसकी बड़ाई की।

: ४० :

अपनी अपनी डफली—अपना-अपना राग

बंगाल का सूबेदार—शाहजहाँ का दूसरा पुत्र शुजा एक बुद्धिमान पुरुष था। वह स्वभाव का विनम्र और सहृदय व्यक्ति था। पर वह आरामतलब और आलसी था। इसी से उसके शासन में सदा ढील-ढाल बनी रहती थी। सेना भी इसी कारण से उसकी सुगठित न थी। वह चाहता तो परिश्रम करके अपनी राज्यव्यवस्था और सेना को उत्तम बना सकता था। परन्तु दुर्भाग्य से वह कभी भी सावधान न रहता था।

शाहजहाँ की बीमारी की अतिशयोक्तिपूर्ण खबरें उसे बंगाल की स्वाधीन राजधानी राजमहल में मिलीं। उसने उसी समय अपने को

लोग इस भेद को नहीं जानते थे, वे उसे एक औलिया समझते, उसे दाता समझ बहुत से फकीर खैरात लेने उसके पास दूर-दूर से आते।

उन दिनों फकीरों की सब जगह बड़ी आव भगत होती थी। लोग उन्हें मनमानी भीख देते—उनकी इज्जत करते और उन्हें माल-मलीदा खिलाते थे। इन फकीरों में थोड़े ही सच्चे फकीर होते थे, अधिकतर मुस्टण्डे धूर्त ही होते थे। औरङ्गजेब जो स्वयं धूर्त था और बिना जरूरत कभी एक धेला किसी को नहीं देता था, भला इन मुस्टण्डों के चंगुल में क्यों फँसता। उसे अनेक बार इन फरेबी फकीरों की धोखा-धड़ियों की सूचना मिल चुकी थी और उसने इस बार उन्हें सजा देने का पूरा इरादा कर लिया।

उसने आज्ञा की कि सब फकीरों को बुरहानपुर में इकट्ठा किया जाय और उनको भोजन, धन और नवीन वस्त्र प्रदान किए जायँ। यह आज्ञा सुनते ही दूर-दूर के फकीर इस अवसर से लाभ उठाने बुरहानपुर में आ जुटे। फकीरों का एक अच्छा-खासा मेला लग गया। हजारों की संख्या में फकीर आ गए। औरङ्गजेब ने उन्हें भोजन खिला कर आज्ञा दी कि उनके पुराने वस्त्र उतार लिए जायँ और नए वस्त्र उन्हें पहनाए जायँ। फकीरों को जब इस बात का पता चला तो वे बड़े घबराए और चिल्लाने लगे कि "नहीं, नहीं, हम इन्हीं वस्त्रों में मरेंगे। हम इन्हें नहीं उतारेंगे। ये वस्त्र बड़े पाक हैं।" पर इस धूर्त शाहजादे के सामने सब बकवास व्यर्थ थी। उन्हें वे पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र पहना दिए गए।

परन्तु जब इन पुराने वस्त्रों की तलाशी ली गई तो इन गुदड़ियों में न केवल बेशुमार अशर्फियाँ, अपितु बहुत से जवाहर भी सिले हुए मिले। इस मुफ्त के माल को पाकर औरङ्गजेब बहुत खुश हुआ।

इसी समय एक पोर्चुगीज व्यापारी ने औरङ्गजेब को एक अत्यन्त कीमती मोती दिखाया और औरङ्गजेब ने उन फकीरों के धन से वह मोती खरीदने का इरादा किया।

रोशनमीर औरङ्गज़ेब का एक विश्वास्य मित्र था। उससे औरङ्गज़ेब ने पूछा—'क्या मोती इतनी कीमत का है कि उसे इतनी अशर्फ़ियों में ख़रीद लिया जाय।' इस पर रोशनमीर ने आँखें नीची करके कहा—'यदि हुज़ूर, इससे बड़े-बड़े बहुत से मोती नहीं ख़रीदना चाहते तो इसे ही ख़रीद लीजिए, परन्तु मेरा तो यह ख़याल है कि आप इस धन से नए सिपाही भर्ती करें जिनकी बदौलत आप इससे भी उत्तम बहुत से मोती ख़रीद सकें।'

मित्र की इस बात से औरङ्गज़ेब क्रुद्ध हो गया और रोशनमीर की बात उसने गाँठ बाँध ली। दूसरे ही दिन से बुरहानपुर में औरङ्गज़ेब ने नई फ़ौज भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। उसने अपने विश्वस्त अनुचरों से हँस कर कहा—'फ़क़ीरों की यह सैरत हिन्दुस्तान से कुफ़्र उठाने में काम आएगी, यह अच्छा है।' औरङ्गज़ेब को इस प्रकार करते सुन कर ख़ुशामदियों ने उसे 'मुताखिब-फ़क़ीर' कह कर उसकी बड़ाई की।

: ४० :

अपनी-अपनी डफ़ली—अपना-अपना राग

बंगाल का सूबेदार—शाहजहाँ का दूसरा पुत्र शुजा एक बुद्धिमान पुरुष था। वह स्वभाव का विनम्र और सहृदय व्यक्ति था। पर वह आरामतलब और आलसी था। इसी से उसके शासन में सदा दीन दशा बनी रहती थी। सेना भी इन्हीं कारणों से उसकी सुगठित न थी। वह चाहता तो परिश्रम करके अपनी राज्यव्यवस्था और सेना को उत्तम बना सकता था। परन्तु दुर्भाग्य से वह कभी भी सावधान न रहता था।

शाहजहाँ की बीमारी की अतिशयोक्तिपूर्ण ख़बरें उसे बंगाल की राजधानी राजमहल में मिलीं। उसने उसी समय अपने को

बादशाह घोषित कर दिया और अपने नाम पर उसने अबुलफ़ैज़ नासिरुद्दीन मुहम्मद, तीसरा तैमूर, दूसरा सिकन्दर शाहजहाँ ग़ाज़ी का नया ख़िताब धारण किया।

इसके बाद उसने चालीस हज़ार सवार और लगभग डेढ़ लाख पैदल लेकर बंगाल से कूच किया। रकाब पर पैर रखते हुए उसने कहा—"या तख़्त या तख़्ता!" शुजा बड़ी उमंग में था। उसके पास उमदा सेना तो थी ही जिसमें आलावर्दी के पुर्तगीज़ तोपची थे। साथ ही ख़ज़ाना भी बेशुमार था। यह दौलत उसने बंगाल, बिहार और उड़ीसा के ज़मींदारों-रईसों और नगरों को लूटकर जमा की थी, इसी इरादे से कि एक दिन मुझे अपने बाहुबल से दिल्ली का तख़्त जीत लेना पड़ेगा।

आगरे के दरबार में शुजा के अनेक बड़े-बड़े मित्र थे और इन मित्रों पर उसे पूरा भरोसा था। वे सब ईरानी थे और शिया धर्म माननेवाले थे। शुजा ने भी अपना धर्म शिया मशहूर कर दिया था, पर यह सिर्फ उसकी अपने इन दोस्तों को खुश करने की चाल थी। उसका पक्षपातपूर्ण बराबर राजधानी में इन अमीर दोस्तों से घिरा रहता था, उसे उन दोस्तों पर अपनी प्रबल सेना से भी ज़्यादा भरोसा था, परन्तु इस अपूर्वदर्शी को अपने दुश्मनों की कुछ भी चिन्ता न थी। दारा इस मामले में बड़ा चौकन्ना था। उसने उन सब अमीरों को अपनी नज़र में बाँधा लिया था जो दारा के पक्षपाती न थे। इस गुट के नेता वज़ीरदौला ताहुज़ा ख़ाँ को तो उसने मरवा ही डाला था, बाकी सब सरदारों को उसने मीरजुमला की धुन से बाँधकर दक्षिण की ओर धकेल दिया था। यह काम वास्तव में उसने बड़ी दूरदर्शिता का किया था। इन अमीरों में सलाबत ख़ाँ, महाबत ख़ाँ और आज़मत ख़ाँ पाँच-पाँच हज़ारी थे। साथ ही वे वीर भी थे। वे इस अवसर पर आगरे से बाहर नहीं जाना चाहते थे। क्योंकि वे जानते थे कि उन्हीं के भरोसे,

उन्हीं के बुलाने पर शुजा आ रहा है। पर वे विवश थे। फिर वे बहुत अच्छी तरह यह भी जानते थे कि मीरजुमला औरंगजेब का कट्टर मित्र और पक्षपाती है और यह कि हम दक्षिण नहीं जा रहे, काल के गाल में जा रहे हैं, उनके जासूसों ने उन्हें औरंगजेब की समस्त कूट-नीति से जानकार बना दिया था। परन्तु दारा ने बादशाह से उन्हें मीरजुमला के साथ भेजने की आज्ञा दिला दी और उन्हें जाना भी पड़ा। मीरजुमला इन सब भेदों को जानता था, यह प्रबन्ध देख वह मन-ही-मन खूब हँसा, उसने समझ लिया औरंगजेब का भाग्य अच्छा है कि उसका मुख्य बैरी देश बादशाह और दारा को साथ लाना उसे बनाकर और उसका शाही सेना और खजाने की मदद लेकर उसके पास आ रहा है और शुजा के हाथ-पैर ये सरदार उससे दूर और बेबस किये जा रहे हैं। उसने अपने पक्ष में इसी बात को दृष्टि में रखकर औरंगजेब को मुबारकबादी दी थी।

सुलेमान शिकोह साहसी और वीर एवं सुशिक्षित युवक था परन्तु वह राजनीति से निपट अनजान था। उसे लड़ने की बड़ी उमंग थी और वह इस युद्ध में बढ़-बढ़कर हाथ मारने, तथा विजय का सेहरा अपने माथे पर बाँधने को बहुत उतावला हो रहा था। क्योंकि उसके साथ मिर्जाराजा जय सिंह और प्रसिद्ध सेनापति दिलेर खाँ भी थे, जो बादशाह के बड़े भारी विश्वासी और राज्य के स्तम्भरूप थे। खास कर राजा जय सिंह की समस्त साम्राज्य में धाक थी। वे अस्सी हजार अश्वारोहियों के स्वामी थे। वे एक वीर अनुभवी और राजनीति विचक्षण योद्धा थे। उन्होंने बड़ी-बड़ी विजय प्राप्त की थी। परन्तु यहाँ तो हिन्दिया का राज्य था। मुगल राज्य में दुर्भाग्य से घर-घर राजनीति चलती थी। प्रथम तो बादशाह-शुजा का उतना विरोधी न था। फिर पिछले दिनों बंगीर साहबुद्दा को मरवा डालने तथा राज्य में मनमानी करने से दारा से उसका मन फिर गया था। इसके अतिरिक्त लोगों ने उसके कान यहाँ तक भर दिए थे कि दारा आपको विष देने का चिन्ह

में है, इसलिए उसके मन में शुजा को ही गद्दी देने की कभी-कभी इच्छा हो उठती थी। इसी से उसने मिर्जाराजा को गुप्त रीति से समझा दिया था कि वे शुजा से लड़ें नहीं—पीछे लौटा दें, और औरंग से समय की प्रतीक्षा करने को समझा दें।

परन्तु सुलेमान शिकोह दारा का पुत्र था। वह राजनीति से अनजान तो था ही, बादशाह के दृष्टिकोण से उसका दृष्टिकोण भी नहीं मिलता था। फिर उसे दारा ने गुप्त हिदायत भी की थी कि मिर्जाराजा चाहे कितनी भी लीपापोती करें, तुम शुजा को बिल्कुल ही पीस डालना। जिससे इस दुश्मन से हमेशा के लिए बेफिक्र हो जाऊँ। बढ़े चले जाना और उसकी तमाम फौज को चीर डालना। इस प्रकार से वह शाही सेना भिन्न भिन्न विचारों और इरादों के सरदारों के साथ जा रही थी। शाहजादा अनुभवशून्य होने पर भी स्वामी था। मिर्जाराजा और दिलेर खाँ अनुभवी और योग्य होते हुए भी अनुगत थे। उस समय की यही दूषित मुगल राजनीति और रणनीति थी।

यह तो सेनापतियों के भाव थे। सेना का हाल इससे भी बुरा था। उसे इस बात का कुछ भी पता न था कि उसे क्या करना चाहिए। सरदारों का हुक्म बजा लाना, लूट के मौके को ताकते रहना, उनका काम था। कोई जीते कोई हारे, उन्हें अपनी रंगरेलियों और तनख्वाह से मतलब। लड़ाई के वक्त जहाँ तक हो वे अपनी जान बचाने और जख्मी होने से बचने की ही कोशिश करते थे। यही उनका सैनिक धर्म था। अन्त में इस प्रकार की सेना-व्यवस्था और रणनीति का जो परिणाम होना था वही हुआ। इसीसे शाही सेना सब तरफ से हारती ही गई।

—:o:—

बहादुरपुर का युद्ध

दोनों सेनाएँ तेजी से बढ़ती हुई एक दूसरे के निकट होती चली जा रही थीं। इस कुछ के बीच में भी मिर्जाराजा निरन्तर शुजा को वापस लौट जाने की सलाह देते जाते थे। पर शुजा टक्कर लेने का इरादा कर चुका था और बिना राजा के पत्रों का जवाब दिए बढ़ा ही चला आता था। सुलेमान शिकोह भी पूरे जोश में था और उसने सेना को आज्ञा दे रखी थी कि ज्योंही दुश्मन की सेना दीखे—तुरन्त गोलाबारी शुरू कर दो। उसने सेना के अग्र भाग में अपना तोपखाना रख छोड़ा था। उसके प्रधान तोपची का नाम सुमताब खाँ था। वह एक दिलेर और बड़े जीवट का आदमी था। उसका निशाना बिल्कुल सच्चा पड़ता था। वह ठीक बहुधा शाहजादे के सामने डींग हाँकता था—"हन्ना अल्लाताला पहला ही गोला सुलतान शुजा के सीने पर तर करूँ तो बात है।" सुलतान इस बात से बहुत खुश होता था।

मिर्जा राजा और दिलेर खाँ उदासीन भाव से आगे बढ़ रहे थे।

शुजा को जासूसों द्वारा खबरें मिल रही थीं कि शाही सेना दिन दिन निकट हो रही है। अन्त में बनारस से पाँच मील उत्तर बहादुरपुर के निकट एक पहाड़ी पर उसने तोपें जमा दीं और शाही सेना से टक्कर लेने को कटिबद्ध हो गया।

दूसरे दिन सूर्योदय के साथ ही साथ दोनों सेनाओं ने एक दूसरे को आमने-सामने देखा। तुरन्त ही सुलेमान ने गोले बरसाने की आज्ञा दे दी। देखते-देखते वहाँ का वातावरण गर्जन-तर्जन और धुएँ से भर गया, परन्तु यह अन्धाधुन्धी की लड़ाई थी। वहाँ किसकी कितनी क्षति

हो रही है, यह कुछ जान ही न पड़ता था। सुलेमान घोड़े पर सवार हो बड़ी मुस्तैदी से तोपखाने का मुआइना करता तथा उन्हें उत्साहित करता दौड़ धूप कर रहा था। दोनों प्रसिद्ध सेनापति उदासीन भाव से इस अव्यवस्थित युद्ध को देख रहे थे। शाहजादे ने इस सम्बन्ध में उनकी कोई सम्मति तक नहीं ली थी।

महाराज जय सिंह ने दिलेर खाँ से सलाह करके आखिर दिलेर खाँ को शुजा के पास समझाने के लिए रवाना किया। गोलाबारी तो होती ही रही। सेनापति दिलेर खाँ केवल ५० सवार साथ लेकर रास्ता काट पीछे के भाग से शुजा के लश्कर में पहुँच गया। सूचना पाते ही शुजा ने सेनापति दिलेर खाँ को आदरपूर्वक अपने खीमे में बुला लिया। साधारण कुशलवार्ता के बाद दोनों में बातें प्रारम्भ हुईं। दिलेर खाँ ने कहा—"मैं हुजूर के सच्चे खैरख्वाह के रूप में हाजिर हुआ हूँ।"

"हमें आपका इत्मीनान है।"

"मुझे मिर्जा राजा जय सिंह जी ने आपकी खिदमत में भेजा है, मिर्जा राजा हुजूर के वैसे ही सेवक और खैरख्वाह हैं, जैसे तख्त के।"

"मिर्जा राजा की खैरख्वाही और खिदमत मैं जानता हूँ।"

"मैं तसलीम करता हूँ कि हुजूर उस शख्स से बदला लेने के इरादे से तशरीफ लाए हैं जिसने आपके वालिद को, जो हीनोदुनिया के मालिक और हिन्दुस्तान के शहनशाह हैं, मार डाला है।"

"बेशक, बेशक, और मैं उससे बिना बदला लिए न लौटूँगा।"

"मगर हुजूर को यह खबर बिल्कुल ग़लत मिली है, शहनशाह जिन्दा और बिल्कुल तन्दुरुस्त हैं, मैं आपको यकीन दिलाता हूँ।"

"यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई है।" शुजा जरा अटका—

इस पर तुरन्त ही दिलेर खाँ ने कहा—

"इसलिए शहनशाह की मन्शा है कि आप अपने सूबे को वापस तशरीफ ले जाँय, और इस मौके पर आपसे जो मुहब्बत और इज्जत बर्दाश्त के लिए दरसाई है, उससे बादशाह ने पटना का शहर आपको

इनायत किया है। इसमें कोई शक नहीं कि इस हालत में आपका इस तरह आना एक उमदा काम था और इससे हुक्मा की बदनामी और बदनसीबी जाहिर होती है, मगर इससे भी ज्यादा उमदा काम आपका वापस तशरीफ ले जाना होगा, जिससे आपके दुश्मन शाहजहाँ के काम आपके खिलाफ भर कर आपको बागी न मशहूर कर दें। आप अगर इस वक्त वापस तशरीफ ले जाएँगे तो मैं और मिर्जाराजा वादा करते हैं कि जब कभी जरूरत होगी, हम मदद के लिए हाजिर रहेंगे।"

सब बातें सुनकर हुक्मा कुछ देर सोचता रहा। फिर उसने धीरे से कहा—

"खाँ साहब, आपकी बात सुनकर मुझे बहुत तसल्ली हो गई—खासकर मैं राजा साहब की बड़ी इज्जत करता हूँ। मगर मेरे बंगाल से आने की वजह तमाम हिन्दुस्तान में जाहिर है। परन्तु अब, जब कि आप विश्वास दिलाते हैं कि मेरे वालिद बुजुर्गवार जिन्दा और तन्दुरुस्त हैं, मैं वापस जाने को तैयार हूँ—मगर चूँकि आप शाही नौकर हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि शाहजहाँ की इजाजत का खयाल करके आप अपना लश्कर पीछे हटा लें। मैं आपसे वादा करता हूँ कि मुझे आप सूबे निकलने के पेश्तर ही मैदान से दूर देखेंगे। ऐसा करने से लोग यह न कह सकेंगे कि हुक्मा हार कर भाग गया।"

शाहजादे की जिद समझकर दिलेर खाँ ने ऐसा ही करने का वचन दिया। तत्काल दोनों ओर से लड़ाई रोकने का संकेत कर दिया गया। लड़ाई रुक गई और दोनों ओर के सैनिक निराश होकर यह सोचने लगे कि देखें अब क्या होने वाला है।

मिर्जा राजा जय सिंह एक तजुर्बेकार सेनापति थे। उन्होंने जैसे ही दिलेर खाँ की बातें सुनीं तो हँसकर कहा—"शाहजादा साहब, इस बूढ़े राजपूत के साथ गहरी चाल चला चाहते हैं खाँ साहब, ये बंगेनन पीछे लौटती फौज पर सुबह हमला करेंगे।"

"मगर अब क्या किया जाय? मैं तो मंजूर कर आया हूँ।"

कुछ सोच कर राजा साहब ने कहा—

"आप गाड़ी, हाथी, लश्कर सबको एक पहर रात रहे सामान लाद कर कूच करने का हुक्म दे दें। मगर अपने अफसरों को पोशीदा तौर पर हुक्म दे दें कि वे लड़ाई के लिए बिल्कुल तैयार रहें और ज्योंही कूच के नक्कारे बजें—बजाय कूच करने के आगे बढ़ने के लिए चौकन्ने और मुस्तैद रहें।"

इस युद्ध की व्यूह रचना इस प्रकार की गई कि बीच में शाहजादा और दाहिने हाथ राजा साहब तथा बायें हाथ दिलेर खाँ रहे।

कूच की तैयारियों की सूचना शुजा के जासूसों ने शुजा को दे दी—और उसने भी चुपके-चुपके अपनी सेना को लड़ने के लिए तैयार रहने की आज्ञा दे दी।

अभी थोड़ा अन्धकार बाकी था, कि महाराज ने कूच का नक्कारा बजवा दिया। इसके बाद एक ऊँची जगह पर खड़े होकर वे शुजा की हरकतें देखने लगे। क्षण भर ही में उन्हें मालूम हो गया कि शुजा ने आक्रमण बोल दिया। बस फिर क्या था। मिर्जा राजा ने अपने राजपूत सरदारों को संकेत किया। शुजा ने अपनी आशा के विपरीत शत्रु को पूरी मुस्तैदी और व्यवस्था से जमकर लड़ने को सन्नद्ध पाया। सुलेमान ने भी इस अवसर पर अपने दिल के हौसले पूरे किए। खूब बहादुरी दिखाई। फलतः दोपहर से पहिले ही शाहजादे की सेना का व्यूह टूट गया और कुछ ही देर में उसके पैर उखड़ गए। तथा शाहजादा शुजा हाथी पर बैठकर बुरी तरह भाग खड़ा हुआ। बाद में आकर सुलेमान शिकोह ने आगे बढ़कर भागती हुई सेना को काटना शुरू कर दिया। शाहजादे का तोपखाना, हाथी, खीमें और बहुत-सा सामान लूट लिया गया। बहुत से सिपाही और सरदार कैदी भी बना लिए गए। जिनमें से चालीस प्रमुख चुन कर दारा के पास तुरन्त आगरे भेज दिए गए।

मिर्जा राजा चाहते तो शुजा को पकड़कर कैद भी कर सकते थे।

परन्तु उन्होंने उसे चला जाने दिया। वे जानते थे कि बादशाह उसे छोड़ देगा और फिर एक नया दुश्मन खड़ा हो जायगा। उन्होंने दिलेर खाँ को सब बातें समझा कर जल्द-से जल्द आगरे लौटने की तैयारी कर दी। परन्तु सुलेमान ने इस तजवीज़ को अस्वीकार कर दिया।

मिर्ज़ा राजा ने शाहज़ादे को समझा कर कहा—

"बेहतर है कि अब हम जल्द से-जल्द आगरे को लौट चलें, क्योंकि दरबार में बड़े-बड़े काम सोचने और करने को हैं, बंगाल के और मामलों को भी देखना है।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने उतावली से कहा—"उसकी फ़िक्र नहीं, उसके लिए मेरे वालिद नया लश्कर लेकर बरकन्दाज़ खाँ को भेज सकते हैं। हमें शुजा का पीछा करना और उसे गिरफ़्तार करके उसकी ताकत को हमेशा के लिए खाम कर देना बहुत ही ज़रूरी है।"

शाहज़ादे की यह ज़िद देख—मिर्ज़ाराजा चुप हो गए। शाही लश्कर आगे बढ़ा और बंगाल तक बढ़ा ही चला गया।

शुजा की भयभीत सेना स्थल मार्ग से पटने की ओर भागी और शुजा मार्ग पर से गोलाबारी करता हुआ नदी के मार्ग से पीछे हटा। मुंगेर में उसने लाशों और तोपखाने से साथ रास्ता रोक लिया। इस कारण सुलेमान को मुंगेर से पन्द्रह मील दक्षिण-पश्चिम में राजगढ़ में अटक जाना पड़ा। उसने अपने सेनापतियों से—मिर्ज़ा राजा और दिलेर खाँ से सलाह माँगी। इस पर उन्होंने स्पष्ट कह दिया—अब आपकी मर्ज़ी ठीक समझिए—वह कीजिए। सुलेमान को आगे बढ़ने की राह न मिली और वह वहीं छावनी डाल कर पड़ गया। अब वापसी पर भी उसे आक्रमण का भय था। उसे अब मिर्ज़ाराजा की नसीहत याद आ रही थी, परन्तु वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ पड़ा था। न आगे जा सकता था न पीछे लौट सकता था।

: ४२ :

दरबारे खिलवत

बादशाह को अब विश्वास हो गया कि चारों ओर से विनाश की घटाएँ घिरी आ रही हैं। कब वे बरस पड़ेंगी, इसका ठिकाना नहीं। उसे प्रत्येक व्यक्ति पर सन्देह और अविश्वास था और क्षण-क्षण पर उसे यह आशंका हो रही थी कि उसे कहीं कोई ज़हर न दे दे। वह बहुत कमज़ोर हो गया था और अब ऐसे रोग-समूहों ने उसे घेर लिया था कि जिनसे बचने का कोई रास्ता ही न था। दारा से भी अब वह उतना ही भय खाता था जितना अपने दूसरे पुत्रों से। दारा अन्धाधुन्ध फौजें भरती कर रहा था। ठठ के ठठ सैनिक नगर में धमाचौकड़ी मचाते फिर रहे थे। राजधानी में अन्धेरगर्दी मची हुई थी। भाँति भाँति की अफवाहें शहर में फैली थीं। इस समय जितनी सेना आगरे में एकत्र हुई थी, उतनी अब से प्रथम मुग़ल राज्य के इतिहास में कभी नहीं हुई थी। एक लाख सवार, बीस हज़ार पैदल, हाथी और नौकर, पनिहारे, मोची सब मिलकर चार लाख का लश्कर आगरे में एकत्र हो गया था। दारा ने सारा ख़ज़ाना अपने हाथ में ले लिया था। दरबार का अजब हाल था। जो दरबारी विद्यार्थी थे वे सुलेमान शिकोह के साथ चले गए थे। जो लोग रह गए थे उनका कोई भरोसा न था। बादशाह दुःख, निराशा और भय से काँप रहा था। ज़हर के डर से वह दवा भी नहीं खाता था। प्रतिक्षण नई ख़बरें उसे सुनने को मिल रही थीं। उसने सुना—सुलेमान शिकोह ने शुजा की फौज लूटकर कुल सामान और चालीस सेनानायकों को क़ैद करके आगरे भेजा था। दारा ने उन सब क़ैदियों के हाथ कटवा डाले थे। बादशाह यह सुनकर क्रोध से पागल हो रहा था। अब उसने सुना कि शाइस्ता

-र्थों को मालवे का सूबेदार था—वहाँ से उसे बाँध बुलाकर कैद कर लिया गया है, और मुहम्मद अमीन—जो मीरजुमला का बेटा था, उसे भी कैद कर लिया है और शीघ्र ही उनके क़त्ल का परवाना जारी होने वाला है। अब बादशाह से न रहा गया। उसने बूढ़े शेर की भाँति गरज कर कहा—अभी बादशाह हम ही हैं। उसने उसी बामारी की अवस्था में दरबारे लिज़बत का हुक्म दिया। आनन-फ़ानन दरबार की सब तैयारियाँ होने लगीं।

बादशाह अपने शाही कमरे के उस दरीचे में बैठा जो दरिया की तरफ़ था और सेना तथा सर्वसाधारण को सलाम करने का हुक्म दिया। खुले हुए दरबारी कमरे में हाथ बाँधे खड़े थे। दारा झरोखा तख़्त के नीचे बैठा तीखी निगाहों से बादशाह के दिली मनसूबों को भाँपने की कोशिश कर रहा था। परन्तु उसकी आँखों में दृढ़ता और निर्भय के भाव थे। नज़रों में गुस्सा भरा हुआ था। वह पिंजरे में बन्द घायल शेर की भाँति लाचार हो रहा था।

थोड़ी देर सन्नाटा रहा। अन्त में बादशाह ने धीमे स्वर से दारा को सम्बोधित करके कहा—"शहर के क्या हाल-चाल हैं?"

दारा ने निर्लोभ भाव से कहा—"शहर में तीन दिन से हड़ताल है, खाने-पीने की चीजें मिलनी भी दुश्वार हैं, लोग बहुत डर रहे हैं। सबको अपनी-अपनी जान के लाले पड़े हैं। लाहूरातों ने हुण्डी पर्चों का लेन-देन रोक दिया है।"

"तो क्या इन कम्बख़्तों ने यह समझ लिया है कि हम मर गए? अभी हम ज़िन्दा हैं।"

'हुज़ूर' की उम्र दराज़, मगर हरकारे शाही फ़रमान फिर लाते हैं, समझाया जाता है, मगर असर उलटा होता है।"

"आख़िर इसका सबब?"

"यही, औरंगज़ेब का डोला। जो माहरो तक आ पहुँचा है।

मगर हुज़ूर, मैं कहे देता हूँ कि मैं उसकी कुछ भी परवा नहीं करता, मैं उसे मच्छर की भाँति पीस डालूँगा।"

"तुम समझ नहीं सकते। मुराद की बर्बादी और औरंगज़ेब की बादशाही गज़ब ढा देगी। एक ऐसी आग भड़केगी कि कुहराम मच जायगा।" इतना कह कर बादशाह ने व्याकुल होकर दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—"या खुदा, हमने कभी यह नहीं सोचा था कि जीते जी हमें ये दिन देखने नसीब होंगे।" बादशाह का मुँह लटक गया।

दारा ने तैश में आकर कहा—"यह सब हुज़ूर की ही गलती का नतीजा है। हुज़ूर ही ने इस मुसीबत को न्योता दिया है। अगर आप मीरजुमला को फौज देकर दक्खन न भेजते तो औरंगज़ेब की आज यह ताब न होती। और, मैं मीरजुमला और उसके लड़के मुहम्मद अमीन से समझ लूँगा और शाइस्ता खाँ से भी, जो औरंगज़ेब का भेदिया है। मैं इन्हें कत्ल करा डालूँगा और इनके कबीले को कैद कर लूँगा और औरतों को बाज़ार में करतब कमाने के लिए मजबूर करूँगा। यह कह कर वह दाँत पीसने लगा और दारा ही दरबारी अदब भूल बैठा।

बादशाह ने अपनी पसराई हुई आँखें पुत्र पर डालीं। उसका पीला चेहरा सफेद हो गया। उसने कहा—"तुमने शाइस्ता खाँ को और मुहम्मद अमीन को कैद कर लिया है, इसके लिए हमारा हुक्म होगा और हमें इतना तक देने की ज़रूरत नहीं समझे। तुम जानते हो शाइस्ता खाँ शाही रिश्तेदार है, इज़्ज़तदार है और बेशुमार आदमी है और मुहम्मद अमीन भी उस आदमी का बेटा है जिसके ताकते बहुत है। बेटे, इतने उतावले न बनो। समझ से काम लो। सुलेमान शिकोह ने कुछ कोई भेजे थे?"

"जी हाँ।"

"और तुमने उन सबके हाथ कटवा डाले? पेड़ के लिए जान लेने वाले शिकारियों पर यह ज़ुल्म?"

"तुम्हें तम्बीह होनी जरूरी थी। जिससे लोग समझें कि तख्त के खिलाफ बगावत करने का नतीजा क्या होता है।"

"और तुमने अन्धाधुन्ध फौजें भरती करके शहर के लोगों को डरा दिया है। तुम बगावत को दावत दे रहे हो। दारा—मेरे बेटे, याद रक्खो कि तुम खतरे से खेल रहे हो। तुम्हें यह भी याद रखना चाहिए कि अभी बादशाह हमीं हैं। हम तुम्हें हुक्म देते हैं कि शाइस्ता खाँ और मुहम्मद अमीन को फौरन छोड़ दो और अपने अमीरों को कुछ कहो और इन्साफ और ईमानदारी को हाथ से न जाने दो।"

दारा ने होंठ काटे। उसने कुछ कहना चाहा—पर बादशाह ने तल्खी जबान से कहा—"खामोश! सुलेमान शिकोह को जल्द लौट आने का फर्मान भेज दो, याद रखो उसकी फौज की जल्द-से जल्द जरूरत पड़ेगी।"

इतना कह कर बादशाह ने दारा के जवाब की अपेक्षा नहीं की। उधर से उन्होंने मुँह फेर लिया और मारवाड़ के महाराज जसवन्त सिंह की ओर नजर उठाई। महाराज जसवन्त सिंह, राव सुजान सिंह हुम्बेला, अमर सिंह चन्द्रावत, राव रतन सिंह राठौर और राव राम सिंह सीसोदिया चुपचाप बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे।

बादशाह ने कहा—'महाराज जसवन्त सिंह, आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमने हमेशा आप के साथ भलाई की है और आपके भाई अमर सिंह के हक पर आपको मारवाड़ का राजा तसलीम किया। अब हम आप से उम्मीद करते हैं कि तख्त के लिए आप अपनी जिम्मेदारी का लिहाज रक्खेंगे।"

महाराज जसवन्त सिंह ने अपने साथियों की ओर छिपी नजर से देखा और कहा—"जहाँपनाह, आप हम राजपूतों को तख्त का सच्चा वफादार पाईये।"

बादशाह ने अन्य राजपूत सरदारों की ओर नजर उठाई। उसने कहा—

मगर हुज़ूर, मैं कहे देता हूँ कि मैं उसकी कुछ भी परवा नहीं करता, मैं उसे मच्छर की भाँति पीस डालूँगा।"

"तुम समझ नहीं सकते। मुराद की बर्बादी और औरङ्गज़ेब की चालाकी गज़ब ढा देगी। एक ऐसी आग भड़केगी कि कुहराम मच जायगा।" इतना कह कर बादशाह ने व्याकुल होकर दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—"या ख़ुदा, हमने कभी यह नहीं सोचा था कि जीते जी हमें ये दिन देखने नसीब होंगे।" बादशाह का मुँह लटक गया।

दारा ने बीच में आकर कहा—"यह सब हुज़ूर की ही ग़लती का नतीजा है। हुज़ूर ही ने इस मुसीबत को न्योता दिया है। अगर आप मीरजुमला को फ़ौज देकर दक्खन न भेजते तो औरङ्गज़ेब की आज यह ताब न होती। ख़ैर, मैं मीरजुमला और उसके लड़के मुहम्मद अमीन से समझ लूँगा और शाइस्ता ख़ाँ से भी, जो औरङ्गज़ेब का मोहरा है। मैं इन्हें क़त्ल करा डालूँगा और इनके कबीले को क़ैद कर लूँगा और औरतों को बाज़ार में कस्ब कमाने के लिए मजबूर करूँगा। वह क्रोध से दाँत पीसने लगा और सारा ही दरबारी अदब भूल बैठा।

बादशाह ने अपनी पथराई हुई आँखें पुत्र पर डालीं। उसका पीला चेहरा सफ़ेद हो गया। उसने कहा—"तुमने शाइस्ता ख़ाँ को और मुहम्मद अमीन को क़ैद कर लिया है, इसके लिए हमारा हुक्म लेने और हमें इत्तला तक देने की ज़रूरत नहीं समझी। तुम जानते हो शाइस्ता ख़ाँ शाही रिश्तेदार है, हुक्मतदार है और ओहदेदार आदमी है और मुहम्मद अमीन भी उस आदमी का बेटा है जिसकी ताक़तें बहुत हैं। बेटे, इतने उतावले न बनो। समझ से काम लो। सुलेमान शिकोह ने कुछ ख़बरें भेजी थीं?"

"जी हाँ।"

"और तुमने उन सबके हाथ कटवा डाले? पेट के लिए जान झोंकने वाले सिपाहियों पर यह ज़ुल्म?"

"उन्हें तम्बीह होनी जरूरी थी। जिससे लोग समझें कि तख्त के खिलाफ बगावत करने का नतीजा क्या होता है।"

"और तुमने अन्धाधुन्ध फौजें भरती करके शहर के लोगों को डरा दिया है। तुम बगावत को दावत दे रहे हो। दारा—मेरे बेटे, याद रक्खो कि तुम खतरे से खेल रहे हो। तुम्हें यह भी याद रखना चाहिए कि अभी बादशाह हमीं हैं। हम तुम्हें हुक्म देते हैं कि शाइस्ता खाँ और मुहम्मद अमीन को फौरन छोड़ दो और अपने अमीरों को खुश करो और इन्साफ और दयानतदारी का हाथ से न जाने दो।"

दारा ने होंठ काटे। उसने कुछ कहना चाहा—पर बादशाह ने सख्ती जबान से कहा—"खामोश! सुलेमान शिकोह को जल्द लौट आने का फर्मान भेज दो, याद रखो उसकी फौज की जल्द-से-जल्द जरूरत पड़ेगी।"

इतना कह कर बादशाह ने दारा के जवाब की अपेक्षा नहीं की। उधर से उन्होंने मुँह फेर लिया और मारवाड़ के महाराज जसवन्त सिंह की ओर नजर उठाई। महाराज जसवन्त सिंह, राव सुजान सिंह बुन्देला, अमर सिंह चन्द्रावत, राव रतन सिंह राठौर और राव राम सिंह सीसोदिया चुपचाप बादशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे।

बादशाह ने कहा—"महाराज जसवन्त सिंह, आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमने हमेशा आप के साथ भलाई की है और आपके भाई अमर सिंह के हक पर आपको मारवाड़ का राजा तसलीम किया। अब हम आप से उम्मीद करते हैं कि तख्त के लिए आप अपनी जिम्मेदारी का लिहाज रक्खेंगे।"

महाराज जसवन्त सिंह ने अपने साथियों की ओर छिपी नजर से देखा और कहा—"जहाँपनाह, आप हम राजपूतों को तख्त का सच्चा वफादार पाएँगे।"

बादशाह ने अन्य राजपूत सरदारों की ओर नजर उठाई। सबने कहा—

"हम जहाँपनाह और तख्त के सेवक हैं।"

"तो आप सब तलवार छू कर कौल हारिए।"

सबने तलवार की शपथ ली। इस पर बादशाह को तसल्ली हुई। उसने मन्द स्वर से कहा—"महाराज जसवन्त सिंह, हम इस वक्त आपके और आपके इन साथी राजपूत सरदारों के जिम्मे एक नाजुक और अहम काम सौंपते हैं। आपको मालूम है कि औरंगजेब दुरहान से दरिया पार कर चुका है और मुराद ने सूरत लूटकर बगावत का झंडा बुलन्द किया है। ये दोनों आगरे की तरफ बढ़े आ रहे हैं। दारा ने जंग की तैयारियाँ की हैं, लेकिन महाराज जसवन्त सिंह, अपना ही खून बहाना हमें पसन्द नहीं है। आप जाइए, औरंगजेब को रोकिए, मुराद को भी रोकिए। हमारा मकसद यह नहीं है कि आप उनसे लड़िए। मगर वे लोग शाही हुक्म को न मानकर अगर बढ़ते ही जाँय तो फिर आप फौज से काम ले सकते हैं। हमारा पुराना नमकख्वार अमीर कासिम खाँ आपकी मदद पर आपके हमराह मय एक उमदा लोस्कर के रहेगा।"

बादशाह ने अमीर कासिम खाँ की ओर देखा। उसने झुककर जमीन चूमी और कहा—"जहाँपनाह, गुलाम जान देकर भी तख्त की खिदमत करेगा।"

बादशाह सन्तुष्ट हुए। फिर उन्होंने मरे मरे से दारा से कहा—"जाओ बेटे, अपनी सरदारों को सुनाओ खबरें और हमारे के साथ विदा कर दो।"

दारा चुपचाप आदाब बजा कर चल दिया।

बादशाह कुछ देर चुपचाप सिर नीचा किए बैठे रहे, फिर उन्होंने कहा—"महाराज आप जानते हैं कि हम किस कदर विश्वासघातियों और नमकहरामों से घिर गए हैं। बेटे तख्त के भूखे, बेटियाँ अपनी मददगार, वजीर खुदगर्ज, और अमीर लालची और दगाबाज। अब हमें सिर्फ राजपूतों की ही भरोसा है जिनका खून मेरी नसों में है।"

इतना कह कर बादशाह ने दोनों हाथों से मुँह ढाँप लिया और बेहद्दाश से मसनद पर लुढ़क गए।

अदब भंग करके महाराज जसवन्त सिंह आगे बढ़े, उन्होंने सहारा देकर बादशाह को सचेत किया और विविध आश्वासन दे विदा हुए। दीनोदुनिया के बादशाह शाहजहाँ दुःख और निराशा में डूबे बैठे रहे।

: ४३ :

क्षिप्रा के तट पर

महाराज जसवन्त सिंह बहुत धीरे धीरे आगे बढ़े। जसवन्त सिंह की कमान में शाही सेना ने उज्जैन में पड़ाव डाला। औरङ्गजेब का क्या इरादा है, वह कहाँ तक आ पहुँचा है, उसकी सेना कैसी और कितनी है इस सम्बन्ध में इस राजपूत योद्धा को कुछ भी खबर न थी, न इसने इन बातों को जानने की चेष्टा ही की।

उज्जैन पहुँचकर उसने सुना—दोनों शाहज़ादे क्षिप्रा के उस पार छावनी डाले पड़े हैं और उनके साथ चालीस हज़ार सवार और उमदा तोपख़ाना भी है।

यह सुनते ही जसवन्त सिंह के हाथ-पाँव फूल गए। उसने उज्जैन के पन्द्रह मील दक्षिण-पश्चिम बरमत के मैदान में पड़ाव डाला। शाहज़ादों की सेना वहाँ से केवल एक ही कूच के अन्तर पर थी। जसवन्त सिंह को आशा थी कि शाही सेना की लड़ाई सुनकर वे विलकेस शाहज़ादे साथ खड़े होंगे और उसे कुछ भी न करना होगा। परन्तु अब उसे यह स्पष्ट दीख पड़ने लगा कि युद्ध अनिवार्य है। जसवन्त सिंह को बादशाह का यह आदेश था कि विलकुल विवश होकर ही शाहज़ादों से लड़ाई की जाय। इसलिए वह कुछ भी निश्चय न कर सकता था। परन्तु औरङ्गजेब एक दृढ़निश्चयी पुरुष था। शाही सेना में अनेक परस्पर विरोधी दल थे। राजपूतों की विभिन्न विभिन्न

शाखाओं के पृथक-पृथक दल थे। उनमें अपनी खानदानी वैरभाव की भावना ऐसी थी कि वे दल एक सेनापति की आधीनता में लड़ने को कभी तैयार न होते थे। सभी को अपनी-अपनी जाति और वंश का अभिमान था। यह तो हुआ राजपूती सैनिकों का भीतरी हाल। उधर राजपूत और मुग़ल सैनिक भी एक दूसरे को द्वेष और घृणा से देखते थे। हिन्दू और मुसलमान सैनिकों में भी मतैक्य न था, न सारी शाही फ़ौज ही एक सेनापति के अधीन थी। क़ासिम ख़ाँ को जसवन्त सिंह की सहायता करने का हुक्म था—उसके अधीन लड़ने का नहीं। इन सब बातों के अतिरिक्त अनेक मुसलमान अधिकारी गुप्त रूप से औरङ्गज़ेब से मिल गए थे। खासकर क़ासिम ख़ाँ और उसके साथियों ने तो विश्वासघात करने का पूरा ही इरादा कर लिया था। इसलिए इस युद्ध का पूरा भार राजपूत सेना ही पर पड़ता था।

दुर्भाग्य से महाराज जसवन्त सिंह अच्छे सेनानायक भी न थे। वे केवल एक वीर योद्धा थे। औरङ्गज़ेब जैसे विचक्षण पुरुष से उनकी बराबरी ही नहीं हो सकती थी। केवल यही नहीं कि उनकी योजनाएँ दोषपूर्ण थीं उन्हें सेना संचालन का भी अच्छा अनुभव न था और वे एक असहनशील, जल्दबाज़, अस्थिरमति और तनुकमिज़ाज सेना नायक थे।

सबसे भारी भूल उन्होंने यह की थी कि युद्धभूमि का चुनाव उन्होंने स्वयं नहीं किया था। एक छोटे से मैदान में उन्होंने धकेलकर सारी सेना को एकत्र कर लिया था। जहाँ उनके घुड़सवार न तो स्वतन्त्रता-पूर्वक अपना कौशल दिखा सकते थे न तीव्र गति से घूम कर शत्रु पर आक्रमण ही कर सकते थे। साथ ही जिन टुकड़ियों को सहायता की आवश्यकता थी उन्हें समय पर सहायता भी न दे सकते थे। इसी का यह परिणाम हुआ कि युद्ध आरम्भ होने के बाद वह अपनी सेना पर नियन्त्रण न रख सके। केवल एक छोटे से दल ही तक उनका संचालन रह गया।

दूसरी भूल उन्होंने यह की कि उन्होंने अपने तोपखाने की उपयोगिता का विचार ही नहीं किया। यह उनकी भयानक ग़लती थी। इसके विरुद्ध औरंगज़ेब की सेना में मँझे हुए फ्रान्सीसी और अंग्रेज तोपची थे। जिन्होंने ऐसी गोलाबारी की कि जसवन्त सिंह की सभी सेना की धज्जियाँ उड़ गईं। महाराज जसवन्त सिंह ने केवल तलवार से तोप का सामना करने का हास्यास्पद साहस किया था। इसका परिणाम वही होना था जो हुआ।

औरंगज़ेब की सेना का संगठन और तोपखाना श्रेष्ठ तो था ही, उसकी सैन्य संख्या भी शाही सेना के बराबर थी।

जसवन्त सिंह ने गर्मी ही से बराबर औरंगज़ेब के पास दूत-पर दूत भेजे थे, पर इनमें से एक भी लौट कर नहीं आ रहा था। यहाँ आकर उन्होंने देखा—दूत भेजना व्यर्थ है। उन्होंने कासिम खाँ से सम्मति माँगी। परन्तु वह विश्वासघाती प्रथम ही औरंगज़ेब से मिल चुका था। उसने कहा—"महाराज, आप को बादशाह का हुक्म मालूम ही है। अब हमें तो यही उचित है कि चुपचाप बैठकर देखें कि ये बिगड़े दिल शाहज़ादे क्या करते हैं। अलबत्ता हम इन्हें इस पार नदी न उतरने देंगे। शाहज़ादे यदि ऐसी कोशिश करेंगे तो मेरी तोपें उनकी धज्जियाँ उड़ा देंगी। आप इत्मीनान रखिए।"

गर्मी कड़ी पड़ने लगी थी अप्रेल का प्रारम्भ था। उज्जैन में क्षिप्रा नदी के किनारे उस पार एक पहाड़ की टेकड़ी पर औरंगज़ेब और मुराद की संयुक्त सेना ने डेरे डाले हुए थे। अभी उनकी सेना पूरी व्यवस्थित नहीं हो पाई थी। लम्बे पहाड़ी कूँच से थकी-माँदी सेना तितर बितर हो गई थी। औरंगज़ेब ने सब ओर से चौकन्ना हो सेना की व्यवस्था की। उसने मुराद को अत्यन्त निकटता से आँखों में रखने के लिए अपने पुत्र सुलतान मुहम्मद को नियुक्त किया था। इस पर भी वह स्वयं आकर उसके निकट रह कर और बारम्बार बहाँनाह

के नाम से पुकार कर तथा अनेक प्रकार से उसकी लल्लो-पत्तो करके उसे मरें पर चढ़ा रहा था।

अभी यह संयुक्त सैन्य पूरा विश्राम न कर पाई थी कि एक दिन सूर्योदय के साथ ही नदी के उस पार शाही लश्कर उसे दीख पड़ा। मुराद फ़ौरन घोड़े पर चढ़कर औरङ्गज़ेब के ख़ीमे पर आया। मुराद की आवाज़ सुनते ही औरङ्गज़ेब ने तपाक से बाहर निकल कर रकाब चूमी और आदर पूर्वक उसे ख़ीमे में ले जाकर ऊँची मसनद पर बैठाया। मुराद ने खुश होकर कहा—"आप देख रहे हैं कि अब जंग का वक्त आ गया। चलिए, दो-दो हाथ हो जाय और देखा जाय कि कौन कितने पानी में है।"

औरङ्गज़ेब ने मुस्कुराते हुए और हाथ मलते हुए कहा—"अभी नहीं, अभी नहीं, मगर वह वक्त भी अब आ ही गया है, जब वहाँ पनाह की बहादुरी के जौहर देखने को मिलेंगे। फ़िलहाल तो हमें चुपचाप ही पड़े रहना चाहिए।"

"चुपचाप पड़े रहने से हासिल?"

"हुज़ूर, आप देखते ही हैं कि हमारी फ़ौज थकी-माँदी और ख़स्ता हाल है। फिर तमाम फ़ौज अभी पहुँच भी नहीं पाई। उसने कड़ा पहाड़ी रास्ता पार किया है, इसके सिवा एक और भी मस्लहत है।"

"वह मस्लहत क्या है?"

मुराद का प्रश्न सुनकर औरंगज़ेब ने मुस्कुरा कर कहा—"शाही फ़ौज के कासिद इस अमर की चिट्ठी लेकर आए थे कि हज़रत बादशाह सलामत ज़िन्दा हैं और हमें अपने इलाकों को लौट जाना चाहिए। इन्हें मैंने क़त्ल करा डालना मुनासिब समझा। इसकी वजह यह थी कि यह महल दारा की कारस्तानी थी और चिट्ठियाँ जाली थीं। जसवन्त सिंह को मैं जानता हूँ। वह काबू में आने वाला नहीं। मगर कासिम खाँ ने हुज़ूर का खादिम होने का पक्का वादा किया है। उसने मेरी उस एक तरकीब पर भी अमल करने का इरादा ज़ाहिर कर दिया

है जो पोशीदा तौर पर मैंने उसे सुझाई है। दरहकीकत बात यह है कि इन बेवकूफ सिपहसालारों, को जो सिर्फ लड़ना या हुक्म बजा लाना ही जानते हैं, इस बात का ज्ञानो गुमान भी नहीं, कि हुजूर इतनी जल्द यहाँ आ पहुँचेंगे। उन्होंने तो यह मन्सूबे गाँठ रखे थे कि वे शिप्रा के इस पार जहाँ हमारे लोगें गड़े हैं, शाही छावनी डालकर हमारी नाके-बन्दी कर देंगे और हमें नदी पार करके आगे बढ़ने से कतई रोक देंगे—मगर बख्ते बुरा हमें आलिम खाँ के मेहिरों से महाराज जसवन्त सिंह का यह इरादा मालूम हो गया और मैंने जबल कूच बोल कर इस किनारे पर कब्जा कर लिया।"

"और यह पोशीदा तजवीज क्या है जिसे आप ने और आलिम खाँ ने अमल में लाने का इरादा किया है।" मुराद ने मालिखाना अन्दाज से पूछा। इसपर औरंगजेब ने उसके पास खिसक कर धीमे स्वर में कहा—"बहुत मामूली हुजूर और अभी आप उस तजवीज की करामात देखेंगे। मुझे सबसे ज्यादा डर इस बात का है कि कहीं राजा साहब नदी पार करके इधर हमारे लश्कर पर न आ पड़ें। ऐसा हुआ तो तबाही-ही-तबाही है, इस वक्त सिर्फ आपकी बहादुरी और बहादुरी के जौहर ही से बेड़ा पार हो सकता है।"

मुराद ने तैश में आकर कहा—"मैं तो कहता हूँ दुश्मन पर टूट पड़ो, और उसके टुकड़े टुकड़े कर डालो।"

औरंगजेब मुस्कुरा दिया। उसने मेहमरी नजर से मुराद की ओर देखकर कहा—"हरएक काम के तरीके हैं। हुजूर, मैंने जो बात सोची है वह अर्ज करता हूँ। यह देखिए इस पहाड़ी पर मैंने तोपखाना जमा दिया है। आप जानते ही हैं कि हमारे फ्रान्सीसी तोपची कैसे बहादुर और होशियार हैं। बस आप अपनी बहादुर फौज को लेकर दरिया अबूर कर डालिए। ठीक उस पहाड़ी के नीचे से। मैंने रातों-रात बाँध लिया है। दरिया में पानी बहुत कम है, मगर अबूर करना आसान न समझिए—दोनों किनारों पर बीहड़ चट्टानें हैं, मुहसवारों को और

भारी तोपों को बहुत दिक्कत होगी। खैर क्योंकि आप दरिया में घोड़ा डालेंगे हमारी फ्रेंच तोपें आग उगलने लगेंगी। आप देखते ही हैं कि वे बहुत ऊँची जगह पर हैं वह जगह भी यहाँ से पौन मील पर है। आप दुरवाप यहाँ तक दुश्मन की नजर बचाकर बंगल ही बंगल पहुँच सकते हैं—" यह कहकर औरंगजेब सुराद की ओर देखने लगा कि उसके चेहरे का भाव क्या है।

सुराद ने कहा—"मगर मैंने फ्रेंच तोपचियों से बात की थी—उनका कहना है कि सारी तोपखाना बहुत मजबूत है और हमारी बनिस्बत उनके पास गोला-बारूद भी बहुत ज्यादा है। हम दशहा-दशहा आध तोपें चला सकते हैं। इसके बाद जब हमारी तोपों का गोला बारूद खत्म हो जायगा और हमारी सिर्फ आधे से भी कम फौज किसी तरह उस पार पहुँच जायगी जिसमें तोपखाना तो बिल्कुल ही नहीं होगा—तो क्या दुश्मन हमारी धज्जियाँ नहीं उड़ा देगा?"

"जी नहीं हमारे फ्रेंच तोपचियों की मेरी यह पेशीदा तजवीज तो मालूम ही नहीं है।"

"मगर मैं यह जान लेना चाहता हूँ।"

"हुजूर, सारी तोपखाना फाजिल खाँ के हाथ में है, और वह आपका गुलाम है।"

"और राजा जसवन्त सिंह?"

"सब मुनिए पूरी हकीकत। मेरे हुक्म से तमाम सारी तोपखाने का गोला-बारूद दरिया की रेती में गाड़ दिया गया है। सिर्फ तीन चार फायर करने लायक ही तोपचियों को बाँटा गया है शुरू में क्योंकि दुश्मन की फौज दरिया पार करने की कोशिश करेगी, सारी फौज भी आप पर गोलाबारी करेगी, मगर बहुत आहिस्ता। क्योंकि मुझे मालूम हो चुका है कि इस फौज के अफसरों को जहाँ तक बने लड़ाई का मौका दबा जाये और हमलोगों को डरा-धमका कर वापस कर देने का ही हुक्म है। वे सिर्फ सिर पर आ पड़ने पर ही लड़ेंगे। मगर हम लड़ेंगे डट

कर और इस फौज को तहस-नहस कर डालेंगे। शिप्रा में पानी कम है। पाट भी ज्यादा नहीं है। शाही तोपखाना तीन-चार फैर करके खामोश हो जायगा और ज्योंही आप उस पार पहुँच कर तलवारें चमकायेंगे आलिम खाँ की फौज भाग खड़ी होगी। अब रह गए जसवन्त सिंह और उनके राजपूत—वे कुल आठ हजार हैं, मगर लोहे के आदमी हैं। उन्हीं पर हुजूर की जाँबाजी और बहादुरी का जौहर आजमाना है।"

मुराद ने तलवार खींचकर खूब जोश में कहा—"खुदा की कसम, जो एक भी काफिर शिप्रा पारकर मैदान से जा सके।"

"लेकिन हुजूर, वक्त का इन्तजार करना होगा।"

"कब तक?"

"बस तीन घड़ी रात बीतने तक।"

"अच्छा तो मैं अब चला।" वह अकड़ कर खड़ा हो गया।

औरंगजेब ने अदब से सिर झुका कर कहा—"खुदा हाफिज।"

मुराद घोड़े को एड़ देकर अपने डेरे की ओर दौड़ा और औरंगजेब बड़ी बड़ी हाथ मलता और तेजी से कदम बढ़ाता हुआ डेरे में टहलने लगा। फिर उसने तुरन्त कई बड़े तम्बुओं को देकर उन्हें इधर उधर दौड़ाया।

तीन घड़ी रात बीतते-बीतते औरंगजेब का तोपखाना गरज उठा। देखते ही देखते शिप्रा के दोनों किनारों पर आग ही आग चमक उठी।

: ४४ :

धरमत का युद्ध

तीज का चाँद आकाश में नीचे को झुक रहा था। तीन पहर रात बीत चुकी थी। ठण्डी हवा के झोंके सोती हुई दुनिया पर प्यार की थपकियाँ लगा रहे थे। शाही लश्कर चुपचाप मीठी नींद में मस्त था,

ती औरंगजेब के तोपचियों ने ऊँची पहाड़ी पर तोपों को फिर चढ़ा कर जसवन्त सिंह की सेना के मध्य भाग पर गोलों की मार करनी आरम्भ की।

अब शाही फौज एक सँकरे मार्ग पर सिकुड़ गई। इस मैदान के दोनों ओर गहरी खाइयाँ और दलदल थी। शाही फौज शीघ्रता से पलट भी न सकती थी। अब अपनी सेना के अग्रभाग को नष्ट होते और औरंगजेब को आगे बढ़ते देख जसवन्त सिंह की प्रधान सेना के दाएँ दल से राव सिंह शीशोदिया, सुजान सिंह बुन्देला, और अमर सिंह चन्द्रावत अपनी-अपनी सेना लेकर भाग खड़े हुए। इसी समय मुराद ने सेना लेकर जसवन्त सिंह के पड़ाव पर धावा बोल दिया। पड़ाव रणभूमि के निकट ही था। वहाँ का रक्षक देवी सिंह बुन्देला औरंगजेब से मिल गया। अब मुराद ने उतर कर राजपूतों के बाएँ दल पर जोरदार आक्रमण किया। थोड़ी ही देर में इस भाग का शाही सेनापति इफ्तार खाँ मारा गया और वह पक्ष टूट गया।

अब शाही सेना के दोनों ही पक्ष टूट गए। कासिम खाँ अभी तक दूर खड़ा अपनी सेना सहित तमाशा देख रहा था। अब जो औरंगजेब को उतने बढ़ते देखा—तो वह सेना समेत भाग खड़ा हुआ। अब जसवन्त सिंह की सेना को दाहिनी ओर से औरंगजेब, बाईं ओर से मुराद और सामने से तहव्वर खाँ ने दबोच लिया और राजपूत सेना को इस प्रकार घेर लिया जैसे साँप गेंहुली मार कर शिकार को घेर लेता है। वहाँ राजा जसवन्त सिंह के प्राणत्याग का समय आ उपस्थित हुआ। वे कई घाव खा चुके थे। अब वे समय देख वीरगति पाने को आगे बढ़े। पर उनके साथियों ने घोड़े की लगाम पकड़ ली और उन्हें तलवारों की छाँह में युद्धभूमि से विमुख कर आप मोड़ी। उन्होंने सीधे जोधपुर की राह ली और जब वे घावों से भरपूर, मूर्छा आए, और थकावट से चूर जोधपुर किले के द्वार पर पहुँचे, उनके साथ केवल पन्द्रह योद्धा थे।

महाराज जसवन्त सिंह के युद्धक्षेत्र त्यागने के बाद रतलाम के रतनसिंह राठौर शाही सेना के सेनापति बने। उनका अभिप्राय युद्ध को उलझाए रखना हो या जिससे कि भागने वालों का पीछा न किया जा सके। परन्तु शाही सेना में शीघ्र ही भगदड़ मच गई और रतन सिंह ने अपने शरीर पर असली घाव खाकर रणक्षेत्र में प्राण त्यागे।

भागती शाही सेना का किसी ने पीछा नहीं किया। विजयी राजपूतों ने शाही पड़ावों पर अधिकार कर लिया। हाथी घोड़े, तम्बू, हाथी, खजाना, सब इनके हाथ लगा। सैनिकों ने शाही फौज का सब सामान लूट लिया।

चरमत का यह युद्ध औरंगजेब के लिए एक शुभ शकुन हो गया। जसवन्त सिंह और कासिम खाँ के पीठ फेरते ही औरंगजेब की सेना ने जयनाद किया। औरंगजेब घोड़े से उतर पड़ा और वहीं रणभूमि में खून से लथपथ लाशों और तड़पते हुए घायलों के बीच घुटनों के बल बैठ कर उसने शुक्राने की नमाज पढ़ी। अपनी पहली विजय की स्मृति में औरंगजेब ने उस युद्धस्थली में एक तालाब बनवाने और बाग़ लगाने की आज्ञा दी। उसने वारगुजार मुराद को बधाइयाँ देते हुए कहा—"हजरत, फ़तह आपके कदमों में है। इसमें शक नहीं कि दारा की फौज में बीस हजार सिपाही ऐसे हैं जो पलक मारते हमारे झण्डे के नीचे आ जाएँगे।" मुराद गर्व और आनन्द से पागल हो गया। उसकी इच्छा थी कि वह बिना पलक मारे आगरे पर चढ़ दौड़े। परन्तु औरंगजेब ने कहा—"नहीं, नहीं, हमें यहीं मुकाम करना चाहिए जिससे हमारी फौज ताजा दम हो जाय, और लड़ाई की कमी पूरी हो। इसके अलावा जो ख़त हमने दिल्ली को लिखे हैं उनके जवाब भी आ जाँय और हमें मालूम हो जाय कि हमारी तजवीजें ठीक करार हो रही हैं। फिर हम धीरे-धीरे आगे बढ़ेंगे।"

: ४५ :

सफेद-डाकू

पाठक इन दोनों योरोपियन पादरियों को न भूले होंगे जिन्होंने सूरत में सूबेदार के फ्रान्सीसी तोपचियों में मिल कर सूरत की लूट में लूटपाट करके गहरा माल मारा था। चरमत की लड़ाई में भी ये सूबेदार के तोपखाने में नौकर थे। परन्तु अब इनका इरादा आगरे पहुँच कर बादशाह की कोई बढ़िया नौकरी करने का हुआ। इन्होंने शाही सेना के तोपचियों की अकर्मण्यता देखी थी और उनके संगी योरोपियन तोपचियों ने उनकी खूब खिल्ली उड़ाई थी। मालपक्का भी इनके पास काफी था। इसलिए इन्होंने इन विद्रोही शाहजादों का साथ छोड़ कर शाही नौकरी करने का निर्णय किया था।

चरमत की लड़ाई में हार कर जब शाही सेना भागी तो उसमें बहुत से भगोड़े, चोर, उठाईगीरे और डाकू भी थे—जो केवल लूट के माल में हाथ मारने के लालच में शाही सेना में नौकर हो गए थे। ये दोनों योरोपियन भी इन्हीं डाकू भगोड़ों में मिल गए और आगरे की राह चले।

गर्मी बहुत सख्त थी। जून का महीना था। आग बरस रही थी। ये योरोपियन उसके अभ्यस्त न थे। रास्ते में पानी का बहुत कष्ट था। मार्ग में दो तीन अंग्रेज भगोड़े इनके साथ और हो लिए थे। ये शाही तोपचियों में नौकरी करते थे। अभी राजधानी एक दो दिन का मार्ग रह गया था कि गर्मी की भयानकता से लू लग कर मोशिए क्लाड बेहोश हो कर गिर गया। उसका घोड़ा छटपटा कर मर गया। उसका पुत्र तो बेहिश बड़ा घबराया। वह सहयोगी अंग्रेजों की सहायता से उसे पास की एक सराय में ले आया।

यह एक बहुत बड़ी सराय थी। यह ईंटों और पत्थरों की बनी हुई थी। उसकी बनावट मजबूत—किले के माफिक थी। सराय का सहन बहुत बड़ा था। उसमें बहुत से छायादार पेड़ थे। खाने-पीने और आवश्यकता की चीजों की अनेक दूकानें थीं। सराय के सहन में यात्रियों के हाथी, घोड़े, पालकी, बहली, ऊँट आदि सैकड़ों की संख्या में एकत्रित थे। एक हजार से भी अधिक यात्री इस समय वहाँ उपस्थित थे जिनमें बहुत से चरमत की लड़ाई से भागे हुए मराठे थे। इन योरपियन यात्रियों ने उसी सराय में आकर आश्रय लिया। वे बीमार को सराय में ले आए।

परन्तु सराय का मालिक इन गोरे चोरों को खूब जानता था। वे लोग शराब पी कर सारी रात शोर मचाते—मार-पीट, गाली-गुफ्ता करते और अन्त में बिना पैसा दिए चल देते थे। अतः उसने इन पर तनिक भी दया न की और स्थान देने से इन्कार कर दिया। इस पर डेविड ने कहा—

"लेकिन हमारे साथ एक मरीज है।"

"तो मैं क्या करूँ? तुम देखते हो कि सब कोठरी-कमरे भर गए हैं। सब में इज्जतदार रईस और मनसबदार मुसाफिर ठहरे हैं। जगह ही नहीं है।"

"लेकिन हम भी इज्जतदार मुसाफिर हैं दोस्त।"

"पर जगह भी हो। बेहतर है तुम अगले पड़ाव तक चले जाओ, चार-पाँच कोस ही तो है।"

"हम जा नहीं सकते, हमारा एक घोड़ा मर गया है। और हमारा आदमी बेहोश है।"

"मेरे पास केवल एक कमरा है और उसका पेशगी किराया मुझे मिल चुका है।

"हम भी पेशगी देने को राजी हैं।"

"मगर उस रईस ने एक कमरे की तीन पेशगी दी है।"

"हम चार पताका देने को राजी हैं, यह लो।"

"ओह, तब तो उसे इन्कार ही करना पड़ेगा, और आप अपने साथी को ले जाइए—यहाँ आप को हकीम भी मिल सकता है। पर यह मूर्ख बड़ा लालची है। बिना दो पताका वेतनी लिए आयगा ही नहीं।"

डेविड ने उसे धन्यवाद दिया और दो पताका उसे और देकर कहा—"खुदा के लिए हकीम को जल्द बुलवा दो।"

तराय वाला बहुत खुश हो गया। पताका टेंट में खोंस वह एक ओर चला गया और इन योरोपियनों ने तराय की उस गन्दी कोठरी में—जिसे वह अमीरों के ठहरने का कमरा कहा रहा था—डेरा डाला।

हकीम बिल्कुल बाजारिया और बेतुका था। वह बड़ी भारी पगड़ी बाँधे और लम्बा कबाबा अंग पर डाले हुए था। रोगी की नब्ज पकड़ कर वह बड़ी देर तक अरबी फारसी में कुछ बड़बड़ाता रहा—फिर उसने एक दवा रोगी को खिलाई और इत्मीनान से कहा कि कुछ देर तक इन्शा अल्ला-ताला वह ठीक हो जायगा।

पर हकीम के जाते ही दवा के असर से रोगी को दस्त लगने लगे। डेविड ने घबरा कर हकीम से बुलवाया कि अब क्या करें, हकीम ने कहा—सब बीमारी निकल रही है। फिक्र न करो। कुछ देर तक सब ठीक-ठीक हो जायगा।

लाचार बेचारा डेविड बैठा रहा। शाम को तराय के अफसर ने तराय के सब फाटक बन्द कर लिए और सिपाहियों ने पुकार कर आवाज लगाई कि सब लोग अपना-अपना सामान देख सम्हाल लें—और होशियार हो जाँय। इन योरोपियन बाशिंदों ने रात काटने का प्रबन्ध किया। परन्तु अभी आधी रात भी नहीं हुई थी कि रोगी मर गया। अब तो डेविड बड़ा घबराया। उसके साथी ब्रेंडेल भी एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे और सुबह दिन निकलने से प्रथम ही बेचारे डेविड को अकेला छोड़ कर चल खड़े हुए।

परंतु फाटक खोलने से पहिले सिपाहियों ने फिर आवाज लगाई—कि फाटक खोला जा रहा है। अपना-अपना सामान सम्हाल लेना। डेविड ने देखा तो उसका बहुत सा सामान उसके ये अमेरिक सहयात्री ले गए थे। उसने दौड़ कर सराय के अफसर से कहा। अमेरिक अभी सराय के फाटक ही पर थे—पकड़ लिए गए और रस्सियों से बाँध कर सहन में जा खड़े किए गए। सराय के अफसर ने शहर के हाकिम को इत्तला दी। हाकिम सिपाहियों का एक आधा दस्ता लेकर सराय में जा पहुँचा।

अभी डेविड अपने साथी को दफ्न करने की खटपट ही में पड़ा था, कि हाकिम के सिपाहियों ने उसका सब माल असबाब उठा कर उस पर सरकारी सील-मुहर करना शुरू कर दिया। डेविड ने घबरा कर कहा—'इसके क्या माने?'

"माने क्या? सब माल बादशाह सलामत का।"

"यह कैसे?"

"कानून है। जो आदमी लावारिस मर जाता है—उसके माल-असबाब का मालिक बादशाह होता है।"

"लेकिन इस मरे हुए का वारिस तो मैं हूँ।"

"यह काजी के सामने साबित करो।"

"फिर, यह सारा सामान केवल मोरिया का ही नहीं है। मेरा भी है।"

"यह भी काजी के सामने साबित करना पड़ेगा।"

"लेकिन भाई, हमें अभी लाश का भी तो इन्तजाम करना है।"

"लाश पर तो हमने सील-मुहर नहीं लगाई है।"

इतना कह कर हाकिम हँसता हुआ चला गया और सिपाहियों ने उनका सारा माल उठा कर सराय की एक कोठरी में भर दिया और ताला लगा कर उस पर सील-मुहर लगा दी, और चल दिए। यह देख रस्सियों से बँधे वे अमेरिक चोर खिलखिला कर हँसने लगे।

बेचारा डेविड परेशान और हक्का-बक्का खड़ा रह गया। अब न तो उसे कोई तसल्ली देने वाला था—न मददगार। उसने किसी तरह खाँसी को मिट्टी दी और अपने सामान की चिन्ता में दौड़-धूप करने लगा। वह कभी काज़ी के पास जाता, कभी अफ़सर के। कभी किसी की खुशामद करता, कभी किसी की।

वे चोर अंग्रेज भी अफ़सर की मुट्ठी गर्म करने से छूट गए। और उसी वक्त कहीं चले गए। इस घटना के तीसरे ही दिन वे दोनों अंग्रेज एक और अंग्रेज तोपची को लेकर सराय में आए। उनके साथ वह हाकिम और उसके सिपाही थे। आकर उन्होंने डेविड से साहेब सलामत की, और हँस हँस कर बातें करने लगे। इस समय वह देशी लिबास पहने हुए थे। डेविड ने पूछा—"अब आप के यहाँ आने का क्या मतलब है?"

"हम लोग अपने मृत रिश्तेदार का माल असबाब लेने आए हैं।"

"वह तुम्हारा रिश्तेदार कब था?"

"लेकिन तुम कौन हो?"

"मैं मोरिशिए का वारिस हूँ।"

"पानी लड़के," वह अंग्रेज मुँह चिढ़ा कर हँसने लगा।

डेविड ने कहा—"क्या तुम्हारे पास कोई लिखित सबूत है?"

"तुम क्या काज़ी हो कि तुम्हें सबूत दिखाएँ।" उन्होंने उसकी तरफ़ से मुँह फेर लिया और हाकिम ने सब सामान उनके हवाले कर दिया।

"लेकिन मैं अपना माल इतनी आसानी से तुम्हें नहीं ले जाने दूँगा।" यह कह कर डेविड ने पिस्तौल निकाल ली। इस पर हाकिम ने कहा—"झगड़ा करने से कोई लाभ नहीं। इनके पास शाही हुक्मनामा है। ये उसे आगरे से लाएँगे। तुम भी चले जाओ और अपना हक साबित करो।"

डेविड ने देखा कि इन बदमाशों से कोई चारा नहीं चलेगा। वह

उन्हीं के साथ-साथ चला। उसने कहा—"यह अच्छी धींगामुश्ती है कि जबर्दस्ती दूसरे का माल छीना जाता है।"

इस पर एक अंग्रेज ने तलवार निकाल कर कहा—"चुपचाप चला जा लड़के, वरना हम तेरा यह घोड़ा भी छीन लेंगे।"

लाचार डेविड चुपचाप उनके साथ चलता गया। तीन दिन बाद वे आगरे पहुँचे और उन्होंने सब माल एक सराय में रख कर ताला लगा दिया और हँसते हुए एक ओर को चल दिए। निरुपाय डेविड ने भी उसी की बराबर की कोठरी में डेरा जमाया।

: ४६ :

पान का खर्चा

इन दोनों अंग्रेजों का नाम डामस और रिमथ था। वास्तव में वे पूरे चोर थे। वे दारा के तोपखाने में तोपची थे। लड़ाई के समय खूब शराब पीकर तोप चलाना और बाकी दिनों में शराब पीकर जुआ खेलना या जुआचोरी, लूट-खसोट करना यही इनका धन्धा था। वे वास्तव में कासिम खाँ के मगोड़े और बेईमान तोपची थे। परन्तु जिस दारा का मुँहलगा था। दारा के पास ऐसे खुशामदी लोगों की आवा जाही खूब रहती थी। यह विलायती शराब की बोतलें चुरा-चुरा कर दारा की खिदमत में पेश किया करता था। इसी की मार्फत यह आबिसाना लौंडी भी दारा ने खरीदी थी, जिसकी बराबर हसीन स्त्री शाही हरम में न थी और जिसे बेगम बनाने पर दारा आमादा था और बादशाह से भी लड़ बैठा था। आप समझ सकते हैं कि शराब और औरत की स्थिति जहाँ चल जाती है, वहाँ उचित अनुचित और छोटे-बड़े का भेद नहीं रहता।

धरमत की लड़ाई के बाद भागते भागते जब उन्हें डेविड और उसके साथी के मालदार होने का पता लगा तभी से सलाह-पत्ती करके-

उसके दोस्त बन गए थे। अब, जब दैवयोग से मोशिए मर गया—और चोरी करने में उन्हें सफलता नहीं मिली तो उन्होंने झटपट आगरा आकर दारा से अर्ज की कि मेरा एक रिश्तेदार दुर्ग के दरबार में नौकरी करने के विचार से आ रहा था। दुर्भाग्य से उसे यह प्रतिष्ठा प्राप्त न हो सकी और एक तराय में पहुँच कर वह मर गया। वहाँ के हाकिम ने उसका सब माल-असबाब रोक रखा है, वह मुझे दिलाया जाय।

दारा ने कोई खोज-खोज नहीं की और हुक्म दे दिया। जब शमत को शिव की चालाकी का पता चला तो वह झगड़ने लगा कि सारा माल मुझे दो—वरना मैं मजा फाड़ दूँगा। लाचार शिव को उसका मुँह बन्द करने के लिए उसे सौ आना हिस्सा देना पड़ा।

दैवयोग से वहाँ तराय में ही डेविड की मुलाकात एक फ्रान्सीसी सुनार से हो गई। वह सुनार भी दारा का सेवक था और उसकी बेगमात के लिए जेवर बनाया करता था। इसका नाम पेरिवर था, और वह एक भला आदमी था। इसी ने उसे उन अंग्रेज चोरों का सारा हाल बता दिया। उन दिनों भी फ्रान्सीसी लोग अंग्रेज मात्र को अपना दुश्मन समझते—और जहाँ तक बनता उनका अहित करते रहते थे। उसी ने डेविड को सलाह दी कि वह बजीरे आलम की खिदमत में जाकर अर्ज करे।

डेविड को तुर्की और अरबी भाषा का कुछ ज्ञान था। उसने अपना वेश तुर्की जैसा बनाया। सर पर सुर्ख मलमल की पगड़ी पहनी, जिस पर नीले रङ्ग का रेशमी फीता बाँधा। हरे रङ्ग की साटन गले में बाँधी, शरीर पर सुर्ख जमीन की सुनहरी कुमदार आबदार पहनी और वह निर्भय मुगल सल्तनत के बजीर के सामने जा पहुँचा। उसने तंदेर में बजीर से साथ जिस्ता बयान कर दिया।

सुन कर बजीरे आलम ने उस युवक को ऊपर से नीचे तक देखा—

फिर कहा—"क्या वजह है कि तुमने यह पोशाक पहनी है। मुगलिया ढंग के कपड़े क्यों नहीं पहने?"

युवक ने कहा—"हुजूर मैं तो रूस, फ्रांस आदि देशों से यात्रा करता हुआ आ रहा हूँ। इसलिए मैं यही पोशाक पहनता हूँ। आगरे से अभी आया हूँ।"

बशीर ने फिर पूछा—"क्या तुम जानते हो कि शहनशाह के सामने हाजिर होने पर किस तरह कोर्निश बजा लाई जाती है?"

इस पर डेविड ने सीधे खड़े होकर अपने सिर को इतना झुकाया कि वह जमीन से छू गया। इसके बाद अपने दाहिने हाथ की पीठ को जमीन की तरफ करके अपना सिर उठा लिया और सीधा खड़ा हो गया। ऐसा ही उसने तीन बार किया। बशीर साहेब यह देख कर मुस्कुराने लगे। उन्होंने कहा—"दिल्ली में तुम नए आए हो मगर बादशाह सलामत को आदाब बजा लाना ठीक तरीके पर जानते हो।"

वे शीघ्र ही शाही दरबार को चल दिए। साथ में डेविड को भी ले लिया और उसे हिदायत की कि खबरदार रहना—जब बादशाह के सामने पहुँचो—इसी तरह आदाब बजाना।

उन्होंने अपने दो अमीरों को इस सम्बन्ध में समझा दिया कि वे उचित पाने पर किस तरह उसे बादशाह के सम्मुख पेश करें।

वह लोग दरबार में पहुँचे। बशीरे आजम बादशाह के सामने चले गए और गुलामों ने उसे बादशाह से पचास कदम के फासले खड़ा कर दिया और धीरे से कान में कहा—कि ज्योंही बादशाह सलामत तुम्हारी ओर देखें उसी तरह आदाब बजा लाना।

डेविड ने देखा—कि बशीरे आजम ने बैठने के पास पहुँच कर उसी तरह बादशाह को सलाम किया—फिर तख्त के निकट पहुँच कर उसी भाँति सलाम कर बादशाह से बात करने लगा। बात करते करते उसने हाथ उठा कर डेविड की ओर संकेत किया। बादशाह ने आँख उठा कर डेविड की तरफ देखा, और डेविड के साथवाले अमीर ने

उसे आदाब बजा लाने का संकेत किया। डेविड ने उसी भाँति आदाब अर्ज किया। उस समय दरबार में बहुत अमीर उमरा खड़े थे। वजीर धीरे-धीरे बादशाह से बात कर रहा था। तख्त के पास ही नीचे दारा एक सुनहरी चौकी पर बैठा था। बादशाह का तख्त बनाने महल के सामने था। तख्त अनेक प्रकार के रत्नों से जड़ा था। उसी पर बादशाह मसनद पर बैठा था। तख्त पर एक अत्यन्त का शामियाना सुनहरी खूनों पर तना था।

थोड़ी देर में अमीरों ने उसे चलने का संकेत किया। वे अमीर भी उसके साथ ही दरबार से बाहर आए, और सराय तक गए। डेविड ने वह कोठरी बताई जिसमें वह असबाब बन्द था। उन्होंने उसकी मुहरबाले तोड़ सब असबाब निकाल लिया और अपने साथ उठा ले गए।

दूसरे दिन डेविड को वजीर साहब ने अपने सामने हाजिर होने का हुक्म दिया। डेविड ने आकर देखा—वह सारा माल असबाब वहाँ पड़ा है और वे दोनों चोर अनेक हाथ-पैर बँधे, हथकड़ी बेड़ी पहने वहीं खड़े हैं।

डेविड ने वजीर को उसी भाँति सलाम किया जैसे बादशाह को सलाम किया था। वजीर ने मुस्कुरा कर कहा—"क्या यही तुम्हारा सामान है?"

"जी हाँ हुजूर!"

"और तुम उन दोनों चोरों को भी पहचानते हो?"

डेविड ने दोनों चोरों की ओर देखा और कहा—"यही दोनों हैं हुजूर!"

"देखो, इस सामान से कोई चीज गायब तो नहीं है?"

डेविड ने देख कर कहा—"जी, सब ठीक है।"

वजीर ने तब डेविड को अपने पुत्र के पास बैठने का इशारा किया। कैदियों को वहाँ से ले जाने का संकेत किया। फिर डेविड से कहा—"क्या तुम मेरे यहाँ नौकरी करोगे?"

"जी, मैं तोड़ का खर्च करूँगा।"

"खैर, तो तुम अपना सामान ले जाओ।" यह कह कर अपने गुलाम को इशारा किया। उसने दस मुहर उसे देकर कहा—'यह हुजूर फकीर साहेब ने तुम्हें पानी के खर्च के लिए इनायत की है।'

डेविड मुहर और सामान ले खुश-खुश सराय में आया।

: ४७ :

दक्षी अहद की सेवा में

मेजिएर मौलिवर बहुत खुशमिजाज आदमी थे। उनसे डेविड की शीघ्र ही गहरी दोस्ती हो गई। दोनों दोस्त साथ-साथ शराब पीते और मजे उड़ाते थे। यद्यपि दोनों की उम्र में बहुत अन्तर था। परन्तु उनका आपस का व्यवहार दोस्तों के समान था। मौलिवर उसे अपने घर ले गया और जब उसने पूछा कि क्या उसे बजीर की नौकरी करनी चाहिए। तो उसने कहा—'नहीं, मैं तुम्हें मौका पाते ही बड़ी अहद शाह शिकोह के हुजूर में पेश करूँगा।'

यह अवसर शीघ्र ही मिल गया। तीन दिन के बाद ही शाह ने मेजिएर मौलिवर से पूछा—"क्या तुम जानते हो—वह फिरंगी नौजवान को कुछ दिन हुए शाही खेमखाने के मकान और एक दूसरे अंग्रेज के विरुद्ध शिकायत लेकर दरबार में हाजिर हुआ था—कहाँ है?"

"हुजूर, उसे नौजवान और मददगारों से रहित समझ कर वह गुलाम अपने घर ले गया है। लड़का होनहार और भला मालूम होता है। वह चाहता है कि आगरे से आने से पेश्तर मुगल शाहनशाह और शाहजादा की—दौलतमन्दी और उनके देश से जिससे योरोप लौट कर वह उनकी शान-शौकत का जिक्र अपने देशवासियों से कर सके।"

"हम उसे देखना चाहते हैं, उसे अपने हमराह हमारे हुजूर में ले आओ।"

मोरिशिए ने जब यह सुसमाचार डेविड को दिया और कहा—"भला करो दोस्त, हुजूर शाहजादा दारा शिकोह की खिदमत में जो योरोपियन रहते हैं वे खूब तनख्वाह पाते हैं। बस, देर न करो—क्योंकि बादशाहों के इरादे पक्षियों के समान होते हैं जिन्हें यदि एक बार भी आज से निकल जाने दिया जाय तो फिर काबू आना मुश्किल है।"

दूसरे ही दिन वह डेविड को लेकर शाहजादे की सेवा में पहुँचा। दारा को डेविड ने उसी भाँति सलाम किया जिस भाँति बादशाह को किया था। अठारह वर्ष के इस किशोर छोकरे को निर्भय कोर्निश करते देख दारा ने मुस्कुरा कर कहा—"क्या तुम फारसी बोल सकते हो?"

डेविड ने फारसी में जवाब दिया—"हुजूरे आला, मैं फारिस और तुर्किस्तान को भी सैर करके आ रहा हूँ।"

दारा ने एक खत निकाल कर उसे दिया और कहा—"क्या तुम इस खत का तर्जुमा फारसी में कर सकते हो?"

खत, इंग्लैण्ड के बादशाह का एक खरीता था जो सुनहरे अक्षरों में लिखा था। डेविड ने उसका अभिप्राय फारसी में सुना दिया। सुनकर दारा सन्तुष्ट हुआ। उसने प्रसन्न मुद्रा से कहा—"यह खत किस चीज पर लिखा गया है, क्या यह कागज है?"

"नहीं हुजूर, यह बछड़े का खास तौर पर बना हुआ चमड़ा है। योरोप के बादशाह ऐसे ही चमड़े पर शाही खत लिखते हैं। जिससे मौसम और सर्दी गर्मी का खत पर असर न हो।"

"क्या तुम अभी कुछ दिन दरबारे मुअल्लिया में रहना चाहते हो?"

"खुशी से", डेविड ने निर्भयता से कहा।

"क्या तुम हमारी खिदमत में रहना पसन्द करोगे?"

"पनाहे आलम, आप जैसे प्रसिद्ध मुगल तख्त के वली अहद की सेवा में रहना मेरा सौभाग्य होगा।"

इस जवाब से दारा खुश हो गया और उसे अपनी खास सेना में भरती कर लिया।

बुरी खबर

चरमत की हार की खबर पहुँचते ही, आगरे में एकदम बदअमनी फैल गई। दरबार का रङ्ग बिगड़ गया। बादशाह भय से पीला पड़ गया और दारा क्रोध से बौखला उठा। यद्यपि इस समय दारा ने बहुत भारी सेना का संग्रह कर लिया था। लड़ाई यदि सच्चे और ईमानदार सेनापतियों के हाथ में होती तो विजय निश्चय दारा की होती क्योंकि इस समय भी औरङ्गजेब के साथ चालीस हजार से ज्यादा फौज न थी। वह भी थकी-माँदी थी। परन्तु शोक की बात तो यह है कि सारे सरदार दारा से बदगुमान थे, कुछ औरङ्गजेब से मिल गए थे। किसी पर भी भरोसा नहीं किया जा सकता था। दारा के दोस्तों ने सलाह दी कि सुलेमान शिकोह के लौटने तक ठहरना चाहिए। पर बिहूरे दारा ने यह कीमती सलाह भी नहीं मानी। सुलेमान के साथ न केवल एक अच्छी सेना ही थी विश्वासी और वीर सरदार तथा सेनापति भी थे जिनसे बहुत लाभ उठाया जा सकता था। बादशाह ने यह भी चाहा था कि वह स्वयं कुरुक्षेत्र में चले और सेना की कमान अपने हाथ में ले, यदि यह बात भी दारा स्वीकार कर लेता तो विजय की बहुत आशा थी, क्योंकि चाहे जो भी हो बादशाह के खिलाफ कोई अमीर तलवार न उठाता और सेना भी जिसे यह विश्वास दिलाया गया था कि बादशाह सलामत मर गए हैं, बादशाह के खिलाफ नहीं लड़ती। परन्तु अदूरदर्शी दारा को उसे नष्ट करने वालों ने यह पट्टी पढ़ाई थी कि वह फौज की कमान अपने ही हाथ में रखे, जिससे फतह का सेहरा उसी के सिर बँधे। बादशाह यदि युद्ध में गए तो उन्हीं का नाम होगा। (यह बात दारा की [illegible]

मैं युद्ध में स्वयं चलने का विचार प्रकट किया तो दारा ने कहा—कि हुजूर ने यदि यह इरादा किया तो मैं यहीं गला काट कर जान दे दूँगा। बादशाह लाचार हो गया। उसने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा—'या खुदा तेरी रजा!' और सेना तथा खजाने के सारे अख्तियार दारा को सौंप दिए।

दारा ने, जो किसी की सलाह नहीं मानी इसके भी कुछ कारण थे। वह अहद-से-अहद औरंगजेब से मिल जाना ही पसन्द करता था। पहिला कारण तो यह था कि वह सोचता था कि अभी तक बादशाह मेरी मुट्ठी में है, उस पर पूरा मेरा अधिकार है। दूसरे इस समय तक तमाम खजाने और आमदनी पर भी उसी का कब्जा था। तीसरे शाही सेना भी उस समय तक उसी के हाथ में थी। चौथे वह समझता था कि शुजा एकदम नष्ट हो चुका है और औरंगजेब तथा मुराद की हारी थकी सेना को तुरन्त हमेशा डालना अब बहुत आसान है। उसका विश्वास था कि वे एक बार हारकर फिर किसी काम के न रहेंगे और वह एकदम निष्कण्टक बन जायगा। बादशाह कुरुक्षेत्र में गए तो कौन जाने युद्ध हो ही नहीं और वहीं हो जाय और औरंगजेब तथा मुराद अपने-अपने दलों में लौटा दिए जायँ। बादशाह तन्दुरुस्त हो जाय और उस राज-काज अपने हाथ में ले ले। अपने बेटे सुलतान सिपहर की फतह से प्रसन्न होने के स्थान पर वह भयभीत हो गया था। वह सोचने लगा कि यदि उसके आने के बाद उसकी मदद से जीत हुई, तो न जाने बादशाह और दरबारियों की तारीफ से उसके हौसले कितने बढ़ जायँ और फिर उसके दिल में अपने बाप की प्रतिष्ठा और प्रेम स्थिर रहे या न रहे। उन दिनों मुगलों के शाही रक्त का ऐसा ही दौर-दौरा था।

इन सब बातों को विचार करके उसने सेना को तुरन्त कूच करने की आज्ञा दे दी। जब वह विदा होने की आज्ञा लेने बादशाह की सेवा में उपस्थित हुआ तो बूढ़ा बादशाह बेटे को गले लगाकर रोने लगा।

उसने कहा—"खैर बेटा, तुमने अपनी मेहरबानी का काम किया, खुदा इसमें तुम्हें मुबारक और कामियाब करे, परन्तु याद रखो कि यदि लड़ाई बिगड़ गई तो मुँह दिखाने योग्य न रहोगे।" दारा ने बादशाह की बातों का कोई जवाब नहीं दिया और बादशाह को सलाम करके वह चुपचाप बाहर चला गया, और कूच बोल दिया। इस समय दारा के पास एक लाख सवार, बीस हजार पैदल, एक सौ मैदानी तोपें, जिनमें आठ से बारह पौंड का गोला पड़ता था और एक बीस पौंड के गोले वाली विलायती तोप भी थी। दो सौ उमदा फरंगी तोपची उसके पास थे। इसके सिवा सजे हुए पाँच सौ हाथी, और बहुत से ऊँट भी थे। इन ऊँटों पर आड़ बीन लिए एक-एक सवार था जिनमें डेढ़ दो छटाँक तक की गोली पड़ती थी। पाँच सौ होदों वाले हाथी अलग थे जिन पर दो दो बन्दूकची थे। इसके पास देशी बन्दूकें थीं। फौज में भीड़ भाड़ बहुत थी। बनिए जो रसद देते थे, सराफ जो रुपए-पैसे देते तथा सिक्के की अदल बदल करते थे, तथा अन्य बहुत से लोग बौरेन, भाटन, रंडी, मसूद थे जो लश्कर के साथ चल रहे थे।

१४ मई १६५८ को जब यह फौज आगरे से चली तो मीलों तक फौज ही फौज दीखती थी। छोटा बड़ा जो देखता उसी का कलेजा दहल जाता था। परन्तु यह आश्चर्य की बात थी कि किसी के मुँह से यह नहीं निकलता था कि दारा की फतह होगी। इसके भी कारण थे। जिन अमीरों की जिन्हों की बादशाह ने बेइज्जती की थी और दारा ने जिनका समय-समय पर अपमान किया था वे सब मन में खार खाए बैठे थे और वे इस समय दिल से उसकी दुर्दशा देखकर खुश होना चाहते थे। सुलेमान शिकोह और राजा जय सिंह उससे दूर थे, जो उसकी समय पर बड़ी मदद कर सकते थे। वीर महाराज जसवन्त सिंह की दुर्दशा हो ही चुकी थी। जो नई भरती की गई थी उसमें कसाई, नाई, सुनार, बढ़ई, दर्जी, और आवारे ही अधिक थे। जिन्होंने न कभी हथियार देखे थे न लड़ाई का मैदान। इस प्रकार यह फौज

दुश्मन पर दबाव तो डालती थी परन्तु वह एक मुरीद और उमदा फौज न थी। इसके सिवा तीस हजार चुनी हुई सेना बादशाह ने किले की रक्षा के लिए अपने अधीन रख ली थी।

जब दारा अपने सजे हुए विशाल हाथी पर सवार होने लगा तो उसने अमीरों की ओर देखकर कहा—'गरीब माफ़-मगरूर मर्गा।"

इस पर उसके साथ के सरदारों ने कहा—"हम्दा अल्लाहाला।"

दारा के हाथी की सुनहरी अम्बारी धूप में सूर्य की भाँति चमक रही थी। उसके चारों ओर राजपूत वीरों के रिसाले थे। इसके बाद वे मस्त हाथी थे जिनकी सूँड़ों में जंजीरें और दाँतों पर सोने-चाँदी के हल्के जड़े थे, जिनके सामने सूँड़ों में नङ्गी तलवारें लटक रही थीं।

सबसे आगे इस्लाम-बरदार हाथी था। जिसका महावत ढाल-तलवार से सुसज्जित था।

चार दिन कूच करने के बाद दारा ने धौलपुर के निकट पहुँच कर पड़ाव डाला। वहाँ जासूसों ने खबर दी कि अब दुश्मन नजदीक ही है। इसलिए अपने सरदारों और सिपहसालारों से सलाह करके उसने चम्बल नदी के सारे घाट घाटों को रोक कर अपने अधिकार में कर लिया और मुनासिब जगहों पर मोर्चे लगा दी।

: ४९ :

चम्बल के तीर पर

औरङ्गजेब का लश्कर भी कूच पर कूच करता हुआ उज्जैन और खालियर उजाड़ कर चम्बल के उस ओर आ धमका। लश्कर में उत्साह फैला हुआ था। वह एक विजय प्राप्त कर चुका था। औरङ्गजेब ने उसे बहुत से सम्मान दिखाए थे और छोटे से बड़े तक प्रत्येक सैनिक को पुरस्कृत किया था। उसकी सेना का प्रत्येक सिपाही लड़ने के लिए उतावला हो रहा था। अपने जासूसों के द्वारा उसे दारा की

सेना का राई-रत्ती हाल मालूम होता जाता था। उसने अपने तमाम जनरलों को बुला कर एक छोटी-सी युद्धसभा की, उसमें उसने अपने सेनानायकों को सम्बोधन करके कहा—"अब आपको वह शानदार फ़तह हासिल करने का समय आ गया है जो तवारीख में अमर रहेगी। आप अब जङ्ग के लिए तैयार रहिए। हम जितनी जल्दी करेंगे उतनी हमें सफलता मिलेगी। हमें आपकी बहादुरी दिलेरी ईमानदारी और वीरता पर भरोसा है। दोस्तो, बलीनन फ़तह आपके क़दम चूमेगी।"

इसके बाद उसने प्रत्येक अफ़सर को उसके काम बताए और विदा किया। फिर वह बड़ी बेचैनी से अपने डेरे में टहलने लगा। मुराद ने उसे विचलित देखकर पूछा—"क्या कोई दिक़्क़त दरपेश है?"

"जी नहीं, मगर मैं एक ख़त के जवाब का मुन्तज़िर हूँ, मुझे अफ़सोस है।"

औरङ्गज़ेब पूरी बात नहीं कर पाया कि उसे उसके दूसरे भाई मीर बाबा के आने की इत्तला मिली। वह लपक कर डेरे के दरवाज़े तक गया। उतावली से कहा—"भाई जान, एक-एक लमहा बड़ा क़ीमती है। कहो क्या ख़बर लाए।"

मीरबाबा ने झुककर ख़त औरङ्गज़ेब के आगे बढ़ा दिया। औरङ्गज़ेब मोमबत्ती के पास जाकर ख़त पढ़ने लगा। ख़त पढ़ते-पढ़ते उसका चेहरा खिल उठा। उसने मुराद से कहा—"मुबारक हज़रत, हमारी उससे बड़ी मुश्किल हल हो गई। यहाँ से १२ कोस के फ़ासले पर एक घाट है जहाँ दारा का पहरा नहीं है। वहाँ पानी भी घुटनों तक है। वहाँ के ज़मींदार ने हमारी मदद करना क़बूल कर लिया है। रास्ता नीरस और विकट है। हमें ज़ाहिरा छावनी यहीं बनी रहने देनी होगी और आप अपनी उसी बहादुरी और दिलेरी से ८ हज़ार चुनीन्दा सवारों को ले जाकर इस तरह चुपचाप नदी पार उतर जाइए कि किसी को कानों-कान ख़बर न हो। बस, आप जिस घड़ी नदी के उस पार क़दम रखेंगे उसी घड़ी दारा की तक़दीर का सितारा डूब जाएगा।

चाहिए जहाँपनाह, आज रात ही हुजूर की और दारा की किस्मत का फैसला होना है।"

मुराद कुछ देर तक की हालत में खड़ा रहा। औरंगजेब ने उसे आलिंगन किया—पेशानी चूमी और कहा—"खुदा हाफिज।"

मुराद खुशबाश खीमे से निकल गया। औरंगजेब देर तक उसकी ओर देखता रहा। फिर उसने एकदम पलट कर मीरबाबा की ओर देखा—लपक कर उसके दोनों कन्धे पकड़ उन्हें हिलाते हुए कहा—"जरूर तुम बहुत थक गए होगे—मगर भाई जान, आज तुम कहीं आराम न करने पाओगे। जाओ, छावनी में जगह-जगह आग जलवा दो, सिपाहियों से कह दो—रंगरेलियाँ मनाएँ, गाएँ, बजाएँ मौज करें।" फिर धीरे से उसका हाथ दबा कर कहा—"जिससे दुश्मन समझें, कि हमारा लश्कर मौज बहार में मस्त है। जाओ भाईजान, अपना काम करो।"

मीरबाबा ने कहा—"जाता हूँ, मगर आप अब तो आराम कीजिए।"

"आराम, नहीं-नहीं, मुझे आज रात भर बहुत-सी चिट्ठियाँ लिखनी हैं।"

और वह फिर अपने खीमे में इधर से उधर तेजी से टहलने लगा। मीरबाबा कुछ देर उसे देखता रहा फिर धीरे से चल दिया। औरंगजेब ने अपने खीमे में मुस्तैद पहरे बैठा दिए और जरूरी खत लिखने लगा।

: ५० :

चम्बल के पार

धौलपुर पहुँच कर, चम्बल के सारे राह घाट रोक कर तथा उनपर मजबूत चौकी बैठाकर दारा बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसका इरादा बिना लड़े औरंगजेब को चम्बल के उस पार रोक देने का था, जिससे

सुलेमान शिकोह की सेना को आने का अवसर मिल जाय। पर औरंगजेब ने निर्बाध रूप से नदी पार कर ली।

औरंगजेब की सेना के नदी पार उतरने की खबर पाते ही दारा क्रोध से तड़पने लगा। उसने तुरन्त स्वयं उसे रोकने जाने का इरादा किया। इस पर फौजदार इब्राहीम खाँ कलन्दर मरदान ने आगे बढ़कर निवेदन किया "आलमपनाह, आपका खुद इस वक्त दुश्मन के सामने जाना मुनासिब नहीं। सिर्फ बारह हजार फौज का एक दस्ता इस गुलाम के साथ भेजना काफी है। जो औरंगजेब की बची और बेतरतीब फौज को आनन फानन तबाह कर देगा।" परन्तु विश्वासघाती खलील खाँ ने फौरन मुँह बिचका कर कहा—"हुजूर, यह तो कुछ अच्छी तजवीज नहीं है, इससे वह इज्जत और नामवरी जो हुजूर को मिलनी चाहिए सिर्फ उस अफसर को मिलेगी जो इस मुहिम पर जायगा। इसके अलावा फौज से इस वक्त बारह हजार तलवारों का दस्ता अलग कर देना भी कुछ ठीक नहीं मालूम देता। गुलाम का ख्याल है कि अगर ऐसा किया गया तो जो फतह अब यकीनन हमारी जाती है, खतरे में पड़ जायगी।"

इस पर दारा कुछ भी निर्णय न कर सका और दूसरे दिन जब शाही सेना ने औरंगजेब के मुकाबिले कूच किया—तब तक उसकी अधिकांश सारी ही सेना इस पार उतर चुकी थी, और वह तेजी से यमुना के किनारे की ओर बढ़ रही थी।

सुराह की रक्षा के साथ औरंगजेब के तीन मजबूत दस्ते सुयोग्य सेनानायकों की अधीनता में एक उमदा तोपखाने सहित नदी के इस पार उतर गए। उसके बाद ही खूब होशियारी से औरंगजेब भी अपनी समूची सेना के साथ पार उतर आया। रास्ता बहुत खराब था। गर्दी बेहद थी। जानवर और सैनिक प्यास से तड़प रहे थे। घोड़े कदम कदम पर ठोकरें खाते थे। सिर्फ प्यास से तड़प कर पन्द्रह हजार आदमी राह में मर गए। पर चम्बल के इस पार उतरना बड़ी भारी सैनिक

बढ़ता थी। औरंगजेब की इस एक ही चाल ने दारा के सारे मोर्चों को बिखरा बना दिया था—राह-घाट पर दारा ने जो बड़े-बड़े मोर्चे बनाए थे, चौकियाँ बैठाई थीं, लम्बी-चौड़ी खाई खोदकर तोपें जमाई थीं—वह सारी कारस्तानी कुछ भी काम न आई। आगरे की राह अब औरंगजेब के लिए खुली पड़ी थी।

दारा ने यह देखा तो क्रोध से पागल हो गया। वह क्या करे यह कुछ भी निश्चय न कर सका। कोई अच्छा सेनापति सलाहकार और विश्वासी युद्ध-कला-विशारद आदमी उसके पास न था। वह बौखला कर चम्बल का किनारा छोड़ पीछे लौटा। भारी तोपें जो नदी पार जमाई थीं—वहीं छोड़ देनी पड़ीं। अब उसे राजधानी की रक्षा की चिन्ता व्याकुल कर रही थी। पानी की बेहद कमी से जानवर और सैनिक बीच राह तड़प-तड़प कर मर रहे थे, पर वह मशकों और सिक्कों को पीछे छोड़ तोड़-तोड़ भागा जा रहा था। राह में जो गड्ढे-तालाब मिल जाते—सिपाही और जानवर उन पर टूट पड़ते। आखिर वह समूल गढ़ के मैदान में जा पहुँचा, वहाँ से आगरा केवल दस मील रह गया था। वहाँ उसने औरंगजेब को पहिले ही से सामने डटे हुए देखा। दारा ने आगरे और औरंगजेब के बीच में बहुत किनारे अपना डेरा डाला।

दारा अपनी सारी सेना को लश्कर पड़ाव से निकला। लोगों ने समझा वह युद्ध करने जा रहा है। परन्तु शत्रु सेना को देखकर वह रुक गया और यह जानने की चेष्टा करने लगा कि शत्रु का इरादा क्या है। दिन भर सेना को व्यूह सजाकर वह सायंकाल में लौट आया। यह उसकी सबसे भयानक भूल थी। औरंगजेब अभी व्यवस्थित नहीं था, सेना उसकी बहुत कम थी। गर्मी भरी थी। भूखे-प्यासे सैनिक परेशान हो रहे थे। दारा ने दिन भर अपने सैनिकों को गर्मी में खड़े रख कर सजा डाला। गर्मी में बेकार पड़ी खड़े-खड़े सैनिक और हाथी-

थोड़े बेचैन हो गए। औरङ्गजेब को आराम करने को पूरी रात और समूचा दिन मिल गया।

इसी समय उसे बादशाह का पैग़ाम मिला। उसमें लिखा था "मेरे प्यारे फ़र्ज़न्द, मैं हमेशा तुम्हें प्यार करता रहा हूँ, क्योंकि तुम मेरे सबसे बड़े और सबसे अधिक आज्ञाकारी पुत्र हो। मैं चाहता था कि तुम बिना किसी दिक़्क़त के बादशाह बन जाते, मगर न जाने ख़ुदा को क्या मंज़ूर है। मैं चाहता था कि तुम्हें क़िले में छोड़ कर मैं मैदाने जंग में आता और देखता कि मेरे ही नमकहराम नौकर और ख़ुशामदी पुत्र कैसे मेरा मुक़ाबिला करते हैं। मगर तुमने मेरे बुढ़ापे और कमज़ोरी पर तरस खाकर ख़ुद लड़ाई का जोखिम मोल लिया—और दिल न तोड़ने के लिए मैंने तुम्हारी मर्ज़ी के मुताबिक़ ही किया। परन्तु बेटे, मैं तुम से फिर कहता हूँ कि जब तक सुलेमान शिकोह न आ जाय—लड़ाई मत करना। अब चूँकि मैं कुछ नहीं कर सकता, सिर्फ़ ख़ुदा से दुआ करता हूँ कि वे आँखें तुम्हें ख़ाहमख़ाह दिन्द होता देखें। ख़ुदा हाफ़िज़!"

परन्तु दारा की हालत बड़ी दिलचस्प थी। उसे सूचना मिली थी कि अभी औरङ्गजेब का लावलश्कर नहीं आ पाया है, इसलिए वह चाहता था कि तुरन्त उस पर टूट पड़े। मगर विश्वासघाती सरदारों ने औरङ्गजेब से यह सब कर लिया था कि जब तक उसकी तैयारी पूरी नहीं हो जाती, वे दारा को लड़ने से रोकते रहेंगे। यह भी संकेत तय हो चुका था कि ज्योंही औरङ्गजेब की तैयारी मुकम्मिल हो जायगी तो औरङ्गजेब तीन फायर करेगा। जो रणभेरी का संकेत होगा। इसलिए सलाहकारों ने कहा—"हुज़ूर, अभी शुभ मुहूर्त में तीन दिन हैं, आज से चौथे दिन आपके सितारे इतने बुलन्द हैं कि आपकी फ़त्ह को दुनिया में कोई नहीं रोक सकता।" दारा भी मन में सुलेमान शिकोह के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। इस प्रकार दारा सहकर लिए चुपचाप और दो दिन तक दुश्मन के सामने पड़ा रहा। लोक की बात

दी। यह दिन भी राजा ने मह कर दिया। उसी दिन आधी रात को दौराबेग के सरकार में, तीन बार साथ दागी। जो उसकी बंग की दुर्भिक्ष तैयारी की सूचना थी। इस संकेत के साथ ही राजा की फौज की तैयारियाँ होने लगीं—और लोग चलने लगे—देखो कल देता है उगता है।

: ५१ :

सामूगढ़ का युद्ध

उस दिन २९ मई थी। सूर्योदय से पहले ही औरंगजेब अपने पूरे सरकार के साथ धीरे धीरे आगे को बढ़ा। उसने रातोंरात अपने सरकार को व्यूह-बद्ध कर लिया था। अपनी सारी सेना के उसने बीच भाग किए। वह सेना के मध्य भाग में ऊँचे हाथी पर बैठा था। उसके गिर्द पन्द्रह हजार चुने हुए शरीररक्षक तलवार थे, जो तब तेगों, तीरकमान बन्दूक और तलवारों से सुसज्जित थे। दाहिनी ओर उसके बेटे सुलतान मुहम्मद की कमान में पन्द्रह हजार वैसे ही वर्दीमर्द तलवार थे तथा उसके सहायताय औरंगजेब का दूधभाई मीरबाबा भी था, जो बड़ा साहसी, विश्वासी और मुस्तैद सिपाही था और जिसे उसी समय खाँ बहादुर का खिताब दिया गया था। सुलतान मुहम्मद के दाहिनी ओर नवाबत खाँ और दूसरे सरदारों के अधीन पन्द्रह हजार फौज का एक तीसरा दस्ता था। औरंगजेब के बाईं ओर मुरादबख्श पन्द्रह हजार वीर और सुसज्जित तलवारों सहित मुकीम था। वह एक ऊँचे हाथी पर, जिसकी सोने की अम्बारी धूप में सूर्य की भाँति चमचमा रही थी, बैठा था। उसकी बगल में उसका छै साल का छोटा बेटा भी था। पाँचवाँ दस्ता मुराद के बाईं ओर पन्द्रह हजार सिपाहियों का सुयोग्य सेनापतियों की अधीनता में था। इसके बाद मुराद के बाईं ओर खजाने से भरे हाथी, माल असबाब, गाड़ी, ऊँट, बैल आदि थे और उसके पीछे तोपखाना था।

कोई पौन मील धीरे धीरे चलने के बाद एक उजड़े हुए गाँव के पास यह लश्कर पहुँचा। यह जगह बड़ा ऊँची थी। यहाँ औरंगजेब ने सेना को रोक दिया और तोपखाना आगे लाने का हुक्म दिया। ऊँचे टीलों पर तोपें रखा दी गईं, उनके पीछे बन्दूकची और उनके पीछे ऊँट खड़े किए गए। इन ऊँटों पर चक्करदार तोपें थीं। इसके पीछे पूर्वोक्त व्यूहबद्ध सेना खड़ी हुई। सेना के दाएँ बाएँ कुछ हल्की तोपें गुप्त रीति से लगाई हुई थीं।

दारा ने अपना समस्त तोपखाना सामने एक पंक्ति में सुसज्जित किया था। उसने तोपों की गाड़ियों के पहियों में जंजीरें जकड़वा दी थीं कि जिससे दुश्मन उनका उल्लंघन करके भीतर फौज में न घुस सके। इनके पीछे पच्चीस हजार पैदल बन्दूकचियों की एक कतार खड़ी थी, जिनके लिए यह तोपखाना एक अच्छी-खासी दीवार थी। इन बन्दूकचियों के साथ पाँच सौ ऊँटों पर चक्करदार तोपें थीं, और इनके पीछे उत्तम हाथियों की पंक्ति थी। हाथियों के पीछे अड़ाइस हजार सवार खड़े थे। उसके पीछे दारा सिंहासन ढोने के एक बहुमूल्य हाथी पर सवार था। उसके पीछे अनगिनत हाथी थे जिन पर नक्कारे, निशान और बाजे-गाजे के सामान थे। दारा के दाहिनी ओर रामसिंह राठौर अपने पन्द्रह हजार वीर राजपूतों के साथ था। उसके दाहिनी ओर खलीलुल्ला खाँ तीस हजार दाढ़ी सेना की कमान लिए मुस्तैद था। दारा के बाईं ओर वीर रुस्तम खाँ दक्खिनी अपनी पन्द्रह हजार सेना के साथ था और उसके बाईं ओर राव कृष्णदास पन्द्रह हजार राजपूत कुचेलों के साथ था। सारी सेना की धज, प्रातःकाल की धूप में चमचमाते हथियारों, रंगबिरंगे झण्डों और निशानों से अत्यन्त शोभनीय मालूम पड़ रही थी।

इस प्रकार सेना का यह व्यूह आधुनिक रण-विद्या से बिल्कुल ही भिन्न एक ऐसे तरीके से रचा गया था कि एक हल्ले से दूसरा हल्ला खड़ा हुआ था। जैसे जंगल में वृक्ष एक पंक्ति में खड़े हों। इस समय

दारा के पास पचास हजार सवार थे। राजपूत सैनिकों और दारा के ईमानदार पक्षपातियों पर ही इस सेना की पूरी शक्ति निर्भर थी। पर दुर्भाग्य से उसकी आधी सेना ऐसी थी जिसपर बिल्कुल भरोसा नहीं किया जा सकता था। उसके अनेक सूबेदारों को औरंगजेब ने फोड़ लिया था जिनमें खलीलुल्ला खाँ प्रमुख था, जिसकी कमान में तीस हजार सेना थी। उसके तोपची भी भरोसे के न थे और सामान ढोने वाले जानवर भी बेकार से थे।

परन्तु औरंगजेब के साथ अनुभवी लड़ाकी वीरों का एक अच्छा समाज था। उसके भेद खोलने का मोरक्कुमला के बोरोपियन तोपची संचालन कर रहे थे। गोलाबारूद भी उसके पास काफी था। अनुशासन और संगठन भी उसका अपूर्व था।

औरंगजेब के आगे बढ़ते हुए लश्कर को देख कर भी दारा ने सेना को आगे नहीं बढ़ाया और जब औरंगजेब ने सेना को एक जगह सुसज्जित करके खड़ा कर दिया—तब भी दारा आगे नहीं बढ़ा। दोनों सेनाएँ अभी भी काफी फासले पर थीं और तोप की मार से परे थीं।

आठ बजे दारा ने तोपों पर बत्ती देने का हुक्म दिया और उसकी सारी तोपें एकदम आग उगलने लगीं—परन्तु यह भारी मूर्खता थी। तोपों की यह बाढ़ व्यर्थ जा रही थी। गोले दुश्मन तक न पहुँच कर खेतों में गिर रहे थे। गोला-बारूद व्यर्थ नष्ट हो रहा था। परन्तु तोपों की बाढ़ जारी थी। उनकी गर्जना से कानों के पर्दे फटे पड़ते थे। परन्तु उनसे क्या लाभ हो रहा है यह देखने वाला कोई न था।

इसके जवाब में औरंगजेब ने थोड़े से जमजार बम चलाए और चुप हो रहा। जब पहला ऊबर खतम हो गया तो औरंगजेब की सेना से एक तोप छोड़ी गई। यह विश्वासघातियों के लिए संकेत था। दारा ने फिर फायर की आज्ञा दी। उसकी समाप्ति पर औरंगजेब ने दो फायर किए, परन्तु जब दारा की तोपें इस निरर्थक फायर कर चुकीं तो औरंगजेब ने तीन तोपें एक दम चलाईं।

यह संभव इस बात पर था कि वह वहाँ से आगे बढ़ कर दारा पर आक्रमण नहीं करेगा—प्रत्युत वहीं थम कर मुकाबिला करेगा।

सकेत समझते ही विश्वासघातियों का सरदार खलीलुल्ला खाँ घोड़ा दौड़ाता हुआ दारा के सामने आया और बारम्बार कोर्निश करता हुआ बोला—"हजरत, फतह मुबारक, हमने बिना एक बूँद अपने सिपाहियों का खून बहाए अपनी तोपों से दुश्मन के एक भारी हिस्से को मिटा और खून के नीचे सुला दिया है। दुश्मन में मुकाबिले का दम नहीं है। अब तो हुजूर बस आप की हिम्मत और विलेरी दरकार है। तोप खाने के फायर जारी रखने की अब कुछ जरूरत नहीं। अब तो हमें आगे बढ़ कर दुश्मन पर एकदम हमला बोल देना चाहिए।"

दारा इस विश्वासघाती के दाँवपेंच समझने की योग्यता नहीं रखता था।

उसने तुरन्त तोपों का फायर बन्द कर देने की आज्ञा दी और सेनापति रुस्तम को बुलाकर उसकी राय माँगी।

रुस्तम खाँ एक वीर और सच्चा सेनापति था। उसने कहा—"हुजूर, यह तजवीज निहायत खतरनाक है। बेहतर यही है कि हम इस बात की बाट देखें कि दुश्मन हम पर हमला करे। हमारी फौज मुस्तैद और मुनज्जम है। जब दुश्मन बढ़ कर आएगा, हम पूरी ताकत से उसका मुकाबिला करेंगे और उसे तहस-नहस कर डालेंगे।"

परन्तु इस सही और बहुमूल्य सम्मति का मजाक उड़ाते हुए खलीलुल्ला खाँ ने कहा—"मुझे रुस्तम खाँ जैसे बहादुर सिपहसालार से यह उम्मीद न थी कि वह अपने मालिक को ठीक उस वक्त जब कि फतह उसके नजदीक है, ऐसी मुजबिलाना राय देगा। मैंने सैकड़ों लड़ाइयाँ देखी हैं। हमले का इन्तजार करना क्या माने? अभी, जब मारी तोपों ने दुश्मन की फौज को पायमाल कर दिया है तो फिर क्या यह कि हम खड़े हुए यहाँ जमे रहें और आगे बढ़कर उसे न खदेड़ें।"

दारा ने फिर रुस्तम का एक शब्द भी नहीं सुना। उसने उसे अपने

दस्ते को लेकर आक्रमण का हुक्म दिया और तोपों की बंदूकें खोल दीं। स्वामी की आज्ञा पाकर रुस्तम खाँ बाईं पक्ष पर खड़ी अपनी सेना को लेकर नंगी तलवारें लेकर शत्रु पर टूट पड़ा। इस आक्रमण का करारा मुकाबिला औरंगजेब की बन्दूकची सेना ने, जिसका सरदार शहाबुद्दीन खाँ था, किया। यह अवरोध ऐसा करारा था कि रुस्तम बहुत कोशिश करने पर भी औरंगजेब की तोपों तक न पहुँच सका। अब अवसर देख साहसी रुस्तम खाँ दाहिनी ओर को मुड़ा और मध्य भाग में अवस्थित औरंगजेब पर झपटा। वह देख औरंगजेब की वाहिनी बाबू के रक्षक बहादुर खाँ ने रुस्तम की राह रोक ली। बहुत घमासान हमला युद्ध हुआ और बहादुर खाँ घायल होकर गिरा। इसपर इस्लाम खाँ और शेख मीर उसकी सहायता को दौड़ पड़े। अब रुस्तम खाँ भारी विरोध में घिर गया। वह घायल भी हो गया था, थक भी गया था। फिर भी वह अपने दस-बारह वीरों के साथ तलवार से राह बनाता दुश्मन की सेना के मध्य भाग में घुसता चला गया और वहीं खेत रहा। बचे हुए घायल और थके हुए सैनिक तिपर शिकोह के साथ पीछे लौटे।

इस समय औरंगजेब के बाईं पक्ष में घनघोर युद्ध मचा हुआ था। वहाँ छत्रसाल हाड़ा के नेतृत्व में शाही सेना पूरी ताकत से मुराद को दबोच रही थी। राव छत्रसाल चाहते थे कि मुराद और औरंगजेब की सेना में दरार पड़ जाय।

वह चुने हुए राजपूतों को ले तलवारें चमकाता हुआ तीर की भाँति दुश्मन की फौज के मध्य भाग तक बेंधता चला गया और औरंगजेब पर टूट पड़ा। मुराद और औरंगजेब के बीच दरार पड़ गई। परन्तु औरंगजेब के शरीररक्षकों ने छाती की दीवार अड़ा कर राजपूतों को रोका। राजपूतों की उन वीरों के सामने एक न चली। छत्रसाल हाड़ा अपने चिर शत्रु नजाबत खाँ की छाती चीरने के लिए उसे ढूँढ़ रहा था। नजाबत खाँ भी घात ही था—वह खून भरी तलवार लिए वीरों के दल बादल चीरता, छत्रसाल की आँखें निकालने को छटपटा

रहा था। छत्रसाल का घोड़ा औरंगजेब के हाथी के पास पहुँचा ही था कि नवाबत खाँ ने तलवार मारी। छत्रसाल ने पलट कर घोड़ा फेरा, इसी क्षण नवाबत खाँ की आधी तलवार छत्रसाल की आँख में घुस गई साथ ही छत्रसाल की तलवार नवाबत खाँ की छाती में। दोनों वीर एक साथ ही खून में लथपथ गिरे और रेलपेल मचाते हुए हाथियों के पैरों तथा घोड़ों की टापों में कुचल कर चटनी हो गए। शेष राजपूत भी तिल-तिल कट मरे।

: ५२ :

घमासान युद्ध

युद्ध के आरम्भ ही में दारा सेना के मध्य में अपनी जगह छोड़कर दलेल खाँ की मदद के लिए औरंगजेब की सेना के दाहिने पक्ष में घुस गया था। इससे भयानक गलती और क्या हो सकती थी। वह प्रधान सेनापति था और उसे समूची सेना पर संचालन और नियन्त्रण कायम रखना आवश्यक था—जिसका उसने तनिक विचार नहीं किया

वह नक्कारे पर डंका बजाता हुआ दुश्मन के सामने बढ़ता चला गया, जहाँ तोपें विकराल मुँह किए उसके स्वागत की प्रतीक्षा कर रही थीं। वह क्षण भर बाद ही आने वाले खतरे से बिलकुल ही अनजान था। वह सेना को बढ़ावा देता हुआ और सेनापतियों से वीरता की बातें करता हुआ बढ़ा चला आ रहा था। इस मूर्ख ने स्वयं आगे आकर अपने तोपखाने को गोलाबारी करने से रोक दिया था। साधारण हानि न थी।

दुश्मन की तोपें चुप थीं। परन्तु ज्योंही दारा की सेना उनकी मार में पहुँची वे एक साथ गर्ज उठीं। उनके साथ ही बन्दूकचियों बन्दूकों और चकमकदार तोपों की बाढ़ ने दारा की बढ़ती हुई सेना एकाएक ही भून डाला। सारी फ़ौज में एकदम भगदड़ मच गई

दारा ने अब अपने संकट को समझा। उसने तुरन्त तोपों को सामने लाने और बन्दूकचियों तथा फर्रागियों को आगे आकर लड़ने का आदेश दिया, परन्तु अब समय चूक चुका था और उसकी सारी सेना की तरतीब बिगड़ चुकी थी। सिपाही सिर्फ उनका मुँह ताके उधर ही भाग रहे थे। परन्तु दारा ने हिम्मत नहीं हारी। वह बड़ी बहादुरी से आगे बढ़ता गया। उसने हाथ का संकेत करके सेना को आगे बढ़ने को कहा—तोपें तो आग बरसा रही थीं, बन्दूक की गोलियाँ भूने डाल रही थीं, और तीरों से आसमान पटा जा रहा था, परन्तु दारा हिम्मत करके अपने वीर साथियों के साथ आगे बढ़ता ही गया। उसने कहा—"बहादुरो, दुश्मन की तोपें छीन लो!" और वह अपने वीरों के साथ औरङ्गजेब की तोपों तक जा पहुँचा। अन्त में उसने तोपों पर कब्जा कर लिया और जबरदस्ती दुश्मन की फौज में घुस पड़ा और ऊँटों, घोड़ों तथा बन्दूकचियों को काटता मारता औरङ्गजेब के सामने तक जा पहुँचा।

खतरा सिर पर देखकर औरङ्गजेब घबराया नहीं। उसने अपने उस्ताद शेख़मीर और दूसरे सेनापतियों को नई सेना देकर उस पर बगल से आक्रमण करने की आज्ञा दी। अब हाथापाई, तलवार और बर्छे चलने लगे। मरने वालों की चीख़-पुकार, जानवरों का चिंघाड़ना, घायलों का तड़पना, गर्दोग़ुबार, गर्मी सबने मिलकर घनघोर युद्ध का भयानक रूप धारण कर लिया। दारा खुद से अपने हाथी पर बैठा निरन्तर हाथ से इशारा करके सेनापतियों को बढ़ावा दे रहा था। दुश्मन पीछे हटता जा रहा था और लाशों के ढेर लग रहे थे।

परन्तु इस युद्ध में भी एक बेतरतीबी थी। सिर्फ वे ही सिपाही लड़ पाते थे जो आगे होते थे। यद्यपि तीरंदाज़ बड़ी फुर्ती से तीर फेंक रहे थे, और आसमान तीरों से पटा हुआ था परन्तु वे तीर सब व्यर्थ जाते थे, शायद इन तीरों में एक तीर शत्रु को घायल करता था। दारा के स्वयं इतने तीर बरसाए थे कि उसका तरकश खाली हो गया था।

औरंगजेब दूर नहीं था। वह हाथी पर बैठा अपने लोगों को उत्साहित कर रहा था। पर इसका कुछ भी परिणाम नहीं हो रहा था, लोग भाग रहे थे। अब उसके पास सिर्फ पाँच सौ सिपाही बचे थे। पर उसने निर्भय होकर प्रत्येक सरदार का नाम ले-लेकर पुकारा—"भाइयों, खुदा पर भरोसा करो, दक्कन यहाँ से बहुत दूर है—मरो या फ़तह हासिल करो," इसके बाद उसने आज्ञा दी कि इसके हाथी के पैरों में जंजीर डाल दी जाय और ऊँचे स्वर से बोल उठा कि या तो यहीं जान दूँगा या फ़तह हासिल करूँगा।

दारा ने सोचा कि अब औरंगजेब पर छापा मारा जाय। वास्तव में यह उसके लिए अलभ्य अवसर था। परन्तु भूमि पथरीली और ऊबड़-खाबड़ थी। शत्रु के सवार टीलों और मैदानों में गिरोह बाँधे तीर बरसा रहे थे और उनके कारण तेजी से दारा बढ़ नहीं पा रहा था। उसकी सेना भी पंक्तिबद्ध नहीं थी। वास्तव में औरंगजेब लड़ने के योग्य नहीं रह गया था। परन्तु दुर्भाग्य दारा के साथ था। उसने सोचा अरा फौज को सुस्ताने का अवसर दे दिया जाय और सेना को व्यवस्थित कर लिया जाय। इसलिए उसने सेना को रुकने की आज्ञा दे दी। उसकी यह आज्ञा ही उसके सर्वनाश का कारण बन गई। विजय के मद में मस्त उसके सैनिक एकाएक रुकने की आज्ञा सुनते ही हाथ रोककर आश्चर्य से परस्पर देखने लगे और विजय का वह बड़ा भारी मुहूर्त टल गया।

: ५३ :

मुराद का संकट

दारा जब फिर से औरंगजेब पर आक्रमण करने का इरादा कर रहा था, तभी उसने देखा कि सेना के वाम पार्श्व में भारी हलचल मची है, अभी वह कुछ सोच भी न पाया था कि एक मुसाहिब हाँफता

हुआ वह समाचार आया कि नवाबत खाँ के हाथ से राव छत्रसाल मारे गए और उनकी फौज घिर गई है। दारा इस खबर को पूरी सुन भी न पाया था कि एक दूसरा समाचार मिला कि बहादुर रुस्तम खाँ, मुहम्मद सुलतान और मीरबाबा बहादुर खाँ के हाथों मारे गए और उसकी सारी फौज भी भाग खड़ी हुई है।

दारा ने औरंगजेब पर छापा मारने का विचार त्याग दिया और बाईं ओर को दल दिया। भारी मार-काट करके मुहम्मद सुलतान और मीरबाबा ने बहादुर खाँ को अपने पीछे धकेल दिया। उनकी सेना मैदान छोड़ भाग खड़ी हुई। दारा ने इन शत्रुओं को पछाड़ कर पीठ फेरी ही थी कि उसे सूचना मिली, कि रामसिंह राठौर बड़ी वीरता से शत्रु सेना में घुस गया है और पूरी तरह घिर गया है। यह उधर बढ़ा। रामसिंह मुराद बख्श से लोहा ले रहा था। मुराद बख्श एक वीर योद्धा था—परन्तु रामसिंह भी एक बाँका वीर था। दोनों वीर बढ़-बढ़ कर हाथ मार रहे थे। जिस रास्ते रामसिंह ने शत्रु की सेना को भेद कर प्रवेश किया था, उस रास्ते लाशों के अम्बार लगे थे। मुराद की चाल उसके हाथों लपेटे में आ गई थी। उसने मुराद की हरावल को तोड़ डाला था। तोपखाना छीन लिया था और लड़खड़ाता उसा हवा में खून से भरी तलवार हिलाता वह मुराद के हाथी पर जा धमका था। एक ही वार में उसने महावत को मार गिराया था और शाहजादे के चेहरे पर तीन घाव कर दिए थे। यदि मुराद बख्श फौलाद की जम्बारी में न होता तो उसके टुकड़े टुकड़े हो गए होते। मुराद यद्यपि वीर था, परन्तु इस समय वह बड़े दबाव में फँस गया था। उसके पास बहुत कम सेना बच रही थी और महावत मर चुका था। वह स्वयं ही अपने हाथी को रेल रहा था। साथ ही अपने छः वर्ष के नन्हें बालक की रक्षा भी कर रहा था जिसे उसने इस युद्ध के मैदान में साथ रखने का खतरा उठाया था। बालक युद्ध को मनोरंजक खेल समझ रहा था, वह बारम्बार हौदे से मुँह निकाल कर झाँकता

था। मुराद ने अपनी टाँगों में उसकी गर्दन दबा ली और अपनी ढाल उसकी पीठ पर टाँप दी। फिर वह अपने भयानक शत्रु रामसिंह का निकट मुकाबिला करने लगा। जो उसके हौदे की रस्सियाँ काटने की चेष्टा कर रहा था। वीर रामसिंह अपने राजपूत योद्धाओं के साथ घोड़े से कूद पड़ा और अपनी तलवारों और भालों से अम्बारी की रस्सियों को काटने लगा। हाथी घायल होकर चिंघाड़ने लगा और मुराद को अब जीवन की कुछ भी आशा न रही। परन्तु उसने उसी समय साहस करके एक तीर मारा जो रामसिंह की छाती को चीर कर पार निकल गया। रामसिंह तुरन्त बेदम होकर हाथी के पैरों में लुढ़क गया, जिसे बौखलाए हुए हाथी ने कुचल डाला।

अपने वीर स्वामी को इस प्रकार मरते देख राजपूत बौखला उठे। वे जीने-मरने की चिन्ता छोड़ मरने-मारने लगे। दारा अभी वहाँ पहुँच भी न पाया था कि इस वीर के मरने की सूचना मिली। वह तेजी से मुराद के हाथी की ओर लपका। यद्यपि वह औरंगजेब को पकड़ लेना चाहता था पर मुराद की गिरफ्तारी भी वह कम महत्व की नहीं समझता था। मुराद अब भी राजपूतों से घिरा हुआ था और उसके बचने की कोई आशा न थी। उसकी सेना छिन्न-भिन्न हो चुकी थी।

परन्तु होनहार कुछ और ही था। इस समय खलीलुल्लाह खाँ, जो तीस हजार ताजा और उत्तम सवारों का नायक था और जो यदि ईमानदारी दिखाता तो हिन्दुस्तान की बादशाहत का मालिक ही कुछ और होता। परन्तु उसने अपनी सेना को बिल्कुल लड़ाई से अलग रखा। सेना लड़ने के लिए उतावली हो रही थी परन्तु वह उसे यही दम-दिलासा दे रहा था कि अभी नहीं। अभी वक्त नहीं आया है। वह चुपचाप निकट ही खड़ा तमाशा देखता रहा।

जब क्यों ही उसने दारा को इस प्रकार मुराद पर धावा करते देखा, वह विद्युत्गति घोड़ा दौड़ाता हुआ दारा के सामने आया और

दस्तबस्ता होकर बोला—"मुबारकबाद हजरत सलामत, अलहम्दुलिल्लाह, हुजूर को बखैर बसलामती फतह मुबारक हो। लेकिन हुजूर, यह तो फर्माएँ कि ऐसे खतरनाक मौके पर, जब अम्बारी के सायबान से गोलियाँ और तीर पार हो रहे हैं, इतने बड़े हाथी पर क्यों सवार हैं। अगर खुदा-न-खास्ता बेशुमार तीरों और गोलियों से कोई जिस्मे मुबारक को छू जाय तो हम लोगों को तो मुँह दिखाने का कहीं ठिकाना न रहेगा। खुदा के वास्ते जल्द उतरिए और घोड़े पर सवार हो लीजिए। अब रहा ही क्या है, सिर्फ चन्द मनोहरों को चुस्ती और मुस्तैदी से सीधा करना और औरंगजेब को गिरफ्तार करना। मैं जानता हूँ कि हुजूर इस वक्त थक चुके हैं मगर यही मौका है। वह औरंगजेब घोड़े से साथियों के साथ खड़ा है। आइए और मेरे ताजा दम रिसाले के दस्ते को लेकर, जिसे मैंने अभी तक लड़ने से रोक रखा है, बाबा बोल दीजिए।"

गरीब दारा बिना सोचे-समझे वह भारी भूल कर बैठा और हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो गया। वह नहीं जानता था कि मैं हाथी से नहीं उतर रहा हूँ बल्कि हिन्दुस्तान के तख्त को हाथ से गँवा रहा हूँ।

५८

दारा का पलायन

खानजहाँ लोदी और रामसिंह राठौर की सहायता के लिए दारा की सारी सेना को दाहिनी ओर मुड़ना और भारी अवरोध का सामना करना पड़ा था। इस लम्बी और थकाने वाली आवाजाही से सैनिक थक गए थे। तेज धूप में दम घोटने वाली आँधियाँ आ रही थीं और चलती हुई रेत उनके मुँह और आँखों में भर रही थी। प्यास बुझाने के लिए एक बूँद भी पानी उनके पास न था। इसी समय शाहजादा मुहम्मद सुलतान एक मजबूत दस्ता लिए दारा पर आक्रमण

करने के लिए आगे बढ़ा। इसके साथ ही दाहिनी ओर की विजयिनी सेना भी बढ़ी। सामने औरङ्गजेब की तोपें मुँह बाए तैयार खड़ी थीं। वास्तव में लड़ाई का अन्त आ ही चुका था। इसी समय दारा हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हुआ। परन्तु, हाथी के हौदे से दारा के उतरते ही फौज में कुहराम मच गया। पहले से लगे-बँधे गद्दारों ने चिल्लाना शुरू कर दिया कि दारा मारा गया। दारा के हाथी के हौदे को सूना देखकर फौज को भी यही विश्वास हो गया। दारा लश्कर, आँधी में जैसे बादल भागते हैं, इधर उधर भागने लगा। बहुत लोग जिन्हें प्रथम ही से इस काम के लिए तैयार रखा हुआ था, चिल्ला-चिल्ला कर यह कहते हुए भाग चले कि भागो-भागो, औरङ्गजेब नई फौज लिए आ रहा है।

दारा लश्कर को इस तरह भागते देख हैरान हो गया। अब उसे अपनी पहाड़-सी भूल समझ पड़ी और सलीमुल्लाह पर सन्देह हुआ। उसने हकबकाकर इधर उधर देखा और पूछा—'सलीमुल्लाह कहाँ है?"

परन्तु सलीमुल्लाह अब कहाँ कहाँ था। वह तो अपने लश्कर के साथ दौड़ा हुआ औरङ्गजेब की ओर जा रहा था। दारा अब सब समझ गया। वह क्रोध में पागल होकर उस विश्वासघाती को गालियाँ देने लगा। वह बारम्बार कहने लगा—'अब मैं उस कमीने कुत्ते और उसके बाल-बच्चों को जीता न छोड़ूँगा।' परन्तु शोक, वह सब गुस्सा व्यर्थ था। सेना में अब पूरे तौर पर उसके मर जाने की अफवाह फैल चुकी थी और सारी ही फौज में भगदड़ मची हुई थी। लड़ाई शुरू हुए अभी सिर्फ तीन ही घण्टे हुए थे, इतने ही में इतने बड़े महा साम्राज्य के भाग्य का फैसला हो गया। देखते ही देखते इतनी बड़ी बादशाहत उजड़ गई। यह मुगलों की मूर्खतापूर्ण अव्यवस्थित रणनीति का परिणाम था। चारों ओर घायल और मुर्दे सिपाही और हाथी, घोड़े, ऊँट पड़े थे। धूप चमक रही थी। दारा के मित्रों, सेनानायकों में

बहुत कम ऐसे थे जो लड़ रहे थे। बड़े-बड़े सरदार मारे जा चुके थे। बहुत भाग भूग चुके थे।

अब क्षण-क्षण में उसके बन्दी हो जाने का भय था। इसलिए उसने बचे हुए शुभचिन्तक सरदारों की सम्मति से अविलम्ब युद्धस्थल को त्याग कर पलायन किया।

: ५५ :

भाग्य का हेर-फेर

औरङ्गजेब को अपनी विजय की कुछ भी आशा नहीं रही थी। उसकी आधी सेना भाग चुकी थी। कठिनाई से सिर्फ पाँच सौ आदमी उसके इर्द गिर्द रह गए थे। परन्तु वह जीवन-मरण की बाजी लगा चुका था। उसने लड़े-लड़े मर जाने का निर्णय किया था। अब उसकी आशा खलीलुल्लाह पर निर्भर थी, जिसकी उसे क्षण क्षण प्रतीक्षा हो रही थी। वह दूर तक आँखें फाड़-फाड़कर शत्रु की सेना की गतिविधि देख रहा था। चारों ओर तीर बरस रहे थे—गोलियाँ सनसनाती हुई उसके कान के पास से गुजर रही थीं, परन्तु उसको इन सब की कुछ भी परवा न थी।

एकाएक उसे शत्रु सेना में परिवर्तन के चिह्न देख पड़े। उसने क्षणभर ही में देखा कि दारा का विशाल हाथी सूना है और क्षणभर बाद ही देखा कि शत्रु सेना में भगदड़ मच गई है, साथ ही उसने अकस्मात् अपने वाम पार्श्व में गर्द का एक बादल उठता देखा। पहले तो उसे भय हुआ कि उसे गिरफ्तार करने को शत्रु की सेना आ रही है। वह सिहर उठा। परन्तु वह अपने चारों ओर शत्रुओं को भागते देख रहा था। भय और आश्चर्य से उसकी आँखें फटी पड़ रही थीं।

उसने दोनों हाथ आकाश की ओर उठा कर अपनी सेना को ललकारना प्रारम्भ किया—उसके आस-पास के वीर भी तलवारें ऊँची

करके 'अल्ला हो अकबर' का नाद कर उठे। इसके क्षणभर बाद ही उसने खलीलुल्लाह खाँ को सेना के आगे आगे आते देखा, वह हर्ष से चिल्ला उठा।

खलीलुल्लाह खाँ के आधीन जो तीस हजार सेना थी उसमें से इस समय केवल पाँच हजार सेना इस विश्वासघात में उसका साथ दे सकी। अपने पाँच हजार गद्दार साथियों को लेकर उसने औरङ्गजेब को आकर मुबारकबादी दी। औरङ्गजेब ने तुरन्त विजय के नक्कारे पर डंका पड़ने की आज्ञा दे दी। दिशाएँ गूँज उठीं और औरङ्गजेब की भागती हुई सेना लौट पड़ी मुराद भी आगे बढ़ कर औरङ्गजेब से आ मिला। मुबारकबादी की झड़ी लग गई और सेना जयजय नाद कर उठी।

खलीलुल्लाह खाँ ने अदब से आगे बढ़कर औरङ्गजेब से कहा—"हजरत सलामत को फतह मुबारक।" औरङ्गजेब ने मुस्कुरा कर मुराद की ओर देखा और कहा—"यह सब आला हजरत की बर्कमिर्दी और दिलेरी का नतीजा है जो तवारीख में हमेशा कायम रहेगा।" इसके बाद उसने खलीलुल्लाह खाँ को मुराद के सामने पेश करते हुए कहा—"यह अमीर वक्त का वह वफादार खादिम है जिसका बानी मुतलिबा सल्तनत में मिलना नामुमकिन है। आला हजरत की फैयाजियों से भी यह पूरे तौर पर परिचित है और बखूबी जानता है कि अपने बादशाह की खिदमत कैसे की जा सकती है।"

मुराद इन सब बातों को सुन कर खुश हो गया, फिर उसने खलीलुल्लाह खाँ की और खलीलुल्लाह खाँ ने मुराद की तारीफों के पुल बाँधे। परन्तु औरंगजेब ने बीच ही में बात काट कर कहा—"हजरत, अब सबसे जरूरी काम जो हमें करना है, वह दारा की गिरफ्तारी और उसकी छावनी पर कब्जा करना है।" उसने तुरन्त अपनी सेना को सुसज्जित किया। लड़ाई खत्म हो चुकी थी और वह अपनी विजयिनी (?) सेना को धीरे-धीरे आगे बढ़ाता हुआ दारा के खेमों तक जा पहुँचा। वहाँ आकर उसने आज्ञा दी कि खेमे चारों ओर से घेर लिए

जायें और उनके शिर्शगिद की जमीन खुदवाकर देखी जाय कि कहीं उनके नीचे बारूद न भरा हो। अब जब उसे अच्छी तरह तसल्ली हो गई तो वह मुराद बख्श के साथ हाथियों से उतर कर दारा के खीमों में प्रविष्ट हुआ।

औरंगजेब ने मुराद को दारा की मसनद पर बैठाया और सामने खड़े होकर मुस्कुराते हुए कहा—"मुबारक बादफिनाह, यह हुजूर की बादशाहत का पहला दिन है।" इसके बाद उसने तीन बार कोर्निश की और हाथ बाँधे अदब से एक तरफ खड़ा हो गया।

इसके बाद अलीमुल्लाह खाँ की बारी आई और उसे बहुत कुछ इनाम इकराम के बाद वजीरे आजम बना दिया गया।

इसके बाद औरंगजेब चुने हुए विश्वस्त सेवकों और सरदारों के साथ उस घमण्डी और मूल भाई को मनसूबे बनाने और खुशामदियों की बातों में उलझने को छोड़ कर स्वयं आवश्यक व्यवस्था करने को अपनी छावनी में चला। सच पूछा जाय तो अभी उसपर भारी जिम्मेदारियाँ थीं। उसने कुछ अफसरों को दारा की छावनी और माल असबाब, तोप, खीमे, खजाना, गोलाबारूद सब कुछ लूट-पाट कर कब्जे में करने को नियत कर दिया और बाकी सेना को उसने वहीं विश्राम करने और खाना बनाने की आज्ञा दी। फिर वह अपने खीमे पर पूरे पहरे का प्रबन्ध करके अकेला उसमें चला गया। उसे अब बहुत से महत्वपूर्ण पत्र लिखने थे और बहुत नाजुक मसलों पर गौर करना था।

वह बादशाहों के भाग्य परिवर्तन करने वाली लड़ाई सिर्फ तीन घण्टे ही में खत्म हो गई। शाही सेना की ओर के नौ राजपूत और उतने ही मुसलमान उच्च पदाधिकारी मारे गए। बागी लड़ाइयों के विजेता बूँदी के छत्रसाल भी अपने भाई बन्धों समेत यहीं खेत रहे। ईरानियों और उजबकों के विरुद्ध लड़े जाने वाले युद्धों का विजेता बहादुर खाँ उर्फ फिरोज जंग भी इस युद्ध में काम आया। औरंगजेब की सेना का केवल एक उच्चाधिकारी मरा—आजम खाँ—वह भी

किया। इस समय उसके साथ सिर्फ पाँच सौ सवार थे जिनमें बहुत से तो उसके घर के गुलाम और सेवक ही थे। बादशाह ने जो शाही खजाने से सोने की मुहरें लादकर उसके साथ भेजी थीं वह तथा अपने पास के हीरे जवाहरात और नकद रुपए आदि जो कुछ इस जल्दी में वह साथ ले सकता था ले लिए।

यह प्रतापी राजकुमार, आज सूर्योदय के समय समस्त भारतवर्ष का शहनशाह होने का स्वप्न देख रहा था और आज सुबह तक बड़े राजपुत्र जिसकी कृपाकोर के भिखारी थे—आज इस दीन दशा में घर से जा रहा था कि शत्रु को भी उस पर दया आ रही थी।

: ५७ :

आगरे में

आगरे पहुँचकर—नगर से दो मील दूर मुरमंजिल नामक एक बड़े महल में औरंगजेब ने पड़ाव डाला। पहरे और जासूसों का पूरा प्रबन्ध करके उसने एक बार लश्कर पर गहरी दृष्टि डाली और उसे जश्न मनाने की आज्ञा देकर अपने फैलाए हुए जालों के ताने-बाने पर विचार करने लगा।

सबसे पहिले—क्योंकि औरंगजेब को यह सूचना मिली कि दारा ने दिल्ली की ओर कूच किया है, उसने तुरन्त अपने साहसी और विश्वासी सरदार बहादुर खाँ की अधीनता में एक मजबूत फौज का दस्ता देकर उसके पीछे भेज दिया और आज्ञा जारी कर दी कि दिल्ली-आगरे के सब रास्तों पर चौकियाँ बैठा दी जाएँ कि कोई आदमी या कुछ भी सामान किसी भी रास्ते से दारा को न मिल पाए।

इसके बाद उसने बादशाह को एक खत लिखा—उसमें लिखा था—"दारा शिकोह की बजराई और बेजा कार्यालाप के बारे में जो शिकायत पेश आए, उनके लिए औरंगजेब को बहुत ही रंज और

चाहता है। हुजूर की तबियत अब अच्छी होती जाती है, इसके लिए हुजूर की खिदमत में मुबारकबाद अर्ज करने और महज इस मकसद से कि जो कुछ इर्शाद हो उसकी तामील की जाय, यह खादिम आगरे में आया है।"

यह खत उसने अपने खास खवासखास के द्वारा बादशाह के पास उसी समय रवाना कर दिया, साथ ही प्रेम और सम्मान सूचक सैकड़ों निशानात भी भेज दिए।

दूसरा पत्र उसने शाइस्ता खाँ को लिखा जो बादशाह का साला और उसका मामा तथा आगरे में उसका सबसे बड़ा मुसाहिब और शुभचिन्तक मित्र था। वह एक अत्यन्त चतुर, बुद्धिमान और शक्तिशाली दरबारी था। उसे औरङ्गजेब ने लिखा—

"मुझे यह जानकर निहायत खुशी हो रही है कि जिस दाग ने आपके साथ हर दर्जे की कमीनी हरकतें की थीं और जिसे आप दिल से नफरत करते थे, उससे आपके इस सेवक ने पूरा बदला ले लिया है। अब आप उन सब जरूरी मसलों पर तैयारी कर लीजिए जो आपको पोशीदा तौर पर पहिले ही बता दिए गए हैं। इसके बाद आप आगरे के कर्ता-धर्ता और मालिक हैं।"

यह खत रवाना कर देने के बाद वह कुछ देर तक चुपचाप कुछ सोचता रहा, फिर उसने एक और खत लिखा। यह खत उसने मीर जुमला को लिखा था—उसमें लिखा था "आपका मनचीता हो गया, दुश्मन नामस्त हो गए। अब आपको झूठ मूठ कैद रहने की कोई जरूरत नहीं है। आपके बाल-बच्चे दुश्मनों के हाथ से अब आजाद हैं। हमारे सच्चे खैरख्वाह शाइस्ता खाँ और प्यारी बहिन रोशनआरा ने उन्हें बखूबी आराम और हिफाजत से रखा है। चलाइ, अब आप फौरन ही आगरे आकर मुझसे मिलिए, ताकि बहुत ही जरूरी मसलों पर और किया जाय—क्योंकि आप बखूबी जानते हैं कि आप ही मुझ अन्धे की लकड़ी हैं और आपकी आँख औरङ्गजेब की आँख है।"

यह खत उसने अपने बहनोई मीरबाबा को देकर कहा—"इसे जितना जल्द मुमकिन हो किसी अपने खास आदमी के हाथों औरंगाबाद अभी रवाना कर दो और ताकीद कर दो कि जितनी जल्द मुमकिन हो यह खत को ठिकाने पहुँचा दे। मैं चाहता था कि यह खत तुम खुद ले जाओ मगर मैं तुम्हें दूर नहीं कर सकता—तुम्हारी मदद की मुझे और भी सख्त जरूरत है।"

मीरबाबा खत लेकर हँसता हुआ और सिर हिलाता हुआ चला गया।

औरङ्गजेब कुछ देर उसकी ओर देखता रहा—और मन-ही-मन वह बड़बड़ाया। इसके बाद उसने और एक खत लिखा—यह खत उसने मिर्जाराजा जयसिंह को लिखा—उसमें लिखा था—

"दारा बिल्कुल तबाह हो गया—और वह बड़ा लश्कर भी जिसका उसे भरोसा था—शिकस्त खाकर हमारे कब्जे में आ गया अब वह ऐसी बेबसी सामानी से भागा जा रहा है कि सवारों का एक रिसाला भी उसके साथ नहीं है। उम्मीद है हम बहुत जल्द उसे गिरफ्तार कर लेंगे। इधर हजरत बादशाह सलामत इस कदर अलील हैं कि सिर्फ चन्द रोज के मिहमान हैं। इसलिए अगर आप हमारा मुकाबिला इस हालत में करेंगे तो नतीजा बहुत जल्दी के और इसाफत के कुछ न होगा। इसके सिवा—इस अबतर हालत में दारा की तरफदारी करना निहायत नादानी है। आपके हक में अब यही बेहतर है कि हमारे पास हाजिर हों और सुलेमान शिकोह को—जो बड़ाबानी गिरफ्तार हो सकता है पकड़ कर हमारे हुजूर में पेश करें।" यह खत रवाना करके उसने अपनी कमर खोली और आराम किया।

दूसरा दिन निकला। एक-एक करके अनेक अमीर उमरा आकर मत्थर गुजारने लगे। सबसे प्रथम शाइस्ता खाँ ने आकर मुबारकबाद दी और बहुमूल्य भेंट पेश की। इसके बाद मुहम्मद अमीन खाँ ने जो कि मीरजुमला का बेटा था आकर कदमबोसी हासिल की। फिर और भी

अमीर उमराओं का ताँता बँध गया। इन सबको पहिले ही ठीक कर लिया गया था। और अब, जब औरङ्गजेब ने उनका स्वागत सत्कार किया और उन्हें खिताब और जागीर बख्शी तो सब खुश हो गए। सिर्फ तीन अमीर ही बच रहे थे जो औरङ्गजेब से मिलने नहीं आए। एक दानिशमन्द खाँ जो एक विख्यात विद्वान था—दूसरा मुकर्रम खाँ जो शाही हकीम था और तीसरा अबद खाँ जो शाहजहाँ का विश्वासी वजीर था।

इन तीनों के नाम औरङ्गजेब की दृष्टि में चढ़ गए। परन्तु उसने प्रकट में अपने भावों को जाहिर नहीं होने दिया।

मेंट मुलाकातों के खतम होने पर सब सरदारों को मुराद की मुसाहिबी में छोड़कर वह अपने एकान्त खीमें में चला गया। वहाँ सबसे पहिले उसे बादशाह का खरीता मिला। उसमें लिखा था—

"बेशक बाप ने जो कुछ किया, नालायकी और बेसमझी से दूर था। तुम पर तो हम हमेशा ही से शफकत रखते हैं। अब तुमको हमारे पास चले आना चाहिए, ताकि तुम्हारे मशिरे से उन उमूर का इन्तजाम किया जाय जो इस गड़बड़ के बाइस खराब और अबतर पड़े हैं।"

इस खत को पढ़कर औरङ्गजेब मुस्कुरा दिया और उसे एक बार फेंक कर उसने दूसरा खत पढ़ा।

यह उसकी बहन रोशनआरा का था, उसमें लिखा था कि "खबरदार किले में आने का कस्द न करना, तुम्हें मार डालने के तमाम काम किये हुए हैं। बेगम ने सौ तातारी बाँदियाँ वहाँ तहाँ छिपा रखी हैं, जो तुम पर अपनी बड़ी बड़ी तलवारें लेकर टूट पड़ेंगी और वे उजबक गुलाम भी जो अपने हथियारों को बखूबी इस्तेमाल करना जानते हैं तुम्हारी घात में हैं।"

इस खत को पढ़कर उसके होंठ सिकुड़ गए और उसने उसे मोड़-

रहा। फिर उसने अत्यन्त गुप्त रीति से शाइस्ता खाँ को बुला भेजा। जब दोनों कोने में बैठे—बाहर कड़ा पहरा लगा दिया। एकान्त होने पर शाइस्ता खाँ खिलखिला कर हँस पड़ा।

औरङ्गजेब ने मुस्कुरा कर उसके दोनों हाथ पकड़ लिए और कहा—"मैं समझता हूँ—नये जहाँपनाह बिल्कुल मौज में हैं।"

"जी हाँ, खूब दाल रहे हैं, मुजरे हो रहे हैं।"

"बादशाह हैं, वे जो चाहें कर सकते हैं" औरङ्गजेब ने एक भेद भरी नजर से शाइस्ता खाँ की ओर देखा, फिर कहा—

"वे बहुत तैयार हैं।"

"वे हाजिर हैं।"

"सील मुहर और दस्तखत सब ठीक हैं?"

"देख लीजिए।"

उसने कुछ खत निकाल कर औरङ्गजेब के सामने पेश किये, और उसने खूब गौर से देखकर कहा—

"सुभान अल्लाह, बखूबी काम हो जायगा। तो मेरे दरबार में आप खुद ये खत पढ़कर सुनाएँगे। मैंने हुक्म दे दिया है। मैं अभी दरबार किया चाहता हूँ।"

शाइस्ता खाँ ने स्वीकार किया। औरङ्गजेब ने एक कीमती मोतियों की माला गले से उतार कर शाइस्ता खाँ के गले में डालते हुए कहा—

"आप यह न समझें कि आपकी खिदमत का यह नाचीज बदला है, बदला तो मैं आपको दे ही नहीं सकता। मगर हाँ जब आप आवरे के हाकिम हो जाएँगे तो जरा मुझे तसल्ली होगी। मगर इसके लिए आपको दो चार दिन अभी सब्र करना होगा।"

शाइस्ता खाँ ने हँसकर उठते-उठते कहा—"सब्र जितना कहिए मैं कर लूँगा—फिलहाल सूबा हाजिर।"

दोनों माला मान्ये गले मिले। औरङ्गजेब इस वक्त अपनी बादशाही शान भी भूल गया।

नक़ीब ने ख़बर दी कि दरबार की तमाम तैयारियाँ हो गई हैं और दरबारी अमीर उमरा हाज़िर हैं। औरंगज़ेब धीरे-धीरे उठकर दरबार वाले डेरे में गया। मुराद वहाँ पहिले ही मसनद पर बैठा था। औरंगज़ेब ने उसका आदाब बजाया और उसके इशारा करने पर बग़ल में अदब से बैठ गया। दरबार की कार्यवाही शुरू हुई।

औरंगज़ेब ने तमाम दरबारियों और अमीरों को सम्बोधन करके कहा—"आज आपको यहाँ देखकर हमें बहुत ख़ुशी हुई है और हम तस्लीम करते हैं कि हमें जो कुछ कामयाबी हुई है वह आप लोगों की मदद और ख़ाहिशाना मशवरे से ही हुई है। इसके लिए हम आपके बहुत-बहुत ममनून हैं और आपको इत्मीनान दिलाते हैं कि क़रीबी सब गड़बड़ मिट जायगी आप लोगों के ख़तरे और बदीके दूरन्द कर दिए जाएँगे और मुनासिब तौर पर मुहिमा अदा किया जायगा। सिर्फ़ एक सोचना यह है कि तख़्तनशीनी का इन्तज़ाम कैसे किया जाय और हज़रत सलामत को बहुत बीमार होने से तख़्तनशीनी का बोझ उठा नहीं सकते, उनका क्या बन्दोबस्त किया जाय। हज़रत ने हमें दर्बार में तलब फ़र्माया है। आप लोग मुनासिब समझें तो क़िले में चलकर हुज़ूर की क़दमबोसी हासिल करें और उनका हुक्म बजा लाएँ।"

इतने ही में एक आदमी ने आकर ज़मीन चूमी और अर्ज़ की—"हुज़ूर, ख़ुदावन्द, बहादुर ख़ाँ ने एक आदमी को एक ख़त के साथ गिरफ़्तार किया है, जो क़िले से दिल्ली जा रहा था। हुक्म हो तो वह ख़िदमत में हाज़िर किया जाय।"

औरंगज़ेब ने चकित होकर अपने चारों ओर देखा और कहा—"क्या उसे यहाँ बुलवाया जाय, या तफ़्तीश में उसकी खोज की जाय?"

शाइस्ता ख़ाँ ने कहा—

"उसे यहीं बादशाह के रूबरू हाज़िर किया जाना चाहिए और भरे दरबार में वे चिट्ठियाँ खोली जानी चाहिए जिससे उनकी असलियत सबको मालूम हो जाय।"

अब लाचारी का भाव प्रकट करते हुए औरंगजेब ने मुराद की तरफ देखा। मुराद ने कहा—

"उसे इसी वक्त हमारे रूबरू हाजिर किया जाय।"

काजिद हाथ बाँधकर लाया गया। वह खत जो उसके पास से बरामद हुआ था पेश किया गया। उसने तसलीम किया कि हजरत बादशाह सलामत और बेगम साहिबा ने वह खत उसे देकर दारा के पास भेजा था। मुराद के हुक्म से शाइस्ता खाँ ने खोलकर खत पढ़ा। उसमें लिखा था—"मेरे प्यारे बेटे, तुम आगरे से दूर न जाना, क्योंकि वह वक्त करीब है जब तुम देखोगे कि तुम्हारे भाई और स्वाह दिल भाई उसी आदमी के हाथों अपनी करनी को पहुँचेंगे, जो बद किस्मती से उनका बाप है। कमीनी और जंगली हरकत करनेवाले मुराद और औरंगजेब जरूर किले में आएँगे मगर एक बार अन्दर दाखिल होने के बाद वे कैदी हो जाएँगे और दूसरे लोग उन्हें कब्रों पर उठाकर ले जाएँगे। उस वक्त मेरे प्यारे बेटे, तुम आगरे पहुँचकर आराम से हिन्दुस्तान पर हुकूमत करना।"

खत का मजमून सुनते ही औरंगजेब के चेहरे का रंग फ़क हो गया। वह अपने पाँव पटकने लगा और हाथ मसनद पर मारने लगा। उसकी आँखों में भय और विस्मय का जैसे तूफान आ गया हो। मुराद गुस्से से होंठ चबाने लगा। दरबारी दंग रह गए।

औरंगजेब ने इस तरह अपना सिर झटका लिया कि जैसे वह बहुत सोच में पड़ गया हो फिर एकाएक उत्तेजित होकर बोला—"नहीं, नहीं, हम यकीन नहीं कर सकते। यह खत जाली है, इसे दुबारा पढ़ा जाय। दुश्मन चाहते हैं कि हम अपने प्यारे बुजुर्गवार से दूर रहें। नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, हम उनसे मिलने को बेकरार बेकरार आएँगे।"

इस पर शाइस्ता खाँ ने आँखें कपार पर चढ़ाकर कहा—

"दुश्मन को इस तरह अपनी जान जोखिम में नहीं डालनी चाहिए। इसमें जो कुछ लिखा है नामुमकिन नहीं है।"

इसपर औरंगजेब ने कहा—"मैं चाहता हूँ कि सब उमरा इस खत की लिखावट पर गौर करें और देखें कि कहीं यह खत जाली तो नहीं है।"

तमाम अमीरों ने खत को उलट-पलट कर देखा और एक राय होकर कहा—

"खत असली है और आपको किले में जाने का खतरा नहीं उठाना चाहिए।" इससे औरंगजेब ने बहुत रंज प्रकट किया और खाफी का भाव प्रकट करके दरबार बर्खास्त किया। इसके बाद अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को चुपचाप शहर पर रवाना करके किला घेर लेने के लिये रातों-रात रवाना कर दिया।

: ५८ :

कैद में

बादशाह ने जब यह सुना तो वह गुस्से से थर-थर काँपने लगा। परन्तु उसका क्रोध निरर्थक था। उसकी हालत उस शेर के समान थी जो बूढ़ा और घायल हो और पिंजरे में बन्द हो। उसके पास न सेना थी—न सहायक। सारे दरबारी अमीर, जिन्हें उसने बड़ी-बड़ी जागीरें दी थीं और जिन्हें उसने भिखारी से अमीर बनाया था, उसे छोड़ गए थे। सिर्फ वजीर असद खाँ अकेला बादशाह के पास था। किले की रक्षा के लिए जो सेना नियत थी, उसके भी बहुत से सिपाही मायसूब गए थे।

बादशाह की उम्र अब अड़सठ साल की थी और वह बहुत कुछ राज कर चुका था। वह अपनी बीवियों और महल की औरतों से घिरा था, जिनकी संख्या अब भी दो हजार के लगभग थी।

उसने वजीर असद् खाँ से सलाह की। असद् खाँ ही अब उसका सहारा था। उसकी औरङ्गजेब को फँसाने की सारी तदबीरें जाती रह चुकी थीं। असद् खाँ ने सारे किले का एक चक्कर लगाया। किले के सब फाटक बन्द करा दिए और जो सिपाही मिले उनको एकत्र कर एक छोटी-सी सेना उसने सज्जित कर ली। फिरङ्गी तोपची अभी तक किले में मौजूद थे। उन्हें बुलाकर उसने तोपें तैयार कर उनसे औरङ्गजेब की फौज पर गोलाबारी करने का हुक्म दे दिया, जो अब किले के चारों तरफ घेरा डाले पड़ी थी और शहर पर जिसने अधिकार कर लिया था।

मुहम्मद सुलतान ने इन तोपों की कुछ भी परवाह न की। उसने उनका जवाब भी न दिया। उसकी फौज शहर के घरों की आड़ में आराम से अपना बचाव कर रही थी। परन्तु देर तक घेरा डाले पड़ा रहना औरङ्गजेब को पसन्द न था। गोलाबारी से भी किला तोड़ना सम्भव न था। क्यों घेरा डालने पर भी नतीजा कुछ न होता, यदि ये दोनों बिछड़ी भाई आपसे ही में रुके रह जाते तो उधर दारा को नई सेना भरती करने का अवसर मिल जाता। इसलिए औरङ्गजेब ने जमुना की ओर खुलनेवाली खिड़की के पास की बाहरवाली सब जमीन अधिकृत कर ली। इससे किले में जल आने के साधन रुक गए और किले के सब स्त्री-पुरुष प्यास से तड़पने लगे। अब बाहर से किले में रसद भी नहीं पहुँच सकती थी और खाने-पीने की चीजों की वहाँ बेहद तंगी हो रही थी। मुगल हरम जो केवल ऐश आराम का अभ्यस्त था, इस कष्ट और दिक्कत से सिर्फ दो ही दिनों में बेचैन हो उठा। किले में कुहराम मच गया। सब मूक-प्यास से घबरा उठे।

बादशाह ने बड़े दर्दभरे लहजे में औरङ्गजेब को लिखा कि वह बूढ़े बाप को प्यासा न मारे। परन्तु औरङ्गजेब ने कोई जवाब न दिया। परन्तु बात केवल यहीं तक न थी। वे फिरङ्गी तोपची भी जो केवल पेट का धन्धा करते थे, औरङ्गजेब के जादू से न बच सके। तीन दिन-रात निरर्थक गोलाबारी जारी करके एक दिन आधी रात के समय

प्रधान तोपची कमन्द के सहारे किले के बाहर कूद गया और उसके बाद उसके अन्य साथी भी। यह खबर जब बादशाह के अन्य खिदमतगारों और सिपाहियों को लगी तो वे भी एक-एक करके खिसक चले। प्रत्येक को अपनी जान के लाले लगे थे। अब तो जो कुछ जिसके हाथ लगा वही लेकर वह भाग निकला। खास खिदमतगार और खोजे—जो दीवाने खास और महलसरा पर मुकर्रर थे—वे भी भाग चले। इस प्रकार अपने समय का सबसे बड़ा और सबसे अमीर बादशाह शाहजहाँ इस समय अत्यन्त तुच्छ कैदी रह गया, जो अपनी ही परछाईं से डरता था और जिसे अपने प्राणों की अब बड़ी चिन्ता थी। तीन दिन उसने बड़ी कठिनाई से काटे।

इसी समय उसे औरंगजेब का एक खरीता मिला। उसमें लिखा था—

"मुझे अफसोस है कि हुजूर के हुक्मों में मेरी तरफ से तक्सीर हुई है। जिसकी वजह इसके सिवा कुछ नहीं कि मैं बीमार था और इसी वजह से हाजिरी से माजूर। इस अरसाह में मेरे मनचले सिपाहियों ने कुछ ज्यादतियाँ की हैं। जिनके लिए मैं माफी का खास्तगार हूँ और अर्ज करता हूँ कि हुजूर मेरे बेटे मुहम्मद सुल्तान को हुजूर में हाजिर होने और आदाब बजा लाने की इजाजत बख्शें। सेहत ठीक होने पर जिसमें बहुत थोड़ा अब देर नहीं है—मैं खुद बारगाही का फर्ज हासिल करूँगा।"

शाहजहाँ को डूबते को तिनके का सहारा मिला और उसे इसमें अपनी तजवीज की सफलता की कुछ आशा बँधी। उसने इस इलाज को स्वीकार कर लिया और बड़े ठाठ-बाठ से मुहम्मद सुल्तान की अगवानी की तैयारी की गई तथा उसे भेंट देने को मुल्कवान किमखाब के थान भी तयार किए।

बादशाह का विचार था कि इसी के बेटे को बहाना कर औरंगजेब को कत्ल कर दिया जाय। मगर वह नहीं जानता था कि उसे अपने

उस बेटे से वास्ता पड़ा है जिसकी तक़दीर में पचास साल हिन्दुस्तान की बादशाहत भोगनी और पृथ्वी के अमूल्य तख़्ते-ताऊस पर बैठना बदा था। औरंगज़ेब ने अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को समझा दिया कि किले में दाख़िल होते ही फ़ौरन पहरेदारों को क़त्ल कर देना और चन्द-से-चन्द भीतर दाख़िल होकर तमाम नाके क़ब्ज़े में कर डालना। इसके बाद किले में जो भी हथियारबन्द आदमी मिले, बिना ताम्मुल क़त्ल कर देना।

मुहम्मद सुलतान ने वही किया भी। किले का द्वार खुलते ही उन्होंने किले पर पूरी तौर पर कब्ज़ा कर लिया और किले के सब सिपाहियों को मौत के घाट उतार बादशाह के रंगमहल पर अपने विश्वस्त जनों का सुल्तैद पहरा बैठा दिया।

बादशाह को इस बोलेबड़ी की बिल्कुल आशा ही न थी। वह एक प्रकार से बेहोश होकर गिर गया। इसी समय मुहम्मद सुलतान ने एक विश्वस्त अफ़सर के हाथ औरंगज़ेब का सन्देश बादशाह के पास भिजवा दिया। जिसमें लिखा था—

"हुज़ूर, अब अपने रंगमहल में इत्मीनान और आराम से रहें और सब किस्म की फ़िक्र और परेशानियों से अपने आपको बरी समझें क्योंकि अब आप सल्तनत का बोझा उठाने के क़ाबिल नहीं रहे। मैंने सल्तनत का तमाम बोझ अपने कन्धों पर उठा लिया है।"

बादशाह बदहवास थे। परन्तु बेगम जहाँआरा और वज़ीर आदि ने बादशाह को यह परामर्श दिया और कहा कि यदि यह योजना सफल हो जाय तो औरंगज़ेब का खात्मा ही है। डूबते को तिनके का सहारा। बादशाह ने एक विश्वस्त लोगों के द्वारा मुहम्मद सुलतान से कहलाया—

"तुम जानते हो कि तुम्हें हम कितनी मुहब्बत करते हैं और जानते हैं कि तुम कितने लायक हो। पस, हमने इरादा कर लिया है कि हम तुम्हीं को ताजोतख़्त दें और हिन्दुस्तान का बादशाह बनाएँ

जिसकी तमाम तैयारियाँ मौजूद हैं। लिहाज़ तुम फ़ौरन हमारे पास आ जाओ।"

परन्तु बेचारा बूढ़ा बादशाह अपनी इस चाल में भी असफल रहा। मुहम्मद सुलतान नवयुवक तो था—परन्तु अत्यन्त बुद्धिमान और गौर विचारशील था। वह दादाजान की चिकनी-चुपड़ी बातों में नहीं आया। वह तो जानता था कि तमाम नगर, और दरबारी उसके बाप ने वश में कर लिए हैं इसलिए बूढ़े बादशाह की बात में कोई दम नहीं है। वह इसके योग्य नहीं। इसके सिवा वह कच्ची समझ का नवयुवक था, इसलिए साहस भी न कर सका। इसमें सन्देह नहीं कि बूढ़े बादशाह के प्रति लोगों में इतनी श्रद्धा अब भी थी कि यदि मुहम्मद सुलतान अपने अधीन सेना के साथ बूढ़े बादशाह को लेकर किले से बाहर होता और बादशाह की जो कुछ सेना जो तितर-बितर हो गई थी, एकत्रित हो जाती और वे औरंगज़ेब पर आक्रमण कर देते तो सम्भव था कि औरंगज़ेब की सेना में विद्रोह फैल जाता और औरंगज़ेब अपने पिता के सामने जाने का साहस न करता। यह सम्भव हो सकता था कि दादा को कैद से छुड़ाने की प्रतिज्ञा के साथ उसके भी मुहम्मद सुलतान को प्राप्त हो जाता। परन्तु उसके भाग्य में ग्वालियर के किले में कैदी होकर जीवन बिताना लिखा था। तख़्ते-ताऊस पर बैठकर हिन्दुस्तान का राज्य करना नहीं।

उसने जवाब दिया—

"अम्मा की आज्ञा से मुझे हुज़ूर में हाज़िर होने की इजाज़त नहीं। बल्कि ताकीद की गयी है कि किले के कुल दरवाज़ों और खज़ानों की कुञ्जियाँ फ़ौरन अपनी सुपुर्दगी में लेकर मैं वहाँ से बहुत जल्द वापस जाऊँ—क्योंकि वे हुज़ूर की बदमज़ेगी के निहायत मुश्ताक हो रहे हैं और सिर्फ़ इतनी ही देर है कि इस तरफ़ से इत्मीनान हो जाय तो फ़ौरन आ जायँ।"

बादशाह तावपेंच खाकर रह गया। परन्तु उसने एक बार फिर कहला भेजा—

"हम तुमसे तख्त की कसम खाकर कहते हैं और कुरान मजीद हमारे तुम्हारे दर्म्यान है कि अगर तुम इस वक्त ईमानदारी से पेश आओगे तो हम तुम्हीं को बादशाह बना देंगे। इस मौके को ग़नीमत जानो और फौरन चले आओ और दारा खान को कैद से छुड़ा लो और याद रक्खो कि इस तरीके आकबत के आलवा दुनिया में भी तुम्हें नेकनामी हासिल होगी। हम तुम्हें किले में पूरी तौर पर आने जाने की आजादी देते हैं।"

परन्तु मुहम्मद सुलतान पर इस कस्मा पुकार का भी कुछ असर नहीं हुआ। उसने कहला भेजा—

"ये सारी बातें बेअसर हैं। कुञ्जी चाबियाँ भेज दें, वरना मुझे जबर्दस्ती उन्हें लेना होगा।"

बादशाह ने सब ओर से निराश होकर चाबियाँ अन्ततः मुहम्मद सुलतान के सुपुर्द कर दीं और यह इरादा प्रकट किया कि यदि उसपर हमला किया गया तो वह अपने खानाबादा और लौंडियों और असद खाँ के साथ लड़ता हुआ अपनी जान दे देगा। अब असद खाँ ही उसका अकेला साथी रह गया था जो बादशाह की बेबसी पर आँसू बहाता हुआ नंगी तलवार हाथ में लिए बादशाह के कमरे के बाहर एक गुलाम की भाँति पहरा दे रहा था।

चाबियाँ भेजने के साथ बादशाह ने यह कहलाया कि—"अब औरङ्गजेब को यहाँ जरूर ही आना चाहिए और समझदारी भी इसी में है कि वह जल्द आकर हमसे मिले क्योंकि सल्तनत के बाब जरूरी इसरार हम उसे समझना चाहते हैं।"

: ५६

शह-मात

औरंगज़ेब बड़ी ही बेचैनी से मुहम्मद सुलतान के किले से लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था। रह रह कर उसके मन में संदेह हो रहा था कि कहीं वह नवयुवक शाहज़ादा अपने दादा से मिल जाय, दग़ा न करे। वह छत-छज्जे पर किले की ओर देखता और बड़बड़ा रहा था। उसका विश्वस्त अमीर एतबार खाँ हाथ बाँधे चुपचाप उसकी यह हरकतें देख रहा था। औरंगज़ेब ने अधीर होकर पूछा—"क्या वजह है कि मुहम्मद सुलतान के आने में देर हो रही है। दो दिन हो गए। क्या किले में कोई हंगामा हो गया है, या मुहम्मद सुलतान ने दग़ा की है।"

"दोनों ही बातें मुमकिन हैं।" एतबार खाँ ने धीरे से कहा। औरंगज़ेब ने उसे घूर कर देखा और बेचैनी से जीने में टहलने लगा।

इसी समय एक ग़ुलाम ने मुहम्मद सुलतान के आने की इत्तला दी। उसने कहा—

"ख़ुदावन्द, शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान किले से लौट आए हैं।"

"तो उन्हें यहीं ले आ।"

ग़ुलाम चला गया और मुहम्मद सुलतान ने आकर सलाम किया।

"चाबियाँ मिलीं?"

"जी हाँ," उसने चाबियाँ औरंगज़ेब के पैरों में डाल दीं।

"ख़ज़ाना?"

"हुक्म के मुताबिक़ तलाश करके उसपर अपनी सील-मुहर लगा दी है।"

"ठीक है। किले में अब कौन-कौन है?"

"सिर्फ हरम, औरतें, बच्चे, दादा जान और अबद खाँ, कुछ खानाबदोश।"

"अबद खाँ अभी है? खैर, ऐं, तुम रोते हो?"

युवक शाहजादे ने आँखें पोंछीं। उसने कहा—"दादा जान की आप से एक आरजू है।"

"कैसी आरजू?"

"यह खत है।" उसने खत औरंगजेब के हाथ में दिया और पीछे हट गया।"

"हुजूर का मिजाज कैसा है?"

"सुना है—वे बच्चों की तरह जोर-जोर से रो रहे हैं।"

औरंगजेब ने बादशाह के खत पर दृष्टि डाली और कहा—"आह अभी चन्द जरूरी मसले गौर करने को रह गए हैं।" उसने आस्तीन से एक कागज निकाल कर कहा—'यह फर्मान लो और अभी जाकर आगरे के कोतवाल का चार्ज ले लो और शहर के तमाम दरवाजों पर मुस्तैद पहरा बैठा दो। गैर तुम्हारे दस्ती फर्मान के कोई शख्स या माल असबाब शहर से बाहर न जाने पाएँ न आने पाएँ। जाओ।"

मुहम्मद सुल्तान ने चुपचाप कागज लिया और सलाम करके चला गया। अब उसने एतबार खाँ की ओर रुख किया। उसने कहा—"एतबार खाँ, मैं तुम पर सबसे ज्यादा जोखिम का भारी काम सौंपना चाहता हूँ।"

"गुलाम को जो खिदमत सौंपी जायगी उसे वह जान देकर भी पूरी करेगा।" एतबार खाँ ने कहा। औरंगजेब ने कहा—"हमें तुमसे इसी की उम्मीद है। तुम्हें मैं तमाम किला सौंपता हूँ। खबरदार रहो—हजरत आला को आराम महलसरा में रहने में कोई तकलीफ न हो। लेकिन अबद आदमियों को बाहर निकाल दो और नजर रखो कि बाहर का कोई आदमी या पैगाम किसी किस्म का अन्दर न पहुँचने पाए।"

"ऐसा ही होगा, हुज़ूर इत्मीनान रखें।"

"बेगम रोशनआरा को यहाँ हमारे हुज़ूर में भेज दो और वे जिस क़दर सामान साथ लाना चाहें, सो आने दो।"

"जो हुक्म।"

"अपनी ज़रूरत के लिए जैसा मुनासिब समझो, नए फ़ाटक और दरवाज़े तैयार करा लो जिनके दरमियान पोशीदा हो, और नज़र रखो कि हज़रत सलामत अपनी ख़िलवतगाह से बाहर न आने पाएँ।"

"जो इर्शाद।"

"जाओ, जितना मुनासिब समझो फ़ौज ले जाओ और मामू शाइस्ता ख़ाँ को अभी यहाँ भेज दो।"

एतबार ख़ाँ ने तीन बार सलाम किया और ख़ीमे से बाहर चल दिया।

औरंगज़ेब बड़ी देर तक हाथ मलता हुआ अकेला टहलता रहा। उसने अपने होठों ही में कहा—सिर्फ़ यह तलवार ही की लड़ाई नहीं है, दिमाग़ की भी है।

अब बादशाह के तमाम अधिकार छिन गए। वह शाही बन्दी हो गया। आगरे का वह अटूट ख़ज़ाना, भारत के महाशक्तिशाली बादशाहों का तीन पुश्तों का धन औरंगज़ेब के हाथ आ गया।

: ६० :

बेमद्दी

ख़ैर होने के दूसरे दिन बादशाह को औरंगज़ेब का एक और ख़त मिला, उसमें लिखा था—

"यह बेमद्दी मुझको इसलिए सरज़द हुई है कि हुज़ूर वालिद मेरी निस्बत इतनाहे ज़ब्त की मेहरबानी फ़र्माते थे और यह इर्शाद होता था कि ख़ास सिक्के के तौर व तरीक़े से हम तख़्त नशीन हैं।

"सिर्फ हरम, औरतें, बच्चे, दादा खान और अतर खाँ, कुछ फ़क़ीरतरा।"

"अतर खाँ अभी है? खैर, ऐं, तुम रोते हो?"

युवक शाहज़ादे ने आँखें पोंछीं। उसने कहा—"दादा खान की आप से एक आरज़ू है।"

"कैसी आरज़ू?"

"यह खत है।" उसने खत औरंगज़ेब के हाथ में दिया और पीछे हट गया।"

"हुज़ूर का मिज़ाज कैसा है?"

"सुना है—वे बच्चों की तरह ज़ोर-ज़ोर से रो रहे हैं।"

औरंगज़ेब ने बादशाह के खत पर दृष्टि डाली और कहा—"आह अभी चन्द ज़रूरी मसले ग़ौर करने को रह गए हैं।" उसने आस्तीन से एक काग़ज़ निकाल कर कहा—"यह फ़र्मान लो और अभी जाकर आगरे के कोतवाल का चार्ज ले लो और शहर के तमाम दरवाज़ों पर मुस्तैद पहरा बैठा दो। ग़ैर तुम्हारे दस्ती पर्वाने के कोई शख्स या माल-असबाब शहर से बाहर न जाने पाएँ न आने पाएँ। जाओ।"

मुहम्मद सुल्तान ने चुपचाप फ़ार्मान लिया और सलाम करके चला गया। अब उसने एतबार खाँ की ओर रुख किया। उसने कहा—"एतबार खाँ, मैं तुम पर सबसे ज़्यादा भरोसा कर भारी काम सौंपना चाहता हूँ।"

"ग़ुलाम को जो ख़िदमत सौंपी जायगी उसे वह जान देकर भी पूरी करेगा।" एतबार खाँ ने कहा। औरंगज़ेब ने कहा—"हमें तुमसे ऐसी ही उम्मीद है। तुम्हें मैं तमाम क़िला सौंपता हूँ। ख़बरदार रहो—हज़रत आला को आराम महलसरा में रहने में कोई तक़लीफ़ न हो। लेकिन फ़ालतू आदमियों को बाहर निकाल दो और नज़र रखो कि बाहर का कोई आदमी या पैग़ाम किसी किस्म का अन्दर न पहुँचने पाए।"

"ऐसा ही होगा, हुज़ूर इतमीनान रखें।"

"बेगम रोशनआरा को यहाँ हमारे हुज़ूर में भेज दो और वे जिस क़दर असबाबमाल साथ लाना चाहें, ले आने दो।"

"जो हुक्म।"

"अपनी बहरत के लिए ऐसा मुनासिब समझो, नए फाटक और दरवाज़े तैयार करा लो जिनके हालात पोशीदा हों, और नज़र रखो कि इबरत सलामत अपनी लिहाज़गाह से बाहर न आने पाएँ।"

"जो इर्शाद।"

"आओ, जितना मुनासिब समझो फौज ले जाओ और मामू, शाइस्ता खाँ को अपनी यहाँ भेज दो।"

दरबार खाँ ने तीन बार सलाम किया और खीमे से बाहर चल दिया।

औरंगज़ेब बड़ी देर तक हाथ मलता हुआ अकेला टहलता रहा। उसने अपने होठों ही में कहा—लेकिन यह तलवार ही की लड़ाई नहीं है, दिमाग़ की भी है।

अब बादशाह के तमाम अधिकार छिन गए। वह क़ैदी बन्दी हो गया। आगरे का वह अटूट ख़ज़ाना, भारत के महाशक्तिशाली बादशाहों का तीन पुश्तों का धन औरंगज़ेब के हाथ आ गया।

: ६० :

बेअदबी

क़ैद होने के दूसरे दिन बादशाह को औरंगज़ेब का एक ख़त मिला, उसमें लिखा था—

"यह बेअदबी मुझसे इसलिए सरज़द हुई है कि हुज़ूर जाहिरा मेरी निस्बत इज़हारे ख़फ़गी की मेहरबानी फ़र्माते थे और यह इर्शाद होता था कि दाख़ा शिकोह के तौर व तरीक़े से हम बख़ूबी वाक़िफ़ हैं।

मगर मुझे पुख्ता खबर मिली है कि हुज़ूर ने अशर्फ़ियों से भरे हुए दो हाथी उसके पास भेजे हैं, जिनसे वह नई फ़ौज तैयार करके इस ख़ूँरेज़ लड़ाई को तवालत दे। पर हुज़ूर ही ग़ौर फ़र्माएँ, कि मुझसे इन हरकतों के—जो फ़र्ज़न्दों के मामूली तरीक़े के ख़िलाफ़ और सख़्त मायूस होती हैं—सरज़द हो जाने का बाइस क्या दारा शिकोह की ख़ुदग़र्ज़ी नहीं है? इन बातों का सबब—कि हुज़ूर क़ैद किए गए और फ़र्ज़न्दाना ख़िदमत बजा लाने के लिए मैं इतनी देर तक हुज़ूर की ख़िदमत में हाज़िर नहीं हो सका! हुज़ूर से बकमाल आजिज़ी इल्तजा करता हूँ कि मेरी इस हरकत की ताज़ीरात्रगोज़ ज़ाहिरी सूरत पर ख़याल न फ़र्माकर सिर्फ़ चन्द रोज़ के लिए सब्र के साथ इसे बर्दाश्त करें। फिर ज्योंही दारा शिकोह चैन व अमन में ख़लल अन्दाज़ होने और हुज़ूर को और मुझको तक़लीफ़ पहुँचाने के क़ाबिल न रहेगा, त्योंही मैं ख़ुद-ब-ख़ुद क़िले की तरफ़ दौड़ा चला आऊँगा और हुज़ूर के क़ैदख़ाने का दरवाज़ा अपने हाथ से खोलकर हाथ बाँध अर्ज़ करूँगा कि अब कुछ रोक-टोक नहीं है।"

ख़त को पढ़कर बूढ़े बादशाह ने दोनों हाथों से अपनी आँखें ढाँप लीं और उनकी काँपती हुई उँगलियों के बीच से आँसुओं की धार बहने लगी। बड़ी देर तक रो लेने के बाद उनका मन कुछ हल्का हुआ तो उन्होंने दूर पर चाँदनी में बिखरे हुए ताज की ओर दृष्टि की। फिर एक ठण्डी साँस खींचकर वे मसनद पर लुढ़क गए।

: ६१ :

अगला क़दम

बूढ़े बाप को क़ैद कर, क़िले की नाकेबन्दी मज़बूत कर, चारों ओर जासूसों का जाल बिछा, आगरे की सूबेदारी शाइस्ता ख़ाँ को सौंप, आगरे का तमाम सामान साथ लाद, औरंगज़ेब ने मुराद को संग ले

दारा के पीछे दिल्ली की राह पकड़ी। आगरे में उसने केवल दस दिन मुकाम किया था। इसी बीच में आगरे का उसने सारा बन्दोबस्त ठीक ठीक कर लिया था—और अब वह अपने शिकार के पीछे था। उसने तीस मील चल कर मथुरा में मुकाम किया।

मथुरा में रुकने के उसके दो उद्देश्य थे। एक यह—कि वह, दिल्ली को जो सन्देश भेजे गए थे उनके जवाब की प्रतीक्षा में था, दूसरे, वह मुराद से भी अब निबट लेना चाहता था। क्योंकि प्रथम तो अब मुराद की कोई आवश्यकता ही न रह गई थी, दूसरे लश्कर में भांति भांति की अफवाहें फैल रही थीं। अत्यन्त गुप्त रखने पर भी औरंगजेब के इरादों को लोग भांप गए थे और लश्कर में छोटे बड़े इशारे से अपने मनोभावों को प्रकट करने लगे थे। इसके अतिरिक्त मुराद के भी कान नित्य भरे जाते थे। वह मूर्ख, अविचारी, दिग्भ्रान्त और हठी तो था ही, अब अपने को बादशाह मानकर मनमानी कार्यवाही करने लगा था। वह औरंगजेब को कभी-कभी बहुत तुच्छ दृष्टि से देखता, बहुधा उसकी इच्छाओं का तिरस्कार कर देता। उसके दरबारी अमीरों ने उसे यह कहकर भड़का दिया था कि धीरे-धीरे सारी हुकूमत उसके हाथ से निकल कर औरंगजेब के हाथ चली जा रही है और वही सर्वेसर्वा बनता जा रहा है। इन दरबारों के भड़के पर चढ़कर वह एक दो बार खुल्लम-खुल्ला औरंगजेब का विरोध कर चुका था। उसने अपनी सेना भी बढ़ा ली थी और बहुधा सब काम बिना औरंगजेब से पूछे कर डालता था। परिस्थिति नाजुक होती जाती थी इसलिए उसने अब मुराद के झमेले को तुरन्त ही तय कर डालने का भी निर्णय कर डाला था। औरंगजेब की तीखी नजर में भूत भविष्य सभी उपस्थित था और इसीलिए अब अविलम्ब उसने भयंकर साहस कर गुजरने का निश्चय दृढ़ कर लिया।

आगरे से चलने के समय भी मुराद ने कुछ दुर्बलता की थी। उसके दरबारी अमीरों ने कहा था—"आपको अब दारा के पीछे जाने की

क्या जरूरत है। आगरे में ही रहिए, औरंगजेब को जाने दीजिए।" औरंगजेब बहुत ऊँच-नीच समझा कर उसे साथ ले आया था। परन्तु उसने अपना लश्कर और छावनी औरंगजेब से अलहदा रक्खी थी। औरंगजेब आगरे से मथुरा तक मुराद की खुशामद में लगा रहा। कभी फल फूल भेजता, कभी कोई सौगात। वह बारंबार मिजाज पुछवाता। इन सब बातों का यह असर पड़ा कि मुराद औरंगजेब पर प्रसन्न हो गया।

अलावा शहबाज खाँ, जो मुराद का गुलाम और एक वीर पुरुष था, औरंगजेब के सब इरादे जान गया था। उसने भी अपने जासूस लगा रखे थे और ऐसा बन्दोबस्त कर लिया था कि मथुरा पहुँच कर ज्योंही औरंगजेब मुराद के खीमे में पहुँचे—उसे कत्ल कर डाला जाय। परन्तु औरंगजेब इससे अनजान न था। शहबाज खाँ की मर्मभेदिनी दृष्टि को वह समझ गया था। इसी से उसने निश्चय कर लिया था कि अब देर करना निरापद नहीं है।

उस दिन पन्द्रह जून थी। गर्मी बेहद थी, दिन छिपने में अभी देर थी मगर सूरज की चमक और लू की भयानकता में कुछ भी कमी न आई थी। परन्तु औरंगजेब को इन सब प्राकृत आपदाओं की जरा भी परवाह न थी।

लश्कर की व्यवस्था से अवकाश पाते ही उसने मीर अतिशकुली खाँ को बुला भेजा। खीमे पर कड़ा पहरा लगा था। कुछ देर वह बेचैनी टहलता रहा और मीर हाथ बाँधे अटल भाव से खीमे के एक कोने में खड़ा उसकी भावभंगी देखता रहा। एकाएक औरंगजेब ने रुक कर तेज आँखों से उसे घूर कर कहा—

"तो तुम हर तरह तैयार हो?"

"क्या आज ही?" मीर ने कम्पित कंठ से पूछा।

"हाँ" औरंगजेब ने धीर स्थिर स्वर से कहा और गले से एक अत्यन्त कीमती हीरों का हार उतार कर उसके हाथ में पकड़ा दिया।

फिर कहा—"इन पत्थरों की कीमत तीन लाख रुपया है। जो आप की आरसानी की तिफ़ नेशनी किस्त है। इसके बाद जैसा कि मैं कह चुका हूँ तुम्हें गुजरात की सूबेदारी और पाँच हजारी जात "

"मगर जहाँपनाह "

"दुश्मन उदूली और नमकहरामी की सजा जो मैं देता हूँ उसे दुनिया जानती है।" औरङ्गजेब ने आग के शोले आँखों से बरसाते हुए मीर की ओर देखा। मीर जमीन तक झुक गया और तब उसने धीरे से कहा—

"जो हुक्म," इसके बाद वह तेजी से चला गया।

औरङ्गजेब ने दस्तक दी। एक खोजा तेजी से भीतर आकर सिर झुकाया। औरङ्गजेब ने कहा—"मीर खाँ को भेज दे।"

खोजा सिर झुकाकर चला गया—और एक भीमकाय अमीर ने खीमे में प्रवेश किया। उसका रंग काला, आँखें लाल और सुदृढ़ शरीर था। वह बहुत भारी तलवार बाँधे था। वह चुपचाप औरङ्गजेब की आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़ा हो गया।

"कुर्नूल!"

"जी हाँ हुजूर!"

"याद रखो यह आखिरी मुहिम है।"

"जहाँपनाह, यहाँ भी तब इन्तजाम चाक चौबन्द है।"

"तो बस, तुम खुद जाओ, साथ में मुहम्मद सुलतान और अपने साथी अमीरों को ले जाओ और उसे साथ ले आओ। मगर निहायत होशियारी और समझदारी से।"

"हुजूर, इत्मीनान रखें।"

एक जगमगाते मोतियों की माला उसकी ओर फेंक कर औरङ्गजेब ने उसे उँगली से खीमे से बाहर जाने का संकेत किया।

फिर वह हाथ मलता हुआ इधर उधर टहलता रहा। उसके हृदय में तूफान उठ रहा था—और उसने सबसे बड़ा साहस कर डालने का

इरादा कर लिया था। वह नहीं जानता था कि किसी गुप्त कान ने उसकी बातें सुन ली हैं।

उसने अपनी सारी योजनाएँ अत्यन्त गोपनीय रूप छोड़ी थीं। परन्तु शहबाज खाँ से वह न छिपा सका था। जब वह अपनी गुप्त आज्ञाएँ दे रहा था, शहबाज खाँ कीमे के बाहर छेद पर कान दिए सुन रहा था और जब वह कीमे की ओर रेंगता हुआ वहाँ से निकल रहा था।

परन्तु एक बात रह गई जो शहबाज खाँ न जान सका। औरङ्गजेब ने कुछ देर चुप रहकर अपने बेटे मुहम्मद सुलतान को बुलवाया और कहा— "तुम, प्यारे फ़रज़न्द अमीरों के साथ मुराद के कीमे में जाओ और अपनी हमराह दो सौ तैंतीस घोड़े जो हमने खोंट पर तैयार रख छोड़े हैं और बीस लाख रुपए नकद ले जाओ और हमारी ओर से वह नज़राना पेश करके उसे ममनून करो और हमारी ओर से अर्ज़ करो—कि वह दावते शाही हुज़ूर की तन्दुरुस्ती और उन लक्ष्यों के अच्छा हो जाने की खुशी में है जो हुज़ूर को मैदाने जंग में लगे थे। साथ ही इसके भागते हुए बहनसीब दारा की गिरफ्तारी की पोशीदा तजवीजें भी हैं जिन पर गौर करना है।"

शाहज़ादे ने पिता का वास्तविक संकेत भी समझ लिया और वह सिर झुका कर चला गया।

: ६२ :

सुनहरा जाल

उस दिन दिन भर मुराद ने शिकार में बिताया था जिसका प्रबन्ध खास तौर पर औरङ्गजेब ने किया था। उसका अभिप्राय केवल इतना ही था—कि मुराद खूब थक जाय और अन्य मरने वालों की बातों पर वह विचार न कर सके। अधिकांश में औरङ्गजेब की यह अभिलाषा पूरी हुई थी।

और अब इस समय मुराद के डेरे में कुछ अजब समा बँधा था। कुछ कंचनियाँ ग्वालियर से आई थीं और उनका नाच-गाना हो रहा था। अंगूरी बोतलों की जीभी गोलनी हो रही थी। गुलाब छिड़का जा रहा था। खुशामदी और ऐश्वाल मुसाहिब उसे घेरे बैठे थे। रंडियाँ नाच रही थीं। तबला ठनक रहा था। सारंगी तिलकारी भर रही थी। मुराद मसनद पर पड़ा जाम पर जाम चढ़ा रहा था। लोग बढ़-बढ़ कर उसकी अर्दलियों और दिलेरी की तारीफ़ कर रहे थे और वह सुन-सुन कर फूलकर कुप्पा हो रहा था।

इसी समय उसे मुहम्मद सुलतान और अमीर मीर खाँ के आने की इत्तला मिली। हुक्म होते ही मुहम्मद सुलतान ने नजराना पेश किया। नक़ाशे के घोड़ों और नक़द रुपयों के साथ बहुत से कमख़्वाब के थान, बढ़ाऊ जेवरात से भरी चाँदी-सोने की पिटारियाँ, इत्र—गुलाब जल और मेदपूरक की बोतलें, खुशबूदार तेल और अनेक प्रकार की मिठाइयाँ और तर मेवे चाँदी और हाथीदाँत के मुलम्मेदार बरतन, और सामान थे। ये सब चीजें जब उसके सामने पेश की गईं और अमीरों के साथ शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान ने सामने आकर आदाब बजाया तो मुराद 'खुशआमद' कहकर दोनों हाथ फैलाकर खिल उठा।

प्रत्येक अमीर ने आगे बढ़कर तीन बार शाहाना आदाब बजाया और हुक्म पाकर बैठ गए। मुहम्मद सुलतान ने हाथ बाँधकर कहा—"हुज़ूर, अब्बा जान ने हुज़ूर की मुक्त सेहत और तबतरोशी के लिये में दावत दी है और अर्ज़ किया है कि तशरीफ़ लाकर बहाँपनाह मसनून करें—मालिक इसके दाता की गिरफ़्तारी के लिए, जो दिल्ली में चौबदारी कर रहा है, चन्द चोरीदा तसवीरों पर भी मश्विरा करना है, जिसके लिए सभी उमरा और मशीर हाज़िर हैं।"

अमीर मीर खाँ ने बीच ही में हाथ जोड़कर कहा—"बहाँपनाह की तबतरोशी का एक छोटा-सा जलसा भी इस मौके पर करने का बन्दोबस्त हज़रत शाहज़ादा औरंगज़ेब ने किया है। जश्ने में जो सामान

मुहैया हो गया, किया गया है। हजरत शाहजादा औरंगजेब ने हुजूर इमकान कोई कसर नहीं बाकी रखी है। अब हुजूर चलकर तख्तनशीनी की रस्म पूरी कर लीजिए—जिससे हम लोगों की मुरादें बर आएँ।"

दूसरे अमीर ने कहा—"हुजूर के जुलूस की खबर सुनकर दूर-दूर से मशहूर लड़ाकों और गुनी लोगों का ठठ लगा हो गया है, जो हुजूर की फैयाजी और दरियादिली से वाकिफ हैं, वे बड़ी-बड़ी उम्मीदें लगाए बैठे हैं और हमलोग—जो हुजूर के जाँनिसार गुलाम हैं—आज ही के मुबारक दिन की आस में हैं। आज हम निहाल होंगे हुजूर, हमारी आलहा लाख की मुरादें बर आएँगी।"

बादशाह की इन बातों को सुनकर मुराद बहुत खुश हुआ। वह उन लड़ाकों अनेक वादे करने लगा। एक मुसाहिब ने कहा—

"यह नया खीमा जो जहाँपनाह की तालपोशी के लिए तैयार कराया गया है, गुलाम अभी देखकर आया है। मुझे हैरत है कि ऐसी मयाद्दौर में कैसे यह बेशकीमती खीमा तैयार करा लिया गया। नीचे से ऊपर तक सुनहरी काम से सजा हुआ—चाँदी की चोटी पर खड़ा जैसे पुकार-पुकार कर जहाँपनाह का इस्तकबाल कर रहा है।"

दूसरे मुसाहिब ने कहा—

"और वे बारह हाथी जिनकी जोड़ का हाथी हमने आज तक नहीं देखा, न जाने कहाँ से लाए गए हैं। उनकी-सी लंबपद तो आलहा हजरत के जमाने में भी नहीं देखी गई थी।"

तीसरे ने कहा—

"मैं तो उन घोड़ों पर फिदा हूँ, जिनकी चाल का प्यारा जानवर इन आँखों ने नहीं देखा। हुजूर की सवारी के लिए जो घोड़ा आया है उसी को देखिए किसी ने देखा या ऐसा जानवर!"

मुराद ने सुन कर कहा—

"वाकई हमारे भाई ने जो मिहनत, मुहब्बत और लड़ाई जाहिर की है और आप लोगों ने जो कर्मवीरी दिखाई है उसका बयान करना

मुमकिन नहीं है। बस, ज्योंही हम मौका पाएँगे—आप सबको आपकी बेमिसाल खिदमात का इनाम देंगे।"

मुहम्मद सुलतान ने अब खड़े होकर दरबारियों को अर्ज की—"हजरात, अब चलना चाहिए। अच्छी साइत जो नजूमियों ने बताई है उसमें अब देर नहीं है। इसके सिवा इस भारी काम को अंजाम देकर अपने सिर का बोझ हल्का करने और दिल की आरजू पूरा करने को अम्मीजान बहुत बेताब हो रही हैं।"

मुराद ने प्रशंसा की दृष्टि से मुहम्मद सुलतान को देखा और कहा—"दुनिया देखे कि भाई की मुहब्बत कैसी होती है।" और फिर वह चलने के इरादे से उठ खड़ा हुआ।

मुराद ज्योंही घोड़े पर सवार हुआ कि अम्मान बदहवास दौड़ता हुआ आया और मालिक की रकाब पकड़कर बोला—

"मालिक!"

"क्या तुम इस वक्त फिर अपना चर्चा चलाओगे?"

"मगर शाहजादे आलम! आप—"

मुराद की त्योरियों में बल पड़ गए, उसने कहा—

"फिर शाहजादे आलम, जब कि अब सब लोग हमें शहंशाह कहते हैं यहाँ तक कि औरंगजेब भी।"

शाहनवाज ने मुराद के बिल्कुल पास आकर उसके कान में फुस-फुसाते हुए कहा—"यह सब मक्कारी है शाहजादा, कहा मानिए आप यहाँ मत जाइए। मारे जाएँगे। मुझे सब कुछ मालूम है। बीमारी का बहाना करके रह जाइए। फिर वह खुद सब हाल-चाल दर्याफ्त करने आएगा। तो मैं कपड़ा फाड़ डालूँगा।" उसने आँखों में ही संकेत करके कहा—"सब बन्दोबस्त तैयार है हुजूर।"

इसी समय ढोल दमामे और नक्कारे बज उठे। नक्कीबों ने नए बादशाह का जय-जयकार किया।

मुराद ने क्रुद्ध होकर शाहनवाज से कहा—"हमेशा ही तुम ऐसा

ही डर जाहिर करते रहते हो—हम जानते हैं कि ये सब बेबुनियाद बातें हैं। भाई औरङ्गजेब किस कदर हमसे मुहब्बत करते हैं और हमारी इज्जत करते हैं। क्या तुम नहीं देखते कि वह हमें ही बादशाह मानते हैं। फिर तुम क्यों उनसे जलते हो। बस, हम नहीं चाहते कि तुम हमारे मुआमलात में दाखिल हो।"

परन्तु शाहनवाज ने शाहजादा के गुस्से की परवा न की। वह कहता ही गया—"हजरत, ये सब अदब की मीठी-मीठी बातें और चापलूसियाँ दगाबाजी की निशानी हैं। आपको मुनासिब है कि आगरे लौट चलें।"

परन्तु मुराद ने रकाबियों पर बल डालकर कहा—"शाहनवाज, तुम बादशाहों को मश्विरा देने की जुर्रत न करो। अभी तुम्हें हमने वजीरे-आजम नहीं बना दिया है। सल्तनत के मामलात में मश्विरा करने के लिए हमारे पास चन्द तुमसे ज्यादा लायक मशीर हैं।" यह कह उसने घोड़े को एड़ लगाई।

पर शाहनवाज ने फिर उसकी राह रोककर और घोड़े की रास पकड़ कर कहा—"हुजूर, उस बाघ के मुँह में मत जाइए।" मगर मुराद ने अपनी तलवार हिला कर कहा—"जबतक वह मेरी बगल में है मुझे किसी का गम नहीं।" उसने घोड़ा बढ़ाया। शाहनवाज ने भी झटपट अपने भरोसे के आदमी इकट्ठे किए और हथियार बाँध मालिक के पीछे दौड़ चला।

मुराद घोड़े पर सवार धीरे धीरे अमीरों से घिरा जा रहा था—सामने से इब्राहीम घोड़े पर सवार आता मिला। वह एक बहादुर ईमानदार सरदार था। उसने शाही अदब-कायदे के अनुसार एक ओर होने की अपेक्षा आगे बढ़कर मुराद के घोड़े की रास पकड़ ली और मुराद के चेहरे पर करुण दृष्टि डालकर कहा—"आप किधर जा रहे हैं हजरत?"

"हम ताजपोशी के लिए जा रहे हैं।"

"सुनकर खुशी हुई। मगर क्या ज़रूरत है कि ताजपोशी के लिए बादशाह दूसरे के घर जाय, जब कि अपने घर में हिफ़ाज़त का सब सामान मुहैया है।"

यह कहकर उसने मुराद के घोड़े की बाग मोड़नी चाही। मगर मुराद ने क्रोध में आकर घोड़े को एड़ मारी और आगे बढ़ गया। इसपर इब्राहीम ने चिल्लाकर कहा—

"आप धोखा खाने जा रहे हैं।"

शाहनवाज़ खाँ ने यह आवाज़ सुनी। वह घोड़े को एड़ देकर आगे बढ़ा और मुराद के सामने जाकर बोला—"हुज़ूर और रहम की खातिर, हुज़ूर इस बाना अमीर की बात मान लीजिए और पीछे लौटिए।"

मुराद ने क्रोध में आकर तलवार की मूठ पर हाथ रखा और कहा—"अज़मन कुन बहादुर मेस्त।"

और अक्लप्रेरित की भाँति घोड़ा दौड़ाता औरंगज़ेब की छावनी में घुस गया।

: ६१ :

पहिला शिकार

ज्योंही मुराद औरंगज़ेब के खीमे के पास पहुँचा—औरंगज़ेब ने अपने सब अमीरों सहित बाहर आकर उसका अभिनन्दन किया। औरंगज़ेब ने उसके मुँह की गर्द और पसीना पोंछा और मसनद पर बैठाकर स्वयं उसकी बगल में बैठा।

औपचारिक शिष्टाचार के बाद औरंगज़ेब ने नम्रतापूर्वक कहा—"यद्यपि आपने पहिले ही अपने को हिन्दुस्तान का बादशाह घोषित कर दिया है मगर आज के मुबारक दिन—जब दुश्मन पामाल हो गए, और हुज़ूर की शोहरत और नाम कमाल को पहुँच गया—हम आपके

जाँनिसार और हमदर्द अमीर इस मौके पर हुज़ूर की ताजपोशी का यह छोटा-सा जश्न करके अपने दिल की खुशी जाहिर करना चाहते हैं।"

इसके बाद उसने इशारा किया और मुराद के सिर पर नई पगड़ी बाँधी गई। औरंगज़ेब ने एक कीमती हीरों की कलँगी बाँध दी और सलाम किया। मुबारक हुआ—इसके बाद सब अमीरों ने नजराने पेश किए और सलाम की। मुराद ने शाहाने अन्दाज से सबकी सलाम कबूल की और मनसबों अलकाब-दर्जे और इनामात सबको देने की इच्छा प्रकट की।

इस पर औरंगज़ेब ने अर्ज की—"यह सब सोच-समझकर होता रहेगा। फिलहाल हुक्म हो कि दस्तरख़ान बिछाया जाय। हुज़ूर दिन भर के थके-माँदे हैं।"

मुराद ने हुक्म दिया और आसन-फ़ासन एक से बढ़ कर एक दस्तरख़ान चुने गए। सब अमीर खाने बैठ गए। औरंगज़ेब भी मुराद के नजदीक बैठा। वह धीरे-धीरे खाता और बातचीत करता जाता था। मुराद इत्मीनान से खा रहा था। वह बहुत खुश था और अमीरों से गर्ज़ भी मारता जाता था। हँसी-मज़ाक ज़ोरों पर चल रहा था। खाना खत्म होने पर जब कहवा और शीराज़ी शराब के पात्र और सुन्दरी कंचनियाँ उपस्थित किए गए—तो औरंगज़ेब ने मुस्कुरा कर मुराद से कहा—"इस मुबारक दिन की खुशी में जहाँपनाह अपने जाँनिसार इन अमीरों के साथ शराब पीजिए। मेरी बाबत तो हज़रत को मालूम ही है कि मैं अपने मज़हबी जज़बात के बाइस इस ऐशो इशरत की सोहबत में मौजूद नहीं रह सकता। ताहम जो लोग इस पुरशौक़ जलसे में शरीक हैं मीर तज़ब और दीगर मुसाहिब आपकी खिदमत गुज़ारी के लिए हाज़िर रहेंगे।"

इतना कह कर औरंगज़ेब वहाँ से चला गया। फिर वह बाग़ और कोठे में आया। शराब के दौर पर दौर चलने लगे। संगीत का दरिया बह चला और रूप का बाज़ार लग गया।

मुराद तो शराब और औरतों का प्रेमी था ही। अब उसने इतनी शराब पी कि तन-बदन की कुछ भी खबर नहीं रही। वह बदहवासी में ऊँच-नीच बकने और हँसने लगा। अन्त में बिल्कुल बेहोश होकर मसनद पर लेट गया। वहाँ से बर्खास्त कर दिया गया। मीर खाँ ने उसके तलवार खंजर खोल कर अपने कब्जे में कर लिए और बाहर चला गया।

इसी समय औरङ्गजेब पाँच-सौ गुलामों के साथ सीमे में आया। इस समय आदर-सम्मान की कोई भावना उसके मुख पर न थी। उसके होठों और नेत्रों में कठोरता थी। उसने दो-तीन ठोकरें उसे मार कर कहा—"शर्म की बात है कि तुम बादशाह होकर इस कदर ग़ाफ़िल और बेखबर हो। अब दुनिया तुम्हें और मुझे क्या कहेगी।"

परन्तु ठोकर खाकर भी मुराद उसी भाँति पड़ा रहा। इसपर औरङ्गजेब ने अपने गुलामों से जो प्रथम ही से मुस्तैद थे, कहा—"इस बदबख्त के हाथ-पाँव बाँध कर खिलवतखाने में ले चलो, ताकि नशा उतरने तक यह बेहयाई का तमाशा नहीं करे।" कहाँ गुलामों ने आनन-फानन उसे दबोच लिया और उसके हाथ-पैरों की मुश्कें कस दीं। आसन्न विपत्ति को उस बदहोशी में भी समझकर मुराद खूब चीखा-चिल्लाया—परन्तु उसके हाथों और पैरों में तुरन्त हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ डाल दी गईं और उसे भीतरी सीमे में पहुँचा दिया गया।

मुराद के नौकर, चाकर, सिपाही सब दूसरे सीमे में जा पी रहे थे। सभी ने जमकर शराब पी थी और उनमें एक भी इस काबिल न था—जिसके होश-हवास दुरुस्त हों। फिर भी शाहनवाज ने मुराद का चिल्लाना सुना—और वह दो-चार आदमियों के साथ तलवार लेकर दौड़ा। पर मीर आतिशकुली खाँ ने जो मुराद का ही अमीर था—उसे समझा-बुझाकर उलटा कर दिया और उसे दूसरी ओर ले गया। उसने कहा—"कुछ नहीं बदहवासी बड़ी ज्यादा पी गए हैं। फिर भी और सोने रहे हैं और खर्राटे भर रहे हैं। बस इतनी ही बात है।

मैं स्वयं ऐसे आ रहा हूँ।" शाहनवाज खाँ उसके विश्वास में रह गया।

मीर आतिशकुनी खाँ उसे समझा-बुझाकर मुराद की छावनी में ले गया। उसने सोचा कि वहाँ जाकर कुछ और मदद इकट्ठी कर लाऊँ। परन्तु मीर आतिश ने मौका पाकर उसका सिर काट डाला। फिर उसने छावनी में देखा—कि कुछ उड़ती-सी खबर वहाँ भी पहुँच गई है। सिपाही दल बाँध बाँधकर इस बात की चर्चा कर रहे थे। उसने उन सबको यह कहकर ठण्डा कर दिया कि मैं अपनी आँखों से ऐसे आ रहा हूँ। बहाँपनाह ने खूब शराब चढ़ा ली थी, वे अभी वहीं पर आराम फर्मा रहे हैं। सुबह तशरीफ ले आएँगे। सिपाही अपने ही सेनापति की बात पर विश्वास कर गए। इसके बाद उसने सब बड़े-बड़े अधिकारियों को बड़े-बड़े सब्ज बाग दिखाए। वे कुछ-कुछ तो परिस्थिति ही से जानते थे—और अब उच्चाकांक्षा की आशा में कान में तेल डाल बैठे। जिनपर सन्देह था—उन्हें मारी मारी घूसें दी गईं। वेतन दूने कर दिए गए।

इस प्रकार कुछ क्षणों ही में इस शराबी और मूर्ख बहाँपनाह के लोग एकबारगी ही भूल बैठे, और मामले का गूढ़ मर्म समझ गए।

जब औरङ्गजेब को सूचना मिल गई कि उधर सब ठीक-ठाक हो गया और अब पक्का तक लड़कने का भय नहीं है, तब उसने हथकड़ियों और बेड़ियों में जकड़े हुए उस अपने सगे भाई को जिसे आज ही सम्राट में बहाँपनाह कह कर उसने मुँह की बर्दे पोशी की एक बन्द जनानी फौलादी अम्बारी में बन्द करके—बेड़ हथिनी पर सलीम गढ़ के किले में कैद करने को दिल्ली की ओर रवाना कर दिया, जिसकी रक्षा के लिए मुहम्मद सुलतान नंगी तलवार हाथ में लिए पाँच सौ सवारों के साथ उसी अँधेरी रात में रवाना हो गया।

प्रभात होते ही मुराद के सब अमीरों और सिपाहियों ने आकर औरङ्गजेब को सलाम की और उसकी सेवाएँ स्वीकार कीं। औरङ्गजेब

ने सबके दर्जे बढ़ाए। भारी भारी अलम दिए। बनसाहें पूनी कर दीं। सैनिकों को तीन माह का वेतन इनाम में बाँटा और उन्हें अपनी सेवा में रख लिया। दोपहर होते होते मुराद की सारी सेना—दरबारी अमीर उमराव औरंगजेब का जय-जयकार करने लगे।

इस झंझट से निबट कर अब उसने अपने विश्वासी सेवक खानए दौरान को एक अच्छी फौज देकर इलाहाबाद को रवाना कर दिया और उसे हुक्म दिया कि वह वहाँ के हाकिम से इलाहाबाद छीन ले—जो दारा का नियुक्त किया हुआ था। साथ ही उसने बिजेया बहादुर खाँ को एक फौज की सरदारी सौंप कर उसे दारा के पीछे भेज दिया जो लाहौर में फौजें जमा कर रहा था। इसके बाद वह इस्मीनान से दिल्ली की ओर रवाना हुआ।

: ६४ :

आलमगीर शाही

औरंगजेब ने बड़ी-बड़ी ऐतिहासिक घटनाएँ बड़ी तेजी से तय कर डालीं। २९ मई सन् १६५८ को उसने समूगढ़ में विजय पाई। पहली जून को वह आगरे पहुँचा। पाँचवीं जून को आगरे का किला घेरा, आठ जून को किला फतह किया, दस जून को बादशाह को कैद किया। तेरह जून को वह आगरे से चला और पचीस जून को मथुरा में मुराद को कैद किया। इस प्रकार एक महीने से भी कुछ कम समय में उसने इतनी बड़ी-बड़ी वास्तविक घटनाएँ कर डालीं जिनका ऐतिहासिक महत्त्व बहुत अधिक था।

इधर तो उसने मुराद को सलीमगढ़ की ओर रवाना किया। उधर खानए दौरान को एक दस्ता फौज देकर इलाहाबाद की ओर रवाना कर दिया कि वह इलाहाबाद जाकर वहाँ के दारा द्वारा नियुक्त हाकिम से इलाहाबाद छीन कर उस पर दखल कर ले। यह अत्यन्त दूरदेशी

था महत्वपूर्ण कदम था—क्योंकि इलाहाबाद बङ्गाल का द्वार था और अभी उसका प्रबल शत्रु शाह शुजा बङ्गाल में अपनी अच्छी तैयारी कर रहा था जिसकी तरफ से औरंगजेब बेखबर नहीं हो सकता था।

दारा पाँचवीं जून को दिल्ली पहुँच चुका था और अभी तक अपनी हार की खटपट में फँसे रह कर औरङ्गजेब उसके लिए कुछ भी बन्दोबस्त न कर सका था। दिल्ली पहुँचते-पहुँचते दारा के साथ पाँच हजार सवार जमा हो गए थे। अब उसने दिल्ली पहुँचते ही नई सेना भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। धन उसके पास काफी था। बादशाह ने उसे दो हाथी अशर्फियों से लाद कर भेजे थे। उसके पास भी काफी हीरा, मोती, सोना था। फिर दिल्ली के किले से भी उसे भारी मदद मिल गई थी। इस कारण इन बीस दिनों के अवकाश में उसने एक अच्छी सेना तैयार कर ली।

औरङ्गजेब को ये सब सूचनाएँ मिलती रहती थीं। अब उसने बहादुर खाँ को एक जबर्दस्त फौज देकर दारा को दिल्ली से खदेड़ने और अन्त तक उसका पीछा करने को भेजा। यह सूचना पाते ही दारा ने लाहौर की तरफ कूच बोल दिया। वह बहुत दिनों तक लाहौर का हाकिम रह चुका था और इस समय वहाँ का हाकिम उसका विश्वस्त सरदार मीरक खाँ था। दिल्ली से लाहौर पहुँचने में उसे बाईस दिन लगे। वहाँ के किलेदार ने उसकी पूरी सहायता की और दारा ने बीस हजार सेना एकत्र कर ली। साथ ही सतलुज के तटवर्ती और लम्बर के घाटों पर भी चौकियाँ बैठा दीं और वह बड़ी तत्परता से लाहौर की किलेबन्दी में संलग्न हो गया।

मुराद की ओर अपनी संयुक्त सेना को संगठन करने और नई-नई व्यवस्थाएँ करने में औरङ्गजेब को कुछ दिन मथुरा में अटकना पड़ा। अन्त में ९ जुलाई को उसने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। वहाँ उसका धूमधाम से स्वागत किया गया।

दिल्ली को मुगल साम्राज्य की नई राजधानी बनाने की जितनी

आवश्यक तैयारियाँ भी उसने शीघ्रता से की। नए ओहदेदार, कर्मचारी व्यवस्थापक, प्रबन्धक नियत किए। शासन में नए-नए फेरफार किए और सुदृढ़ प्रबन्ध की स्थापना की।

अन्त में इक्कीस जुलाई को उसने आकन्त शाहजहाँ पर अपनी तख्तनशीनी की रस्म अदा की और शाह बुरहान के तख्त ताऊस पर बैठ कर आलमगीर ग़ाज़ी के नाम से उसने अपने को मुग़ल साम्राज्य का बादशाह घोषित किया और अपने नाम का खुतबा पढ़वाया। नए वज़ीरों, अमीरों और मनसबदारों को जागीरें, खिताब और इनाम दिए।

इस व्यस्त कार्यक्रम में भी दारा पर उसकी नज़र थी, जो लाहौर में अपने कदम जमाए था। वह जानता था कि पंजाब और काबुल के सूबेदार उसके दोस्त हैं। वे उसे पूरी सहायता देंगे। वह नहीं चाहता था कि दारा उनसे सहायता पाकर सबल हो जाय। इसलिए उसने खलीलुल्ला खाँ को लाहौर का हाकिम नियुक्त कर और उसे दारा का पीछा करनेवालों की मदद करने की हिदायतें दे कर लाहौर की ओर रवाना कर दिया।

इसके बाद उसने दिल्ली के किले को व्यवस्थित किया। अपने हरम को शाहजहाँ हरम का भी प्रबन्ध किया। शहर में व्यवस्था कायम की, कारोबार जारी किया और सब साम्राज्य में अमनोआराम की घोषणा की। यह सब प्रबन्ध करके वह स्वयं अपने शत्रु दारा के पीछे लगा।

बहादुर खाँ ने पाँच अगस्त को रूपार के पास एकाएक तख्तुल को पार किया। दारा के सेनानायकों को अब ब्यास की ओर पीछे हटना पड़ा। इसी बीच औरङ्गज़ेब स्वयं तख्तुल जा पहुँचा। यह खबर पाकर दारा लाहौर छोड़ मुलतान की ओर जलमार्ग से भागा। इस समय उसका परिवार भी उसके साथ था। उसके पीछे-पीछे औरङ्गज़ेब की सेना लगी थी।

दारा की इच्छा, लाहौर में वहाँ की भलीभाँति किलेबन्दी करके,

अपने दल का संगठन करने की थी। पर औरंगजेब ने इसका उसे अवकाश नहीं दिया। यद्यपि गर्मी बहुत अधिक थी—फिर भी उसकी सेना रात-दिन बराबर बढ़ती ही चली जाती थी। सिपाहियों का साहस बढ़ाने के लिए वह स्वयं पाँवों से मनुष्यों के साथ प्रायः चार-पाँच कोस सेना के आगे चलता था। वह साधारण सिपाही की भाँति बेला मिलता पानी पीता और सूखी रूखी रोटी खाता, रात को पृथ्वी पर सो रहता था।

यदि दारा लाहौर से काबुल की ओर जाता तो ठीक करता। काबुल न जाकर उसने भारी भूल की। उसके शुभचिन्तकों ने काबुल जाने के लिए उसे बहुत समझाया था। पर सदा की भाँति इस बार भी उसने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। इस समय काबुल का हाकिम महाबत खाँ था—जो एक प्रतिष्ठित बूढ़ा रईस था। वह औरंगजेब का मित्र भी न था, तथा उसके अधीन दस सहस्र ताजी सेना भी थी। जो ईरानियों, उजबकों, अफगानों के विरुद्ध रणक्षेत्र में जा सकती थी। दारा के पास धन रत्न की भी कमी न थी। यदि वह वहाँ जाता तो महाबत खाँ और उसकी सेना भी उसे अवश्य सहायता मिलती और वे उसका पक्ष ग्रहण करते। इसके सिवा ईरान और उजबक देश भी वहाँ से निकट थे वहाँ से उसे अच्छी लड़ाकू सेना प्राप्त हो सकती थी। वह इस बात को भूल गया कि हुमायूँ को जब शेरशाह ने हरा कर भारतवर्ष से निकाल बाहर किया था तब उसने ईरानियों ही से सहायता लेकर फिर राज्य प्राप्त किया था। पर दारा का स्वभाव ही ऐसा था कि समझदार और बुद्धिमानों की सम्मति पर वह ध्यान ही नहीं देता था।

इस बार भी उसने ऐसा ही किया। काबुल न जाकर उसने सिन्ध की राह ली। लाहौर में औरंगजेब को सूचना मिली कि वह मक्खर के किले में अपनी बड़ी-बड़ी तोपें और बहुत सा माल असबाब छोड़ कर सहवान की ओर भाग गया है जो सिन्धु नद के मध्य में था। जब औरंगजेब को दारा की इच्छा का पता लग गया, तो अब उसका पीछा

जाने का विचार उसने त्याग दिया। यह देख कर कि वह काबुल की ओर नहीं जाता है उसके मन का खटका निकल गया और उसने अब अपने दूधभाई मीरबाबा की अधीनता में आठ दस हजार सवार उसका पीछा करने को छोड़े और वह स्वयं शीघ्रता से आगरे की ओर लौटा।

इस समय अनेक चिन्ताएँ उसके मन में उठ रही थीं। वह सोच रहा था, उसकी गैरहाजिरी में न जाने राजधानी में क्या हो। संभव है जयसिंह और जसवन्तसिंह बादशाह को कैद से छुड़ा दें, या सुलतान शुजा ही आगरे पर चढ़ आए। उसे इस बात की सूचनाएँ मिल रही थीं कि शुजा निरन्तर सेनाएँ भर्ती कर रहा है। उसे यह भी भय था कि कहीं सुलेमान शिकोह ही श्रीनगर के राजा की सेना लेकर पहाड़ों से न उतर पड़े।

सदा की भाँति वह अपनी सेना से चार कोस आगे आगे चल रहा था। चाँदे से चुने हुए सैनिक और सरदार उसके साथ थे। अभी लाहौर दूर अन्तर पर था। वह लाहौर शीघ्र-से-शीघ्र पहुँचना चाहता था। इसी समय उसने देखा—महाराज जयसिंह चार पाँच हजार वीर घोड़ाओं के साथ उसकी ओर बढ़े आ रहे हैं। वह एक बार भय से सिहर उठा। वह वास्तव में अत्यन्त खतरनाक स्थिति में आ गया था। जयसिंह बादशाह के ऐसे प्रेमी न थे, वह डर गया कि यदि इस समय महाराज जयसिंह को शाहजहाँ के परम भक्त हैं, उसे कैद कर लें तो क्या हो।

लोगों का अनुमान था कि वास्तव में राजा साहेब औरंगजेब को पकड़ने ही के लिए आए थे। परन्तु औरंगजेब ने असीम धैर्य का परिचय दिया। वह दूर से ही घोड़ा दौड़ाता हुआ और हाथ दिखाता हुआ, प्रसन्नता प्रकट करता हुआ आगे बढ़ा—और पास पहुँच कर कहा— 'सलामत बाशद राजा जी, सलामत बाशद बाबा जी, सुबहान अल्लाह, सुबहानअल्लाह। मैं बयान नहीं कर सकता कि मुझे आपके आने का कितना इन्तजार था। बहुत ही खुश हुआ कि आप आ गए। अब

तो लड़ाई खत्म हो चुकी। दारा शिकोह तबाहोबरबाद होकर आज खानता फिरता है। मैंने मीरबाबा को उसके पीछे भेजा है, आशा है कि वह जल्द गिरफ्तार हो जायगा।"

इतना कहकर उसने अपने कंठ की मोतियों की माला उतार कर राजा साहब के गले में डाल दी और कहा—"हमारी फौज निहायत थकी है। इसलिए आप बहुत जल्द आगे बढ़कर लाहौर पहुँच जाइए। वहाँ बदअमनी का मुझे अन्देशा है। मैं आपको पंजाब का सूबेदार मुकर्रर करता हूँ और तमाम अख्तियारात देता हूँ। मैं भी बहुत जल्द आपसे आ मिलूँगा। हाँ, रवानगी होने से पहिले मुझे मालिम है कि सुलेमान शिकोह के मुकाबिले में आपने जो कारगुजारी की है, उसके लिए आपका शुक्रिया अदा करूँ। लेकिन आपने दिलेर खाँ को कहाँ छोड़ा? खैर, मैं उसे खबर भेज दूँगा। अब आप जल्द लाहौर तशरीफ ले जाँय। खुदाहाफिज!"

: ६५ :

सुलेमान शिकोह की दुर्दशा

बहादुरपुर में हार खाकर जब शुजा पटने की ओर भागा तो उसने मुंगेर में खाइयों और तोपखानों से खासा मोर्चा ठीक किया और जब महाराज मिर्जा राजा जयसिंह की सीख न मान कर सुलेमान शिकोह उसके पीछे दौड़ चला, तो उसे मुंगेर से पन्द्रह मील दक्षिण-पश्चिम में खड़गपुर में ही अटकना पड़ा। वह किसी तरह वहाँ से आगे बढ़ ही नहीं सका। वहीं उसे अकबर की पराजय के समाचार मिले, तो उसने लाचार होकर शुजा से सन्धि कर ली और उसे बङ्गाल, पूर्व बिहार और उड़ीसा का प्रदेश दे वह वापस आगरे की ओर फिरा।

परन्तु तब तक बहुत पानी बह चुका था। अभी वह इलाहाबाद से थोड़ा ही आगे बढ़ा था कि उसे समूगढ़ की लड़ाई में अपने पिता के

सर्वनाश का समाचार मिला। औरंगजेब के बल भी वहीं मिर्जा राजा जय सिंह और दिलेर खाँ को मिल चुके थे।

औरंगजेब का पत्र पाकर मिर्जा राजा जय सिंह विचार में पड़ गए। शाहजादों और दारा की ठीक-ठीक दुर्दशा का उन्हें ज्ञान न था। शाही खानदान के आदमियों और शाहजादों पर हाथ उठाना हर हालत में जघन्य अपराध है, यह मुगल नीति वे जानते थे। इसके सिवा सुलेमान शिकोह के पराक्रम और साहस से भी वह परिचित थे। वह यह भी जानते थे कि शाहजादा आसानी से अधीन नहीं होगा।

सोच-समझ कर उन्होंने अपने मित्र दिलेर खाँ से सलाह-मशवरा किया। दोनों ने डगमगाती मुगल राज्य की नाव की तब्दी परिस्थिति पर विचार किया। कुछ खानगी स्वार्थों के सम्बन्ध में उन्होंने आपस में मेल-करार भी किया। फिर महाराज सुलेमान शिकोह के डेरे में पहुँचे और कहा—

शाहजादा, आप जिस भयानक हालत में आ पड़े हैं, उसे आपसे छिपा रखना हम मुनासिब नहीं समझते। अब पहले जैसी परिस्थिति नहीं है। हालात ऐसे बदल गए हैं कि इस वक्त आपको न तो दिलेर खाँ पर भरोसा करना चाहिए, न दाऊद खाँ पर, न अपनी फौज पर। अब आप अपने वालिद की मदद करने को अगर आगे बढ़ेंगे तो अपना सत्ता जाएँगे। सिवाय मेरी आपको यह नेक राय है कि आप जल्द-से-जल्द मद्दाल के पहाड़ों की ओर चले जाएँ और वहाँ के राजा का आश्रय लें। मुझे आशा है वह आपको आश्रय देगा। स्थान दुर्गम होने और औरंगजेब के सौ आँखों में धूल झोंक रहने के अलावा वह वहाँ पहुँच भी न सकेगा। आप वहाँ रह कर बदलते हुए हालात को देखते रहें और जब मौका देखें आकर अपनी बर्बादी और बहादुरी दिखाएँ।"

यह सुनते ही शाहजादे का चेहरा जर्द हो गया और वह समझ गया कि अपने भी बेगाने हो गए। अब किसी पर भी भरोसा किया

नहीं जा सकता। वह यह भी समझ गया कि यहाँ रहना मौत के मुँह में जाना है। न जाने कौन विश्वासघाती पकड़ कर कैद कर ले।

उसने समझ लिया कि मिर्जा राजा और दिलेर खाँ अब उसे सहायता न देंगे। इसी समय उसने सुना कि उसका पिता दिल्ली से लाहौर को भगाया जा रहा है। उसने अपने मित्रों, मुसाहिबों और मनसबदारों से सलाह ली। मनसबदारों, मित्रों और सैनिकों ने उसके साथ जाना पसन्द किया, उन्हें संग लेकर वह इलाहाबाद को लौटा। उसका इरादा था कि गंगा के किनारे होते हुए पहाड़ों के पास नदियाँ पार करके किसी तरह पंजाब में अपने पिता से जा मिले। वह एक वीर तरुण था। वह ऐसी ओर बुद्धिमानी से चला। परन्तु सेना का अधिकांश भाग मिर्जा राजा और दिलेर खाँ के साथ रह गया था। उन्होंने उसे अपना बहुत-सा मूल्यवान सामान छोड़ जाने को लाचार किया। जब वह चलने लगा तो उन्होंने उसका सब माल असबाब लुटवा लिया जिसमें सुहागों से लदा हुआ एक हाथी भी था। इस हाथी को गर्वा देने पर लोगों ने समझ लिया कि जब लक्ष्मी ही चली गई तब उसके साथ जाने से क्या लाभ? बहुत से आदमियों ने उस अभागे का साथ छोड़ दिया। अब बहुत कम आदमी उसके साथ रह गए। फिर भी वह आगे बढ़ता ही गया। परन्तु उसने देखा हर दिशा में भारी शत्रु सेनाएँ उसका मार्ग रोके हुए थीं। लोग उसका साथ छोड़ते जाते थे। राह में बँजारे देहातियों ने उसे बारम्बार लूटा और उसके साथियों को मार डाला। इस प्रकार निराश होकर वह शरण के लिए श्रीनगर के पहाड़ों में चला गया। गढ़वाल के राजा पृथ्वी सिंह ने उसे इस शर्त पर आश्रय दिया कि वह सारी सेना छोड़ दे और अपने कुटुम्बियों और केवल सात नौकरों को साथ लाए। अन्त में सुलैमान को यही करना पड़ा।

—१०८—

खजुआ की लड़ाई

सुलेमान शिकोह से युद्ध करके शुजा ने फिर से अपना सैन्य संगठन किया और जब उसने सुना कि औरंगजेब मुलतान और सिंध की ओर दारा के पीछे घूम रहा है तो वह साहस करके आगरे की ओर फिर लौटा। औरंगजेब ने तख्त पर बैठते ही उसे अत्यन्त प्रेम और सम्मानपूर्वक लिखा था कि बिहार और बंगाल का समूचा प्रान्त आपका है। परन्तु शुजा ने इसकी परवा न की और औरंगजेब की गैरहाजिरी से लाभ उठाना चाहा। उसकी महत्त्वाकांक्षा फिर जाग्रत हो उठी।

औरंगजेब को ज्योंही इस बात की सूचना मिली, वह ताबड़तोड़ मुलतान से लौटा। इस समय तक शुजा इलाहाबाद से आगे और तीन पड़ाव बढ़ आया था और खजुआ नाम के एक छोटे से गाँव के पास तालाब के किनारे डेरा डाल चुका था। औरंगजेब ने शुजा के लश्कर को वहीं जा घेरा और शुजा के पड़ाव से आठ मील के अन्तर पर पश्चिम में कोड़ा में अपने पुत्र से जा मिला, जिसे वह पहले ही शुजा के अवरोध के लिए भेज चुका था। इसी दिन मीरजुमला भी दक्षिण से आकर उसे आ मिला। दोनों लश्करों के बीच लड़ाई के योग्य विशाल मैदान था। औरंगजेब लड़ने को बेचैन हो रहा था।

दो जनवरी को औरंगजेब ने अपनी सेना नदी पार की, और ध्रुव बढ़ कर आगे बढ़ाई और शत्रु के पड़ाव से एक मील के अन्तर पर जा डटा। उसी रात को मीरजुमला ने दोनों सेनाओं के बीच पड़ने वाली एक छोटी-सी पहाड़ी पर अपना तोपखाना जमा लिया। उसने चालीस तोपें इस चुस्ती से जमाईं कि जब चाहे भागती या बढ़ती हुई सेना पर गोले बरसा सके। सारभर औरंगजेब की सेना में तैयारियाँ होती रहीं।

इस समय औरंगजेब की कमान में पचास हजार सेना थी, जो शुजा की तेईस हजार सेना का सामना करने को खड़ी थी।

शुजा को मालूम हो गया कि अपने से तिगुनी सेना से वह परंपरागत युद्धप्रणाली से नहीं लड़ सकता है, इसलिए उसने अपनी सारी सेना तोपखाने के पीछे एक कतार में खड़ी की और एक मजबूत किलेबन्दी बनाई।

दो घड़ी दिन चढ़े, लड़ाई छिड़ी। तोपों, गोलों और बन्दूकों की भयंकर गर्जना के साथ युद्ध आरम्भ हुआ। शुजा अपने स्थान पर डटकर औरंगजेब के आक्रमणों को व्यर्थ करने लगा। इससे औरंगजेब कुछ कठिनाई में पड़ गया। शुजा चाहता था कि गर्मी से घबरा कर शत्रु दल नदी की ओर लौटे तो उस पर लहरा टूट पड़े। औरंगजेब शुजा की इस चाल को समझ गया। अतः वह बढ़ता ही गया, पीछे न हटा। अन्त में दोनों सेनाएँ एक दूसरे से भिड़ गईं और तीरों की वर्षा होने लगी। सैयद आलम ने तीन मतवाले हाथियों को आगे आगे खदेड़ते हुए औरंगजेब के बाईं पहलू पर आक्रमण किया। वह आक्रमण इतना भीषण था कि औरंगजेब का वाम पक्ष भंग हो गया और सेना भाग खड़ी हुई। इसी समय न जाने कैसे औरंगजेब के मरने की झूठी खबर फौज में फैल गई, जिससे उसकी सेना में भगदड़ शुरू होने लगी। ठीक इसी समय इसके मध्य भाग पर तीव्र आक्रमण हुआ। उस समय औरंगजेब की रक्षा के लिए केवल दो हजार सवार वहाँ थे—परन्तु उसकी सेना के दो पिछले दस्तों ने आगे बढ़ कर शत्रुओं की राह रोक ली। औरंगजेब ने बाईं ओर मुड़ कर सैयद आलम से मोर्चा ले उसे पीछे खदेड़ दिया। परन्तु तीनों मदमस्त हाथी तो बढ़े ही चले आ रहे थे। उनमें से एक औरंगजेब के हाथी के पास तक आ पहुँचा। वह एक संकट काल था। पर औरंगजेब ने अपने हाथी के पैरों में जंजीरें डाल कर उसे वहाँ से न हटने दिया और वह चट्टान की भाँति अचल खड़ा रहा। शत्रु के हाथी के महावत को

उसने गोली से मार गिराया। फिर शाही महावत इस मस्त हाथी पर पीछे से सवार हो गया और उसे काबू में कर लिया।

अब औरंगजेब ने अपने दाहिने पार्श्व पर बल किया, जिसे शाहजादा बुलन्द अख्तर ने बुरी तरह झंझोड़ डाला था। यद्यपि शाहआलम की सेना अधिक न थी, पर उसने औरंगजेब की सेना के पैर उखाड़ दिए थे। औरंगजेब ने बड़ी दृढ़ता से उस पक्ष को व्यवस्थित किया और अब दाहिना पक्ष सबल करके आगे बढ़ा। शीघ्र ही उसने शाहआलम की सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया। इतने में औरंगजेब को एक नई विपद का सामना करना पड़ा, जिसने उसके सारे ही लश्कर को घबराहट में डाल दिया। जोधपुर के राजा जसवन्तसिंह—जो बड़े उत्साह से औरंगजेब से आ मिले थे, और इस युद्ध में दाहिने पक्ष के नायक थे उन्होंने एकाएक विश्वासघात करके औरंगजेब की सेना के पिछले भाग पर आक्रमण कर दिया। उस मार से घबरा कर वह सेना तितर बितर होकर भाग चली। राजा साहेब ने खजाना और असबाब लूटना आरम्भ किया। सारी सेना में भय और आतंक व्याप गया। इसी समय उपयुक्त अवसर समझ शुजा ने एक बहुत बड़ा आक्रमण किया जिससे औरङ्गजेब की सेना में भगदड़ मच गई। औरङ्गजेब भागती सेना को रोक ही रहा था, कि एक तीर सामने से औरङ्गजेब का महावत मारा गया और उसे हाथी का सम्हालना कठिन हो गया। वह निरुपाय होकर हाथी से उतरना चाह ही रहा था कि मीरजुमला घोड़ा दौड़ाता आया और कहा—"हजरत, यह क्या गजब करते हैं, यह दकन नहीं है, क्या मार कर दकन जाएँगे।" इस समय सन्ध्या हो रही थी और मीरजुमला दिनभर बहुत व्यस्त रहा था। औरङ्गजेब हाथी पर जम गया। पर उसके चारों ओर शत्रु फैल गए थे और उसे भय हो रहा था कि कहीं मैं शत्रु के हाथ न पड़ जाऊँ।

इसी समय मुहम्मद सुलतान ने अपनी ताजा दम फौजों को आगे बढ़ा कर शत्रु पर हमला किया। शुजा की फौजों

की कतारें बिखरने लगीं। मीरजुमला के प्रभाव से मराठी सेना लौट पड़ी। अब सारी ही शाही सेना आगे बढ़ी और उसने शुजा के मध्य भाग को चारों ओर से घेर लिया। तोपों के गोले शुजा के सिर पर से जा रहे थे। इससे वह खतरे से बचने के लिए हाथी से उतर कर घोड़े पर सवार हो गया। शुजा के ऐसा करते ही युद्ध की समाप्ति हो गई। जो चूक औरंगजेब करते-करते बचा, वह शुजा ने की। हाथी को खाली देख सेना में यह अफवाह फैल गई कि शुजा मारा गया और देखते ही देखते उसके बंगाली सैनिक भाग खड़े हुए। शुजा अपने लड़कों और सैयद आलम के साथ रणक्षेत्र से भाग गया। औरंगजेब ने उसकी छावनी लूट ली।

: ६७ :

औरंगजेब की उलझन

औरंगजेब की इस आकस्मिक जीत को देख कर राजा जसवन्त सिंह खुद में जा हाथ लगा लेकर आगरे की ओर चल दिए। जिस समय वे आगरे पहुँचे, आगरे में यह अफवाह फैल चली थी कि औरंगजेब लड़ाई में हार गया और मीरजुमला के साथ पकड़ लिया गया और शुजा अपनी विजयिनी सेना लिये आ रहा है। इन समाचारों को सुन कर आगरे के हाकिम शाइस्ता खाँ, जो औरंगजेब के मामा थे, बहुत घबरा गए और शहर छोड़ कर जान देने पर आमादा हो गए। परन्तु उनके जनानखाने की औरतों ने प्याला उनके हाथ से छीन कर फेंक दिया। दो दिन तक आगरे में अन्धेरगर्दी रही। यदि जसवन्त सिंह चाहते तो इस बीच में शाहजहाँ को कैद से छुड़ा सकते थे, पर वह यह भी न कर सके और आगरे में अधिक ठहरना ठीक न समझ मारवाड़ को कूच कर गए।

औरङ्गजेब यद्यपि लड़ाई जीत गया था—परन्तु वह बड़ी ही उलझन में फँस गया। उसे बड़ी चिन्ता उसे जसवन्त सिंह की थी। वे न जाने आगरे में जाकर क्या उत्पात खड़ा करें। आगरे की अब उसे जबर्दस्त चिन्ता लग गई और उसने निर्णय किया कि आगरे लौटना उसके लिए आवश्यक है। उसे यह भी शीघ्र ही मालूम हो गया कि इस लड़ाई में शुजा की कुछ विशेष हानि नहीं हुई है। उसकी उदारता और चतुरता के कारण वे सब राजा—जिनके राज्य गंगा के दोनों किनारों पर थे—उसकी सहायता के लिए सेनाएँ भेज रहे थे। उसने यह भी सुना कि शुजा इलाहाबाद में पाँव जमाना चाहता है, जो गंगा घाट के रूप में बंगाल का द्वार है।

अब औरङ्गजेब की आशाएँ केवल दो व्यक्तियों पर आधारित थीं। एक उसका बड़ा लड़का मुहम्मद सुलतान और दूसरा मीरजुमला। परन्तु इन दोनों से वह भय भी खाता था। जबसे मुहम्मद सुलतान ने शाहजहाँ को कैद किया और आगरे के किले पर विजय पाई थी, उसके हौसले बढ़ गए थे और वह कुछ निरंकुश और स्वतन्त्र हो गया था। मीरजुमला के जेर्ब, साहस और सद्गुणों का औरङ्गजेब प्रशंसक था। पर उसकी शक्ति से डरता था। भारतवर्ष भर में यह प्रसिद्ध था कि उसके पास बेशुमार धन है और वह नीच मन हीरों का स्वामी है। यह भी सब जानते थे कि वह युक्ति, नीति और बुद्धि से कठिन-से-कठिन काम कर सकता है। कूटनीति-पटु औरङ्गजेब चाहता था कि ये दोनों राजधानी से दूर भी रहें और इन्हें बुरा भी न लगे। इसलिए एक बड़ी सेना उन दोनों को सुपुर्द कर उन्हें शुजा के पीछे भेज दिया। विदा करते समय मीरजुमला से उसने कहा—"फ़तह के बाद बंगाल के अलावा सूबे की हुकूमत आपके ही कब्जे में रहेगी। बल्कि आपके बाद आपका बेटा भी इस सूबेदारी का मुस्तहक समझा जायगा। गो कि आपकी खिदमतें बहुत सी इनामतों के काबिल हैं। मगर उनमें से एक शिकायत यह है कि आप जब शुजा पर फ़तह पा लेंगे—तब,

अमीरुल उमरा का खिताब जो हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा खिताब है, आपको दिया जायगा।"

इस प्रकार मीरजुमला को संतुष्ट करके उसने अपने बेटे मुहम्मद सुलतान से कहा—"बेटा, ख़याल करो कि मेरी औलाद में तुम सबसे बड़े हो और अपने ही काम पर जाते हो। बेशक, तुमने बड़े-बड़े काम किए हैं, मगर सच पूछो तो अभी कुछ नहीं हुआ है। जब तक सुलतान शुजा को—जो हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है, शिकस्त देकर न पकड़ लाओ, हमारे सारे ही काम अधूरे हैं।" इतना कह कर औरंगज़ेब ने मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान को सिरोपाव दे अनेक हाथी घोड़े भेंट दिए और विदा किया।

परन्तु उसने मुहम्मद सुलतान की बेगम और मीरजुमला के बेटे मुहम्मद अमीन को अपने पास रोक लिया। उसने मुहम्मद सुलतान से कहा—'बेगम गोलकुण्डा के बादशाह की बेटी है, ऐसी ऊँचे खानदान की ख़ातून को लड़ाई के मैदान में आना मुनासिब नहीं है।" मुहम्मद अमीन की बाबत यह कहा—"उसकी उम्र बहुत कम है और हमें उसे देखकर बहुत मुहब्बत होती है। मैं कुछ दिन उसे अपनी आँखों के सामने रखूँगा और उसकी तालीम का उम्दा बन्दोबस्त करूँगा।" पर वास्तव में उन दोनों की जान ख़तरे में थी। जिसके कारण मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान किसी प्रकार का कपटाचरण न कर सके।

यह सब इन्तज़ाम करके और सब आगा-पीछा सोच कर औरंगज़ेब आगरे लौटा।

: ६८ :

शुजा की शामत

रणक्षेत्र से भाग कर शुजा ने गंगा के इस पार आकर इलाहाबाद में दम लिया। वह इस बात से डर रहा था कि बंगाल के निचले भाग के वे राजा लोग जो उसकी लूट-खसोट के शिकार बने थे—इस

अवसर पर उपद्रव न खड़ा कर दें। जब उसे औरंगजेब के प्रबन्ध का पता लगा तो उसे यह भय हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि मीरजुमला इलाहाबाद को छोड़ किसी दूसरे घाट से गंगा पार कर पीठ पर आ पहुँचे और उसका बंगाल जीतना ही असंभव हो जाय। इन सब बातों पर भलीभाँति विचार कर वह इलाहाबाद से हट कर बनारस और पटना होता हुआ मुंगेर में सुकीम हुआ।

मुंगेर गंगा तट पर एक छोटा-सा शहर था। उसके एक ओर पहाड़ और दूसरी ओर सघन जंगल और नदी थी। सैनिक दृष्टि से वह बंगाल का द्वार समझा जाता था। वहाँ उसने दृढ़ मोर्चा स्थापित किया और नगर तथा नदी के किनारे से पहाड़ तक एक गहरी खाई खुदवायी। अब वह गंगा के घाट को रोककर मीरजुमला की ताक में बैठ गया। थोड़ी-सी शाही सेना आई जिसे वह पन्द्रह दिन तक रोके बैठा रहा। पर जब उसे यह सूचना मिली कि इस सेना में मीरजुमला नहीं है, वह सिर्फ धोखे के लिए भेजी गई थी। मीरजुमला खड़गपुर के राजा बहरोज की मदद से अपनी सेना के साथ मुंगेर के किले से दक्षिण-पूर्व की घाटियों और जंगलों में होकर उसके पीठ पर पहुँच चुका है। यह सुनते ही शुजा साहिबगंज की ओर दौड़ा और उसने वहाँ एक दीवार बनाकर वहाँ की सकरी घाटी का मार्ग रोक लिया। इतने परिश्रम और खर्च से बनाई खाई छोड़ देनी पड़ी। मुंगेर और राजमहल के बीच गंगा कई चक्कर खाकर गई है, फिर भी बहुत कष्ट उठाकर शुजा मीर जुमला से प्रथम ही राजमहल जा पहुँचा और वहाँ अपना मोर्चा जमा दिया। मीरजुमला और मुहम्मद सुलतान अपने बाएँ हाथ पर अनेक दुर्गम और भयानक मार्गों को पार करते हुए इसलिए गंगा की ओर चले कि उनका भारी तोपखाना और सेना जल मार्ग से आ रही थी। वे उन्हें साथ-साथ लेना चाहते थे। उन्होंने बीरभूमि और बर्दवान के जमींदारों को भी मिला लिया था। अभी वे वहीं तक पहुँच पाए थे कि शाही सेना में यह अफवाह फैल गई कि दारा अजमेर की लड़ाई

में जीतकर राजपूतों से बदला ले रहा है। इस अफवाह से परेशान होकर मीरजुमला के राजपूत सैनिक सेना छोड़ अपने-अपने घरों को रवाना हो गए। परन्तु मीरजुमला ने अपनी सेना को सम्हाला और अन्त में राजमहल के मैदान में आ डटा। पाँच दिन घनघोर युद्ध हुआ और मीरजुमला की तोपों ने उसकी दुर्बियों को जो मिट्टी और वृक्षों की डालों से बनाई गई थीं नष्ट कर दिया। अब उसे बरसात का भी भय था, उसे रातोंरात वहाँ से भागना पड़ा। दो तोपें भी वह छोड़ गया।

मार्च समाप्त हो रहा था। मीरजुमला का राजमहल पर अधिकार होने से गंगा के पश्चिम का सारा प्रदेश शुजा के हाथ से निकल गया।

शुजा के साथ अब केवल पाँच हजार सैनिक रह गए थे और उसकी सफल सेना लड़ने के योग्य न रह गई थी। उधर मीरजुमला का लश्कर खूब मजबूत था। पर जलसैन्य नाकाफी थी। शुजा के साथ बड़ी-बड़ी तोपें थीं, जिन्हें घोड़ोंपर चलाते थे। फिर बंगाल की समूची जलसेना भी उसी के अधिकार में थी। शुजा ने गौर किले से चार मील पश्चिम टाँडा को अपना प्रधान सैनिक केन्द्र बनाया और गंगा के पूर्वी किनारों पर मोर्चे मोर्चे लाइनें लादीं।

इस समय मीरजुमला ने उसका पीछा नहीं किया। उसे भय था कि शुजा छापा मारने की इच्छा से छिपा न बैठा हो। इस समय रात ही में भारी वर्षा हो गई। लगातार वर्षा की समाप्ति तक मीरजुमला को राजमहल में ही ठहरना पड़ा।

इससे शुजा को तैयार होने का पूरा मौका मिल गया। उसने नई सेना भरती की। जिनमें अधिकांश पुर्तगीज थे जो कुछ लोगों के साथ बंगाल के निचले प्रान्तों में आ गए थे। ये सब असम और दोपहले सब मिलाकर नौ-दस हजार थे जिन्हें अपने सद्व्यवहार से शुजा ने अपना साथी बना लिया। इस समय मीरजुमला की फौजें गंगा के पूरे पश्चिम किनारे तक फैली हुई थीं। उधर में मुहम्मद मुराद बेग राजमहल में था। शाहजादा स्वयं सेना के एक बड़े भाग का लिए कुहिरकार लाँ

और इस्लाम खाँ के साथ दक्षिण में तेरह मील की दूरी पर दोगाची स्थान पर शुजा के सामने डटा था। आठ मील और दक्षिण में कूचपुर में अलीकुली खाँ बैठा था। आठ हजार चुने सवारों के साथ मीर जुमला सुमल सीमा के अन्तिम छोर पर राजमहल से अट्ठाईस मील दक्षिण में दूरी पर अधिकार जमाए बैठा था।

मीरजुमला के आदेश से दोगाची के पड़ाव से शुजा पर आक्रमण किए गए जिनमें सफलता मिली। परन्तु तीसरे आक्रमण में मीरजुमला को बहुत हानि उठानी पड़ी। उसके अनेक उच्च अधिकारी और सैनिक मारे गए और कैद हुए।

इसी समय शाहजादा मुहम्मद सुलतान दोगाची में अपने डेरे से चुपचाप भागकर शुजा से जा मिला। बहुत दिनों तक मीरजुमला का हुक्म उठाते उठाते वह तंग आ गया था। वह अपने को सारी सेना का अफसर समझता था और मीरजुमला का अनुशासन उसे सह्य न था। वह मीरजुमला को तिरस्कार की दृष्टि से देखता था। वह दिन-दिन दर्प और उद्दण्ड होता जाता था। एक दिन बात ही बात में उसने कह दिया कि "आगरे के किले की रक्षा की मेरी ही कोशिशों और मिहनत से हुई, पस, अगर हजरत इसके लिए किसी के ममनून हों तो उन्हें मेरा ही ममनून होना चाहिए।"

ये बातें औरंगजेब के कान तक भी पहुँचीं और वह नाराज हो गया। यह बात शाहजादे से छिपी न रही। वह डर गया कि कहीं उसे कैद न कर लिया जाय। अन्त में एक रात वह चुपचाप चलकर शुजा के लश्कर में जा पहुँचा। शुजा ने उसे अपनी पुत्री गुलरुख बानू ब्याह देने और तख्तनशीनी प्राप्त करने में उसकी मदद लेने को गुप्त वचन दिया था। पर जब वह मूर्ख शाहजादा अकेला उसके लश्कर में जा पहुँचा, तो शुजा ने उसपर विश्वास नहीं किया। उसने समझा कि कहीं यह औरंगजेब की चाल न हो। मुहम्मद सुलतान ने बड़ी-बड़ी प्रतिज्ञाएँ कीं, बहुत-बहुत कसमें खाईं फिर भी शुजा ने उसे अपनी सेना में

कोई अधिकार नहीं सौंपा। वह उसके चाल-चलन की जाँच ही करता रहा।

ज्योंही मीरजुमला को इसकी सूचना मिली—वह तुरन्त होगाची पहुँचा और सेना में अनुशासन स्थापित किया। दूसरे नायकों ने मीर-जुमला को अपना अधिपति मान लिया और उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार उसने बड़ी ही आफत से शाही लश्कर को बचाया। इस सेना ने केवल एक ही आदमी खोया—वह था केवल शाहजादा।

वर्षा ऋतु के कारण अब युद्ध असम्भव हो गया। बंगाल में वर्षा बहुत होती है। मीरजुमला ने मानसूनाचार में डेरा डाला और बाकी सेना हसिकार खाँ की अध्यक्षता में राजमहल में ठहरी रही। वर्षा के कारण राजमहल के आसपास का ताल्लुका दलदल बन गया। नगर की खाद्य सामग्री शुजा ने रोक दी। मुगल सेना के पास अनाज की बड़ी कमी हो गई। इसी समय शुजा ने अकस्मात् राजमहल पर आक्रमण करके उसे अधिकृत कर लिया। मुगल सेना बुरी तरह हारी और उसे सारे सामान पर शुजा का अधिकार हो गया।

मुहम्मद सुलतान से शुजा की नहीं पटी और वह वर्षा ऋतु समाप्त होने के प्रथम ही भागकर मीरजुमला के लश्कर में आ मिला। मीर जुमला ने उसका साधारण सत्कार किया और कहा—"आपका कुसूर बहुत बड़ा है, मगर खैर, बादशाह से कोशिश करके माफी की इर्जास करूँगा।"

: ६९ :

औरङ्गजेब का नया कदम

आगरे में पहुँचकर औरङ्गजेब ने नगर की सब व्यवस्था देखी। जहाँ जो त्रुटि पाई उसे ठीक किया। किले के पहरे का पूरा इन्तजाम किया मुराद बख्श को उसने ग्वालियर के किले में भेज दिया, और अब

दिल्ली आकर तख्ते ताऊस पर बैठ कर खुलेआम दरबार करना शुरू कर दिया।

इसी समय उसे सूचना मिली कि शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान ने विद्रोह किया है। पर वह सब परिस्थिति देखकर चुप हो गया। बाद में जब उसे सूचना मिली कि वह फिर वापस आ गया है तो उसने मीर जुमला को हुक्म भेजा कि उसे तुरन्त दिल्ली भेज दो। मार्गशीर्ष मुहम्मद सुलतान दिल्ली भेज दिया गया। परन्तु उसने ग्वालियर पार की—शाही सिपाहियों ने उसे घेरकर पकड़ लिया, और हथकड़ी बेड़ियों में जकड़ कर जबर्दस्ती एक अम्बारी में बन्द करके ग्वालियर की ओर ले चले। वहाँ वह कैद कर दिया गया और आगे चलकर वहीं उसकी मृत्यु हुई।

अपने बड़े बेटे मुहम्मद सुलतान को ग्वालियर के किले में कैद करके उसने शाहज़ादा मुअज़्ज़म से कहा—"ऐसा नहीं कि तुम भी तरक्की और बुलन्द परवाज़ी के ख़यालात में मार्ग की तरह हो जाओ और वही सुज़ामिला तुमको पेश आए जो उसको पेश आया है। याद रक्खो, सल्तनत एक ऐसा नाज़ुक मुआमिला है, कि बादशाहों को अपने बाप से भी हसद और बदगुमानी होती है। पस, यह ख़याल कभी न करना कि औरङ्गजेब भी अपने बेटों से वही सब देख सकता है, जो जहाँगीर और शाहजहाँ ने औरों से देखा था। या जिस तरह शाहजहाँ ने तख्तोताज छीन लिया, औरङ्गजेब भी उसी तरह छीन सकता है।"

शाहज़ादा मुअज़्ज़म ने हर तरह दीनता दिखा कर बाप की अधीनता और आज्ञाकारिता प्रकट की।

जसुआ की लूट में जो माल जसवन्त सिंह के हाथ लगा था, उससे उन्होंने एक बड़ी सेना एकत्र कर ली और दारा शिकोह को लिखा कि वह आगरे चला आए, मैं उसे राह में मिल जाऊँगा। दारा ने भी बहुत सी सेना एकत्र कर ली थी, पर वह कुछ अच्छी न थी।

जसवन्त सिंह का पत्र पाते ही वह अहमदाबाद से चल पड़ा। उसे बहुत आशा बँध गई। उसने सोचा कि जब मैं ऐसे नामी राजा की राजधानी में पहुँचूँगा तो मेरे शुभचिन्तक अवश्य मेरे झण्डे के नीचे एकत्र हो जाएँगे। इसी भरोसे वह बड़ी तेजी से अजमेर की ओर चला।

परन्तु महाराजा जसवन्त सिंह ने अपना वचन पालन नहीं किया। जय सिंह ने एक पत्र देकर उन्हें ऊँच-नीच समझा कर रोक दिया। उन्होंने उन्हें समझाया—"आपने दूसरे दुष्ट का साथी बनने में क्या लाभ सोचा है? इसका परिणाम तो यही होगा कि आपके कुटुम्ब की दुर्दशा हो। मैं भी एक राजा हूँ और निवेदन करता हूँ कि राजपूत वीरों का रक्त व्यर्थ बहाने से क्या लाभ है। आप यह भी जान रखिए कि अन्य राजपूत राजा आपको सहायता नहीं देंगे। मैं ही उन्हें रोकूँगा। इसलिए आप देशी आग मत भड़काइये जो देश भर में फैल जाय और उसे कोई न बुझा सके। आप यदि दाग को उसके मार्ग के भरोसे छोड़ देंगे तो औरङ्गजेब भी आपको क्षमा कर देगा और आप से वह धन भी नहीं माँगेगा जो लड़ाई की लूट में आपने लूटा है। इसके अतिरिक्त आपको गुजरात की सूबेदारी भी मिल जायगी। इसका लाभ आप समझ सकते हैं कि आप एक ऐसे प्रान्त के अधिकारी हो जाएँगे जो आपके राज्य के निकट है और वहाँ आप आनन्द से रह सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं—इन सब बातों को जो मैंने पत्र में लिखी हैं, पूरा करने का जिम्मा मैं लेता हूँ।"

इस पत्र को पाकर जसवन्त सिंह चुपचाप पड़ा रहा और अमावा वापस क्योंही अजमेर पहुँचा—औरङ्गजेब की सेना ने उसे घेर लिया।

७० :

दोराई की लड़ाई

ठाठ से पचपन मील पूर्व में हटकर दाग ने कम्बू के रन को पार किया और भुज और काठियावाड़ में नवानगर की राह तीन हजार

सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुँचा। वहाँ पर शाहनवाज खाँ दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपखाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुँचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख्त थी और उस इलाके में पानी की भारी कमी थी। फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस पैंतीस दिन की यात्रा करके सहित करना किसी भी हालत में दारा के लिए सम्भव न था, जिस पर औरङ्गजेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था, जिसके पास बढ़िया सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने की छोड़ दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में दोराई की घाटी में औरङ्गजेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू चिटली और गोकला पहाड़ियों से सुरक्षित थे और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे था। अपनी सेना के दक्षिण में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयाँ और स्थान-स्थान पर तोपें बनवाईं।

औरङ्गजेब ने दक्षिण दिशा से इन मोर्चेबन्दी का सामना किया। पहली मार्च के संध्याकाल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयाँ बड़ी दुर्गम थीं, दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊँचे स्थानों पर थे। वे औरङ्गजेब के पैदलों और बन्दूकचियों को मौत के मुँह में धकेलने लगे। दो सप्ताह में भी औरंगजेब पंक्ति भेद न कर सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर नई योजना बनाई और एक मजबूत दस्ते को ले शाहनवाज खाँ के ऊपर जो दारा के बाईं पक्ष में था—जोर का आक्रमण किया। उधर जम्मू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोकला पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूँढ़ निकाला और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

थीं। कुछ जर, ज़र, भी साथ थे। थोड़े से नौकर-चाकर थे—जिन्होंने साथ नहीं छोड़ा था। तीन दिन वह बिना रुके चलता चला गया। गर्मी इतनी प्रचंड थी और धूल इतनी उड़ती थी कि दम घुट पड़ता था। बहली का एक बैल मर गया था। दूसरा भी मरने की दशा को पहुँच चुका था। उसकी बेगम के पैर में एक गहरा घाव हो गया था, जो सड़ गया था। वह एशिया के सबसे समृद्ध, शक्तिशाली साम्राज्य का मनोनीत युवराज ऐसे दीन-हीन वेश में उस उजाड़ रन को पार कर सिन्ध की दक्षिणी सीमा की ओर जा रहा था।

: ७१ :

विश्वासघाती के हाथ में

औरंगज़ेब की इस प्रबल शत्रु पर तीखी नज़र थी। उसने राजा जय सिंह और बहादुर खाँ को दारा के पीछे अजमेर से भेज ही दिया था, अब लाहौर के हाकिम अलीकुली खाँ को लिखा कि वह मस्तूर जाकर दारा की राह रोक ले। अब सिन्ध के अधिकारी के और अफ़सर के दस्ते उत्तर-पूर्व से दारा को घेरे हुए आगे बढ़ रहे थे। उसके लिए भाग निकलने की केवल एक ही राह थी और वह उत्तर-पश्चिम को मुड़ा। सिन्ध नहीं पार की, और कन्धार की राह ईरान भाग जाने के इरादे से वह सहवान जा पहुँचा।

जब जय सिंह छोटे बड़े रन को पार कर—बड़ी-बड़ी कठिनाइयों से केच मिकिस्तान की सीमा पर सिन्धु तट पर पहुँचे, तो उन्हें मालूम हुआ कि दारा भारत की मुगल सीमा पार कर गया है और वह सिन्धु के किनारे-किनारे उत्तर की राह, भारत से बाहर की ओर चल रहा है।

इस समय उसका ईरान को निकल जाना अधिक अच्छा होता। परन्तु उसकी बेगम नादिरा बानू ने, जो उस समय इस भयानक यात्रा के कष्टों के कारण सख्त बीमार थी, कहा—"कि अगर आप ईरान

सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुँचा। वहाँ पर शाहनवाज़ ख़ाँ दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपख़ाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुँचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख्त थी और उस इलाके में पानी की भारी कमी थी। फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस दिनों तक सेना लेकर सहित करना किसी भी हालत में दारा के लिए सम्भव न था, जिस पर औरङ्गज़ेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था, जिसके पास बढ़िया सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने को छोड़ दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में दोराई की घाटी में औरङ्गज़ेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू विटली और गोकला पहाड़ियों से सुरक्षित थे और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे था। अपनी सेना के दाहिने में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयाँ और स्थान-स्थान पर तोपें बनवाईं।

औरङ्गज़ेब ने दक्षिण दिशा से इस मोर्चेबन्दी का सामना किया। पहली मार्च के संध्याकाल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयाँ बड़ी दुर्गम थीं। दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊँचे स्थानों पर थे। वे औरङ्गज़ेब के पैदलों और बन्दूकचियों को मौत के मुँह में धकेलने लगे। दो सप्ताह में भी औरंगज़ेब पक्ति भेद न कर सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर नई योजना बनाई और एक मजबूत रास्ते को ले शाहनवाज़ ख़ाँ के ऊपर जो दारा के बाएँ पक्ष में था—जोर का आक्रमण किया। उधर जम्मू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोकला पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूँढ़ निकाला और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

जसवन्त सिंह का पत्र पाते ही वह अहमदाबाद से चल पड़ा। उसे बहुत आशा बँध गई। उसने सोचा कि जब मैं ऐसे नामी राजा की राजधानी में पहुँचूँगा तो मेरे शुभचिन्तक अवश्य मेरे झण्डे के नीचे एकत्र हो जाएँगे। इसी भरोसे वह बड़ी तेजी से अजमेर की ओर चला।

परन्तु महाराजा जसवन्त सिंह ने अपना वचन पालन नहीं किया। जय सिंह ने एक पत्र देकर उन्हें ऊँच नीच समझा कर रोक दिया। उन्होंने उन्हें समझाया—"आपने डूबते हुए का साथी बनने में क्या लाभ सोचा है? इसका परिणाम तो यही होगा कि आपके कुटुम्ब को कुर्दशा हो। मैं भी एक राजा हूँ और निवेदन करता हूँ कि राजपूत वीरों का रक्त व्यर्थ बहाने से क्या लाभ है। आप यह भी याद रखिए कि अन्य राजपूत राजा आपको सहायता नहीं देंगे। मैं ही उन्हें रोकूँगा। इसलिए आप ऐसी आग मत भड़काइये जो देश भर में फैल जाय और उसे कोई न बुझा सके। आप यदि दारा को उसके भाग्य के भरोसे छोड़ देंगे तो औरङ्गजेब भी आपको क्षमा कर देगा और आप से यह धन भी नहीं माँगेगा जो लखुआ की लूट में आपने लूटा है। इसके अतिरिक्त आपको गुजरात की सूबेदारी भी मिल जायगी। इसका लाभ आप समझ सकते हैं कि आप एक ऐसे प्रान्त के अधिकारी हो जाएँगे जो आपके राज्य के निकट है और वहाँ आप आनन्द से रह सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं—इन सब बातों को जो मैंने पत्र में लिखी है, पूरा करने का जिम्मा मैं लेता हूँ।"

इस पत्र को पाकर जसवन्त सिंह चुपचाप पड़ा रहा और अम्बाला दारा ज्योंही अजमेर पहुँचा—औरङ्गजेब की सेना ने उसे घेर लिया।

: ७० :

दोराई की लड़ाई

ठाठ से पचपन मील पूर्व में हटकर दारा ने कच्छ के रन को पार किया और भुज और काठियावाड़ में नवानगर की राह तीन हजार

सैनिकों के साथ वह अहमदनगर पहुँचा। वहाँ पर शाहनवाज़ ख़ाँ दारा के साथ हो गया। सूरत के तोपख़ाने को भी वह ले आया और अजमेर की ओर चला। परन्तु अजमेर पहुँचते ही उसे जसवन्त सिंह के विश्वासघात का पता लग गया। फिर भी अब उसका वापस लौटना संभव न था। गर्मी बहुत सख़्त थी और उस इलाक़े में पानी की भारी कमी थी। फिर विरोधी राजाओं के राज्य में होकर तीस पैंतीस दिन की यात्रा सकुशल सहित करना किसी भी हालत में दारा के लिए सम्भव न था, जिस पर औरङ्गज़ेब जैसा शत्रु उसके सिर पर था, जिसके पास सदैव सेना थी। अतः अब दारा को युद्ध करने का छोड़ दूसरा उपाय न था।

परन्तु यह स्पष्ट था कि यह बराबर की लड़ाई न थी। अजमेर से चार मील दक्षिण में दोराई की घाटी में औरङ्गज़ेब को रोकने का उसने निश्चय किया। उसके दोनों बाजू बिल्कुल और सीधा पहाड़ियों से सुरक्षित थे और अजमेर का समृद्ध नगर उसके पीछे था। अपनी सेना के व्यूह में दोनों पहाड़ियों के बीच की समतल भूमि में उसने एक दीवार बनवाई और उसके सामने खाइयाँ और स्थान-स्थान पर बुर्जियाँ बनवाईं।

औरङ्गज़ेब ने दक्षिण दिशा से इन मोर्चेबन्दी का सामना किया। पहली मार्च के संध्याकाल में उसने दारा पर गोलाबारी शुरू कर दी। परन्तु शत्रु की खाइयाँ बड़ी दुर्गम थीं। दारा की तोपें और बन्दूकची भी ऊँचे स्थानों पर थे। वे औरङ्गज़ेब के पैदलों और बन्दूकचियों को मौत के मुँह में धकेलने लगे। दो लड़ाइयों में भी औरंगज़ेब पंक्ति पैर न कर सका। तब उसने सेनापतियों से सलाह कर नई योजना बनाई और एक मजबूत दस्ते को ले शाहनवाज़ ख़ाँ के ऊपर जो दारा के बाएँ पक्ष में था—ज़ोर का आक्रमण किया। उधर चम्बू के पहाड़ी राजा राजरूप के पहाड़ी सैनिकों ने गोलाबा पहाड़ी पर चढ़ने का एक अज्ञात मार्ग ढूँढ़ निकाला और वह राजा चुपचाप उस पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया।

अब क्यों ही शाही सेना ने शाहनवाज खाँ के मोर्चे पर धावा बोला, साथ ही औरंगजेब का तोपखाना भी आग उगलने लगा। इससे दारा की सेना का अन्य भाग शाहनवाज को सहायता न पहुँचा सका। फिर भी शाहनवाज ने डट कर सामना किया। परन्तु अन्त में उसके पैर उखड़ गए और वह भाग चला। औरंगजेब ने लाइयों के किनारे तक के सारे मैदान पर अधिकार कर लिया। इसी समय राजकुमार के सैनिकों ने गोकला की चोटी पर शाही झंडा गाड़कर जोर से जयनाद किया। अब यह देख कर कि शत्रु पीठ पर भी आ पहुँचे, दारा की सेना निराश हो भाग चली। इसी समय औरंगजेब ने लाइयों पर हमला बोल दिया। अब तो सैनिक तथा सेनापति सब भाग खड़े हुए और मैदान औरंगजेब के हाथ रहा। गोकला पहाड़ी पर शत्रु का अधिकार हो जाने से दारा बहुत घबरा गया और बौखला कर केवल बारह साथियों तथा अपने पुत्र सिपर शिकोह के साथ वह सिर पर पैर रखकर गुजरात की ओर भागा। जसवन्त सिंह के बहकाने से जो हजारों राजपूत युद्धक्षेत्र के पास ही एकत्र थे, उन्होंने दारा की सेना की सारी सामग्री और सामान ढोने वाले उसके बहुत से जानवर लूट लिए।

कहा जाता है कि इस युद्ध में शाहनवाज खाँ ने उसे पूरा धोखा दिया। प्रकट में वह लड़ रहा था, पर वह दुश्मन से मिला था। जो गोले छोड़े जाते थे, उनकी बौछारें बिना गोली की बारूद भरी थी। उससे केवल शब्दमात्र ही होता था। शाहनवाज खाँ इसी लड़ाई में मारा गया और महाराज जयसिंह ने दारा को सूचना दी कि पकड़े जाने से बचना चाहते हो, तो तुरन्त युद्धक्षेत्र से अलग हो जाओ। इस पर विमूढ़ की भाँति दारा भाग खड़ा हुआ और खेत औरंगजेब के हाथ रहा। युद्ध के समय दारा ने अपना सारा खजाना और हरम अजमेर में आनासागर के किनारे छोड़ा था। उन्हें लेकर किसी तरह उसके साथी मेड़ता में उससे आ मिले। यहाँ उसने सुना कि महाराज जयसिंह और बहादुर खाँ की अधीनता में जबर्दस्त फौज उसके पीछे आ रही है।

। अब दारा की सारी आशा अहमदाबाद पर निर्भर थी। मेड़ता में उसके पास दो हजार सवार एकत्र हो गए थे। पर कुछ राह ही में भागने लगे। कुछ गर्मी से मर गए। उसे इस वक्त गर्मी में यह लम्बा चौड़ा रास्ता विपक्षी राजाओं के राज्य में होकर पार करना था। अब जीने तक उसके पास न थे, फिर कोई लोग रात-दिन उसकी दीक्षा कर रहे थे। वे अवसर पाते ही उसके सिपाहियों पर टूट पड़ते और लूटपाट कर उन्हें मार डालते थे। केवल एक पग पीछे रहना भी खतरनाक था। दिन पर दिन उसकी हालत खतरनाक होती जाती थी। उसके हाथी, घोड़े, ऊँट, सिपाही गर्मी से मरते जाते थे।

किसी तरह इन सब विपत्तियों से बचकर दारा ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ से अहमदाबाद केवल एक दिन की राह पर था। उसे बड़ी आशा थी कि उसे अब आश्रय मिल जायगा। परन्तु वह अपने जीजे जिस व्यक्ति को अहमदाबाद का किलेदार बनाया गया था—वह औरंगजेब से मिल गया और दारा को उसके दूत ने सचेत किया कि नगर के निकट न आइए, फाटक बन्द हैं और सेना शस्त्र-सज्जित आपको गिरफ्तार करने को तैयार खड़ी है।

यह सुनकर दारा की बेगम रोने-पीटने लगी। दारा भी आप नोचने लगा उसके पास अब एक भी कौड़ी न था। उसकी बेगम और स्त्रियाँ केवल एक कनात की आड़ में थीं, जिसकी रस्सियाँ बहली के पहियों में बँधी थीं। स्त्रियों के विलाप ने उसको घबरा दिया। सब एक दूसरे का मुँह ताक रहे थे, किसी का राह न सूझती थी। दारा खिन्नचित्त कनात के भीतर गया—स्त्रियों को तसल्ली दे जब वह बाहर आया, तब उसके मुँह पर मुर्दनी छाई हुई थी। वह किसी से कुछ कहता था, किसी से कुछ। एक साधारण सिपाही से भी पूछता था कि वह क्या करे। वह नहीं जानता था कि कहाँ जाय। आखिर वह वहाँ से आगे बढ़ा। अब उसके पास केवल एक घोड़ा, एक बहली और पाँच ऊँट थे। घोड़े पर वह स्वयं और ऊँटों पर उसकी बेगमात,

थीं। कुछ लद्दू टट्टू भी साथ थे। थोड़े से नौकर-चाकर थे—जिन्होंने साथ नहीं छोड़ा था। तीन दिन वह बिना रुके चलता चला गया। गर्मी इतनी प्रचंड थी और धूल इतनी उड़ती थी कि दम घुटा पड़ता था। बहली का एक बैल मर गया था। दूसरा भी मरने की दशा को पहुँच चुका था। उसकी बेगम के पैर में एक गहरा घाव हो गया था, जो सड़ गया था। वह पृथिवी के सबसे समृद्ध, शक्तिशाली साम्राज्य का मनोनीत युवराज ऐसे दीन-हीन वेश में उस उजाड़ रन को पार कर सिन्ध की दक्षिणी सीमा की ओर जा रहा था।

: ७१ :

विश्वासघाती के हाथ में

औरंगज़ेब की इस प्रबल शत्रु पर तीखी नज़र थी। उसने राजा जय सिंह और बहादुर ख़ाँ को तो दारा के पीछे अजमेर से भेज ही दिया था, अब लाहौर के हाकिम ख़लीलुल्ला ख़ाँ को लिखा कि वह मक्खर जाकर दारा की राह रोक ले। जब सिन्ध के अधिकारी के और जयसिंह के दस्ते उत्तर-पूर्व से दारा को घेरे हुए आगे बढ़ रहे थे। उसके लिए भाग निकलने की केवल एक ही राह थी और वह उत्तर-पश्चिम को मुड़ा। सिन्ध नदी पार की, और कन्धार की राह ईरान भाग जाने के इरादे से वह सहवान जा पहुँचा।

जब जय सिंह छोटे-बड़े रन को पार कर—बड़ी बड़ी कठिनाइयों को झेल सिंधिस्तान की सीमा पर सिन्धु तट पर पहुँचे, तो उन्हें मालूम हुआ कि दारा भारत की मुल्क सीमा पार कर गया है और वह सिन्धु के किनारे-किनारे उत्तर की राह, भारत से बाहर की ओर चल रहा है।

इस समय उसका ईरान को निकल जाना अधिक अच्छा होता। परन्तु उसकी बेगम नादिरा बानू ने, जो उस समय इस भयानक यात्रा के कष्टों के कारण बहुत बीमार थी, कहा—"कि अगर आप ईरान

जाने का हठ करते हैं तो मुझे और मेरी बेटी को शाह ईरान की लौंडियाँ बनना पड़ेगा। जो ऐसी बेइज्जती की बात होगी, जिसे मुग़लिया खानदान कभी गवारा न करेगा।"

हाय रे मुग़लिया खानदान! इस बात को बेगम और दारा दोनों ही भूल गए कि जब हुमायूँ ने शेरशाह से हार कर ऐसी ही आपदाओं में पड़कर ईरान की शरण ली थी, तब उसकी बेगम भी उसके साथ थी, तब शाहे ईरान ने उनकी मर्यादा के अनुकूल ही अभ्यर्थना की थी।

अब दारा को अपने एक पुराने कृतज्ञ दादर के पठान सरदार जीवन खाँ की याद आई। जिसका गाँव निकट ही था। वह एक बलवान और प्रसिद्ध जमींदार था। डाकेजनी और विद्रोह के अपराध में उसे दो बार शाहजहाँ ने हाथी के पाँव तले कैद देने का दण्ड दिया था और दोनों बार दारा ने उसके प्राण की रक्षा की थी। दारा ने सोचा कि उससे कुछ लिखाइयों की सहायता मिल जाय तो उस के किले को, जिसे मीरबाबा घेरे पड़ा था—कब्जे में कर ले और वहाँ जो जलाना है उससे नई सेना भरती करके भाग्य की परीक्षा करे। या फिर काबुल का कन्धार चला जाय।

बोलन घाटी की भारतीय सीमा के छोर से नौ मील पूर्व में स्थित दादर की वह जमींदारी थी—दारा को आशा थी कि दो-दो बार जिसने उसके प्राणों की रक्षा की है—उसके प्रति जीवन खाँ कृतज्ञता प्रकट करेगा।

जीवन खाँ के वहाँ जाने का नाम सुनकर स्त्रियाँ बहुत घबराईं और बोलीं—कि उस डाकू के घर जाना ठीक नहीं है। बेगम और शाहजादी तथा उसके पुत्र सिपर शिकोह ने उसके पाँवों पर गिरकर कहा—"उधर मत जाइए, वह पठान भयानक डाकू है। उसका क्या भरोसा?" उन्होंने यह भी समझाया कि उस के घेरे को बिना उठाए और बिना लड़ाई-झगड़े के भी आप काबुल जा सकते हैं, वहाँ का हाकिम महाबत खाँ

आपकी सहायता करेगा। क्योंकि उसे वहाँ आपने ही हाकिम बनाया था। पर दारा ने न माना—और जीवन खाँ के यहाँ चला गया।

दारा को जीवन खाँ आदरपूर्वक घर ले गया। बेचारी नादिरा बानू दादर पहुँचते-पहुँचते ही मार्ग के कष्टों से मर गई। इस दुःख से दारा पागल हो गया। उसने सब्र किया और उसकी लाश को अपने आध्यात्मिक गुरु मियाँ मीर के कब्रस्तान में गड़वाने को लाहौर भिजवा दिया। इस समय उसके कुछ साथी आ गए थे, उनमें से दस आदमियों को उसने अपने परमभक्त गुरु मुहम्मद की अध्यक्षता में बेगम की लाश की रक्षा करने के लिए भेज दिया और कहला दिया कि लाहौर से उनकी इच्छा वहाँ हो चले जाँय। काबुल चलना चाहें तो हमारे साथ रहें।

जीवन खाँ ने समझा था कि दारा के साथ बड़ी फौज आती होगी। उसने उसे और उसके साथी सिपाहियों को आदर-सत्कार से ठहराया। पर जब देखा कि उसके साथ केवल दो-तीन सौ ही आदमी हैं, तो उसकी नीयत अशर्फियों से लदे खच्चरों को देखकर बदल गई। जो लूटमार से अब भी उसके पास बच रहे थे, और भटक भटका कर उसके बिछड़ी आदमी उन्हें वहाँ ले आए थे। उसने एक दिन रात के समय बहुत से लुटेरों को जमा किया, और दारा के सब रुपए-पैसे, असबाब, स्त्रियों के आभूषण छीन लिए—और दारा और उसके पुत्र सिपहर शिकोह पर आक्रमण किया। जिन्होंने बाधा दी उन्हें तलवार के घाट उतार दिया। फिर उन दोनों भाग्यहीन बाप-बेटों को, दोनों शाहजादियों सहित हाथ-पाँव बाँध हाथी पर सवार कराया। एक बधिक को नंगी तलवार लेकर उनके पीछे बैठा दिया और कहा कि ये लोग जरा भी हाथ-पाँव हिलाएँ, या इनका कोई मददगार छुड़ाना चाहे तो उसी वक्त सिर काट डालना।

इस प्रकार अपमानजनक रीति से उसने दोनों बाप-बेटों को ठट्ठे में मीरबाबा के सुपुर्द कर दिया।

७२

दिल्ली के बाज़ारों में

सावन की कड़ीली धूप थी। दिल्ली के बाज़ारों में बड़ी उत्तेजना फैली थी। लटाक्षट सब दुकानें और कारबार बन्द होते जाते थे। लोग इधर-से उधर भागे जाते थे, शहर में बलवे के आसार नज़र आ रहे थे। लोगों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ रही थीं और चारों ओर घबराहट फैल रही थी।

एक हथिनी झूमती मस्ती चाँदनी चौक में बढ़ी चली आ रही थी, वह कोई सीलोन वाली सिंहलद्वीप की या ऐरावत की हथिनी न थी जिस पर शाहज़ादा सब चल कर बैठा करता था। एक मस्ती और लड़कियत हथिनी थी जिस पर कूदे होदे में पोलिया का शानदार पुलतन, मुग़ल साम्राज्य का कर्ता-धर्ता दारा और उसका राजकुमार सिपर शिकोह बैठा हुआ था जिसकी आयु केवल पन्द्रह साल की थी। इनके पीछे हाथ में नंगी तलवार लिए कैदखाने का अफ़सर गुलाम नबर बेग बैठा था। संसार के इस सबसे समृद्ध साम्राज्य के उत्तराधिकारी के वस्त्रों में न तो हीरों का चमका ही था, न हमेशा सुशोभित होने वाले जवाहरात ही से वह सुसज्जित था। उसके शरीर पर ज़रबफ़्त का कबा और सिर पर वह पगड़ी न थी, जो भारतवर्ष के बादशाह पहना करते हैं। वे पिता-पुत्र मोटे कपड़ों की मैली कुचैली बनावटवाली पहने थे, जो शायद हफ़्तों से नहीं बदली गई थी और जिसे ग़रीब-से-ग़रीब भी दिल्ली में पहनना नहीं पसन्द कर सकता था। एक मैली और काली-कलूटी पगड़ी उसके सिर पर लिपटी हुई थी। उसके पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं। हाथ अकड़ कर बाँधे थे। उसका सिर नीचे झुका हुआ था—और नज़र अपने ही पैरों पर थी। सावन की चमचमाती धूप उनके सिरों पर पड़ रही थी।

इस भाग्यहीन राजपुत्र को इस हीन दशा में देखने के लिए जगह-जगह भीड़ जमा हो जाती थी। लोग खड़े-खड़े दारा के भाग्य पर हाय मलते और रोते थे। चारों ओर से लोगों के रोने चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। जगह-जगह लोग डाकू जीवन खाँ को गालियाँ दे रहे थे। बच्चे उत्तेजित होकर बुरी तरह चीख रहे थे। जीवन खाँ पठान, जिसे अब मलिक का खिताब तथा एक हजारी जात का मनसब मिला था—घोड़े पर सवार हथिनी के साथ था—जिसका नया नाम औरंगजेब ने बख्तियार खाँ रक्खा था।

सवारी आगे बढ़ती गई। साथ ही भीड़ बढ़ती गई। लोगों का रोना-चिल्लाना बढ़ता गया। एक फकीर ने दूर से देखा—वह दौड़ा हुआ दारा के सामने आया। दारा जब-जब बाजार में निकलता था, फकीरों पर अशर्फियाँ लुटाता था—यह फकीर भी उससे बहुत कुछ पाता था। वह अन्धा फकीर था। वह नहीं जानता था कि आज दारा दुर्दिन का शिकार हो रहा है। उसने सुना कि दारा की सवारी आ रही है। उसने दोनों हाथ पसार कर चिल्ला कर कहा—"दारा दाता, आज क्या इस फकीर को कुछ नहीं मिलेगा बादशाह!"

दारा ने सुना। आँख उठाकर उसने फकीर को देखा, जिसकी अन्धी आँखें और हाथ उसी की ओर उठे हुए थे। उसने अपनी कमर में लिपटा हुआ वह कम्बल—जिससे उसका अंग ढँका था, उतार कर फकीर पर फेंक दिया।

दारा की यह उदारता और बेबसी देख लोग जोर जोर से दारा दारा कह कर रो उठे। बहुतों ने दुष्ट जीवन खाँ को पत्थरों से मारना प्रारम्भ कर दिया, यह देख जीवन खाँ प्राण लेकर भाग खड़ा हुआ और हथियारबन्द सिपाहियों की टुकड़ी ने भीड़ को छाँट कर हथिनी को आगे बढ़ाया।

—:०:—

कत्ल

उसी अभागे दिन की रात्रि को लाल किले में मय बादशाह का दीवाने ख़ास में दरबार जुड़ा था। शाइस्ता ख़ाँ, मुहम्मद अमीन ख़ाँ, बहादुर ख़ाँ और दानिशमन्द ख़ाँ आदि चुने हुए अमीर और वज़ीर हाज़िर थे। दरबार में दारा के मारने का फ़ैसला हो रहा था। अनेक हाफ़िज़, उलमा और मौलवी भी हाज़िर थे। शाहज़ादी रोशनआरा झरोखे में बैठी थी। उसने अपनी बारीक आवाज़ में स्पष्ट शब्दों में कहा—

"इस्लाम और सल्तनत की भलाई और बहबूदी के लिए हम मुनासिब समझती हैं कि काफ़िर दारा को क़त्ल कर दिया जाय।"

दानिशमन्द ख़ाँ ने कहा—"यह ठीक न होगा, क़त्ल करने की फ़िलहाल ज़रूरत नहीं, मुमकिन है इससे शहर में बलवा हो जाय। उसे हिफ़ाज़त से ग्वालियर के किले में क़ैद कर लिया जाय।"

शाहज़ादी ने ग़ुस्सा करके कहा—"किस लिए एक काफ़िर और गुमराह क़ैदी को क़ैद करने का ख़तरा उठाया जाय? बस हमारी राय है कि उसे फ़ौरन क़त्ल कर डाला जाय।"

लश्कीशुज़ाह ख़ाँ और शाइस्ता ख़ाँ जो प्रथम ही से उससे जार खाए थे, दोनों ने ज़बर मिलाई और कहा—"क़त्ल, सिर्फ़ क़त्ल।"

इस पर हकीम दाऊद ने—जो ईरान से भागकर हिन्दुस्तान में आ गया था और मुहम्मद की बदौलत इस दर्जे को पहुँचा था, कड़क कर कहा—"बेशक क़त्ल। दारा शिकोह को ज़िन्दा छोड़ना हरगिज़ मुनासिब नहीं है। सल्तनत की बेहतरी और सलामती इसी में है कि फ़ौरन इसकी गर्दन काटी जाए। मुझे उसके क़त्ल की सलाह देने में ज़रा भी सङ्कोच नहीं होता क्योंकि वह बेदीन और काफ़िर है, और

अगर ऐसे कत्ल से कुछ गुनाह आयद होता हो तो वह मेरी गर्दन पर हो।"

इस पर बादशाह ने मौलाना और क़ाज़ियों से फ़तवा माँगा, तबने एक स्वर से फ़तवा दिया—"इस्लाम के खिलाफ़ काम करने वाले को सज़ाए मौत ही मिलनी चाहिए।"

अब बादशाह ने दारा की मौत का फ़र्मान तैयार कराया, जिसपर बादशाह से तनख़ाह पाने वाले इन धर्मगुरुओं ने दस्तख़त कर दिए। यह छोटा-सा दरबार बर्ख़ास्त हुआ और बादशाह औरंगज़ेब चाहिरा अफ़सोस प्रकट करता हुआ और शोकातुर-सा धीरे-धीरे महलसरा में गया।

उसी रात को जहानपुरा के कैदख़ाने में दारा और सिपर-शिकोह बैठे चूल्हे पर दाल पका रहे थे कि गुलाम नज़र बेग, चार दूसरे गुलामों के साथ नंगी तलवारें लिए—बारहदरी में घुस आया। उन्हें देखते ही दारा ने सिपर शिकोह से कहा—"लो बेटा, कातिल आ गए।" यह कहकर वह एक लोटा बर्तन उठाकर उनकी ओर लपका। परन्तु उन बदावर गुलामों ने उसे धरती पर पटक दिया। चौदह वर्ष का बालक सिपर शिकोह पिता से लिपट कर रोने लगा। इस पर नज़र बेग ने उसे खींचकर अलहदा कर लिया और इसी समय एक गुलाम ने खट से दारा का सिर काट लिया। वे तुरन्त उस सिर को और सिसकते हुए सिपर-शिकोह को लिए हुए—वहाँ से चल दिए।

नज़र बेग ने जब चाँदी की थाली में रखकर वह सिर औरंगज़ेब के सामने पेश किया तो उसने उसके मुँह पर का खून धोने का हुक्म दिया। जब उसे भलीभाँति निश्चय हो गया कि वह दारा का ही सिर है तो उसकी आँखों से आँसू निकल पड़े और हाथ मलते हुए उसने कहा—"ऐ बदबख़्त!" फिर उसने कहा—"अच्छा इस दर्दनाक सूरत को मेरे सामने से ले जाओ, और लाश को हाथी पर रखकर शहर में घुमाओ फिर हुमायूँ के मकबरे में दफ़न कर दो।" ऐसा ही किया गया।

(— इसकी दोनों पुत्रियाँ ठंडी रात महल में भेज दी गईं जो कुछ दिन बाद शाहजहाँ और जहाँआरा की प्रार्थना पर उन्हें सुपुर्द कर दी गईं। फिर शिकोह को ग्वालियर के किले में भेज दिया गया।

मलिक जीवन खाँ को जब औरंगजेब ने पुरस्कृत करके विदा किया तो राह ही में कुछ लोगों ने उसे मार डाला। इस प्रकार उस विश्वास-घाती को हार्दिक दण्ड मिल गया।

७४ :

शाही कैदखाना

ग्वालियर का दुर्ग जो उस समय शाही कैदखाना बना हुआ था—एक भारी पहाड़ की चोटी पर तीन फर्लांग के घेरे में बना था। इसके चारों तरफ हरा-भरा मैदान था। दूर-दूर तक कोई ऊँची जगह न थी जहाँ से इस पर हमला हो सके। इस पर चढ़ने का केवल एक ही रास्ता था जिसके दोनों ओर दीवारें और फाटक बने हुए थे जिनमें से प्रत्येक में सिपाही और तोपची मुस्तैद रहते थे। पहाड़ी की राह कुदरती चट्टान के रूप में थी जिसके चारों ओर प्राचीन जमाने की बैठकें, बारहदरियाँ, कुर्सियाँ आदि बनी हुई थीं। पहाड़ की चोटी पर किले के भीतर विस्तृत मैदान था जिसके चारों ओर अनेक महल बने थे। इनमें भिन्न-भिन्न प्रकार के पत्थर के दरीचे, और पेशदालान तथा सुन्दर बजरबाम बने थे। दालान में सफ़ेद और अन्य प्रकार के सुन्दर फूल ऐसे ऊँचे खड़े थे कि दूर से नजर आते थे। इस किले में चमेली का तेल बनाया जाता था, जिसकी बेलें हर्द-गिर्द की तमाम समतल धरती पर अधिकता से फैली हुई थीं। इस इलाके में लोहे की खानें भी अनेक थीं जिससे बेशुमार चीजें तैयार करके साम्राज्य भर में भेजी जाती थीं।

शहर पहाड़ के बगल में था जो नशेबों के लिए प्रसिद्ध था। इसी पेशे से वे रोजी कमाते थे।

मुगल खानदान के शाहजादे और शाही कैदी यहाँ जो एक बार आते थे फिर वापस नहीं जा सकते थे। यहाँ उन्हें सबसे पहले पोस्त पिलाया जाता था। यह अफीम के छिलकों को उबाल कर तैयार किया जाता था। इसके पीने से मस्तिष्क कैदी धीरे-धीरे निस्तेज और दुर्बल हो जाता था। उसका पौरुष और साहस लुप्त हो जाता था। उसकी विचारशक्ति कुण्ठित हो जाती थी और धीरे धीरे अर्धचेतित अवस्था में घुल घुलकर मर जाता था। कैदी जबतक पोस्त का कटोरा न पी लेता था, उसे खाना नहीं दिया जाता था।

अपने को सबसे बड़ा बहादुर और बादशाह समझने वाला बेवकूफ और बदनसीब मुराद बक्श इसी किले में कैद था। किले में कैद हुए उसे तीन साल बीत चुके थे। अब वह जर्जर और लाचारी ऐसा शाहजादा न था जिसे हमने समूगढ़ और विजय के तट पर विजय खड़े देखा था। अब उसके शरीर पर हीरे मोती सजे न थे। न कमर में वह चमकदार तलवार थी, जिसपर उसे बड़ा घमण्ड था। इन सालों में पोस्त पी-पीकर उसकी कमर झुक गई थी। आँखों के चारों ओर स्याही दौड़ गई थी, और वह हर वक्त गुमसुम बैठा अकेला ही बड़बड़ाता रहता था। कभी-कभी वह अपने को बादशाह समझ कर तरह तरह के हुक्म देता—कभी खिलखिलाकर हँसता। कभी हफ्तों खुरचाव पड़ा रहता था।

सर्दी के दिन थे और सुबह का समय। कैदखाने के दारोगा ने एक गुलाम के साथ आकर उसे सलाम किया। गुलाम के हाथ में एक चाँदी का कटोरा था—जिसमें पोस्त भरा था।

मुराद बड़ी देर तक कैदखाने के दारोगा को गुस्से भरी निगाहों से देखता रहा—फिर कहा—"क्या वजह है कि तुम हर रोज इसी वक्त हमारे तशिफ्रए में दखल देते हो। बस, हम यह नापसन्द करते हैं।"

दारोगा ने सिर झुकाकर कहा—"पोस्त पी लीजिए शाहज़ादा।"

"फिर शाहज़ादा, कौन है शाहज़ादा, हम बहोपनाह हैं।"

"बेहतर, अब खुदारा प्याला उठाइए।"

"हम पोस्त नहीं पिएँगे।"

"तो हज़रत आज खाना नहीं मिलेगा।"

मुराद ने और भी गुस्सा करके पोस्त के प्याले को लिए हुए गुलामों की ओर देख कर कहा—

"तुम सब नमकहराम हो, प्याला हमें दो।"

गुलामों ने प्याला उठे दे दिया। मुराद कड़वी दवा की भाँति उसे गटागट पी गया। पीकर उसने प्याला फेंक दिया और कहा—"अब चलो जाओ यहाँ से।"

मगर दारोगा गया नहीं, खड़ा रहा। उसने धीरे से कहा—"कुछ हुसाकती आपसे मुलाकात करने आए हैं।"

"कौन हैं वे, क्या औरंगज़ेब तो नहीं आया है। याद रक्खो, मैं उस शैतान को हरगिज़ माफ न करूँगा।"

"जी नहीं, वे अहमदाबाद के उस सैयद के बेटे हैं जिसे आपने बेगुनाह कत्ल करवा डाला था।"

मुराद का गुस्सा काफूर हो गया। उसने मगमीन स्वर से कहा—"उनका यहाँ आने का मकसद क्या है?"

"वे बदले में आपका सिर लेने आये हैं, जिसका सारी हुकूमत उनके पास है। अब आप तैयार हो जाइए।"

अभी उसकी बात समाप्त भी नहीं हुई थी कि चार सैयद नंगी तलवारों से उसे चारों दिशा से घेर कर खड़े हो गये।

मुराद साक्षात् मृत्यु को सामने देख एकदम उछल कर खड़ा हो गया। उसने इधर उधर अपनी तलवार टटोली, पर तलवार वहाँ कहाँ थी। इसी समय एक सैयद ने बढ़कर उसपर तलवार का वार करते हुए कहा—"यह निर्दोष सैयद के खून का बदला है।" तलवार मोढ़े

शहर पहाड़ के बगल में था जो गवैयों के लिए प्रसिद्ध था। इसी पेशे से वे रोजी कमाते थे।

सुपक्ष खानदान के शाहजादे और शाही कैदी यहाँ जो एक बार आते थे फिर वापस नहीं जा सकते थे। यहाँ उन्हें सबसे पहले पोस्त पिलाया जाता था। यह अफीम के छिलकों को उबाल कर तैयार किया जाता था। इसके पीने से आत्महीन कैदी धीरे धीरे निस्तेज और शिथिल हो जाता था। उसका पौरुष और साहस लुप्त हो जाता था। उसकी विचारशक्ति कुण्ठित हो जाती थी और धीरे धीरे अर्धविक्षिप्त अवस्था में घुल घुलकर मर जाता था। कैदी जबतक पोस्त का कटोरा न पी लेता था, उसे खाना नहीं दिया जाता था।

अपने को सबसे बड़ा बहादुर और बादशाह समझने वाला बेवकूफ और बदनसीब मुराद बख्श इसी किले में कैद था। किले में कैद हुए उसे तीन साल बीत चुके थे। अब वह अर्धोन्मत्त और लापरवाह ऐशोश शाहजादा न था जिसे हमने समृद्धपद और शिमला के तट पर विचरण करते देखा था। अब उसके शरीर पर हीरे मोती सजे न थे। न कमर में वह चकाचौंध तलवार थी, जिसपर उसे बड़ा घमण्ड था। इन सालों में पोस्त पी-पीकर उसकी कमर झुक गई थी। आँखों के चारों ओर स्याही दौड़ गई थी, और वह हर वक्त गुमसुम बैठा अकेला ही बड़बड़ाता रहता था। कभी-कभी वह अपने को बादशाह समझ कर तरह तरह के हुक्म देता—कभी खिलखिलाकर हँसता। कभी हफ्तों चुपचाप पड़ा रहता था।

सर्दी के दिन थे और सुबह का समय। कैदखाने के दारोगा ने एक गुलाम के साथ आकर उसे सलाम किया। गुलाम के हाथ में एक चाँदी का कटोरा था—जिसमें पोस्त भरा था।

मुराद बड़ी देर तक कैदखाने के दारोगा को गुस्से भरी निगाहों से देखता रहा—फिर कहा—"क्या वजह है कि तुम हर रोज इसी वक्त हमारे तखलिए में दखल देते हो। बस, हम यह नापसन्द करते हैं।"

दारोगा ने सिर झुकाकर कहा—"पोस्त पी लीजिए शाहजादा।"

"फिर शाहजादा, कौन है शाहजादा, हम बहेलिया हैं।"

"बेहतर, अब सुराही प्याला उठाइए।"

"हम पोस्त नहीं पिएँगे।"

"तो हजरत आब आबा नहीं मिलेगा।"

मुराद ने और भी गुस्सा करके पोस्त के प्याले को लिए हुए गुलामों की ओर देख कर कहा—

"तुम सब नमकहराम हो, प्याला हमें दो।"

गुलामों ने प्याला उसे दे दिया। मुराद कड़वी दवा की भाँति उसे गटागट पी गया। फिर उसने प्याला फेंक दिया और कहा—"अब चलो आओ यहाँ से।"

मगर दारोगा गया नहीं, खड़ा रहा। उसने धीरे से कहा—"कुछ मुलाकाती आपसे मुलाकात करने आए हैं।"

"कौन हैं वे, क्या औरंगजेब तो नहीं आया है। याद रक्खो, मैं उस शैतान की हरगिज माफ न करूँगा।"

"जी नहीं, वे अहमदाबाद के उस सैयद के बेटे हैं जिसे आपने बेगुनाह कत्ल करवा डाला था।"

मुराद का गुस्सा काफूर हो गया। उसने भयभीत स्वर से कहा—"उनका यहाँ आने का मकसद क्या है?"

"वे बदले में आपका सिर माँगने आये हैं, जिसका सारी दुनिया-भाग उनके पास है। अब आप तैयार हो जाइए।"

अभी उसकी बात समाप्त भी नहीं हुई थी कि चार तरफ नंगी तलवारों से उसे चारों दिशा से घेर कर खड़े हो गये।

मुराद साक्षात् मृत्यु को सामने देख एकदम उछल कर खड़ा हो गया। उसने इधर उधर अपनी तलवार टटोली, पर तलवार वहाँ कहाँ थी। इसी समय एक सैयद ने बढ़कर उसपर तलवार का वार करते हुए कहा—"यह निर्दोष सैयद के खून का बदला है।" तलवार मोटे

पर पड़ी और मुराद दर्द से कराह उठा। खून का फव्वारा बह चला। इसी समय चारों सैनिक उस पर टूट पड़े और उसी जगह उसके टुकड़े टुकड़े कर डाले।

: ७५

शुजा की समाप्ति

अब केवल शुजा ही औरंगजेब का एक शत्रु बच रहा था। उसने यद्यपि समझ लिया था कि औरंगजेब के सैन्य का सामना करना संभव नहीं है। मीरजुमला ने, जिसे बराबर सैनिक सहायताएँ मिलती जा रही थीं उसे चारों ओर से घेर लिया था और वह अब जान बचाने के लिए ढाके की ओर भाग गया था, जो बंगाल का समुद्र के तट पर अन्तिम नगर है। परन्तु वहाँ भी उसे शरण नहीं मिली। वहाँ के सारे जमींदार उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए, तब वह ढाका छोड़ जलमार्ग से समुद्र की ओर चला। ढाका छोड़ने के दो दिन बाद अराकान के राजा के चट्टगाँव के सूबेदार ने उसके पास एकमात्र नावें भेज दी थीं। अब उसे बंगाल को जीतने की तनिक भी आशा न थी। वह कड़ा दिल करके असभ्य मेघों के प्रदेश में जाने को उद्यत हो गया।

उसके इस इरादे को जानते ही उसके कुटुम्बियों और अनुचरों में कुहराम मच गया। परन्तु शुजा ने औरंगजेब के हाथों में पड़ने की अपेक्षा यही ठीक समझा और बीस मई १६६० को वह उस बंगाल को छोड़कर—जहाँ वह बीस वर्ष से भी अधिक समय तक शासन कर चुका था, हमेशा के लिए चला दिया। अराकान की इस जलयात्रा में उसके साथ कुटुम्ब के अतिरिक्त केवल चालीस आदमी और थे।

समुद्र पार जाने के लिए उसके पास न तो जहाज ही थे, न वह यही जानता था कि वहाँ जाने से उसकी रक्षा होगी। अब उसने अपने पुत्र सुलतान बाकी को अराकान के राजा के पास, जो मेघों का राजा

था, मेजकर प्रार्थना की—कि आप कुछ दिन हमें आश्रय दें तो हम आपके पास, आ जायें और जब हवा के चलने की ऋतु आ जाय तब आप मुझे मक्का तक पहुँचाने के लिए अपना एक जहाज दे दें, जिसपर सवार होकर हम मक्का और वहाँ से रूम और ईरान को चले जायें। राजा ने उसे आश्रय देना स्वीकार कर लिया और सुलतान बाकी को कुछ मार्ग, जिसके सहाय गोवा से भागे हुए पोर्चुगीज थे और जो आवारा और डाकू थे, पर अब राजा के नौकर हो गए थे और मौका पाकर बंगाल के समुद्र तट के गाँवों में धावा मारने का काम करते थे, दे दी। शुजा अपनी बेगम और तीन पुत्रियों तथा पुत्रों सहित उनपर सवार होकर अराकान पहुँचा।

राजा ने उसकी कोई बहुत आवभगत नहीं की। पर उसके लिए सब आवश्यकता की वस्तुएँ मुहैया थीं।

वहाँ उसे कई माह बीत गए—अच्छी खासी ऋतु भी आ गई। पर मुल्क जाने के लिए उसे जहाज न मिला। शुजा के पास धन की कमी न थी—वह केवल इतना ही चाहता था कि उसे भाड़े पर जहाज मिल जाय। परन्तु राजा ने उसकी बात पर कुछ ध्यान नहीं दिया। इसी बीच शुजा के मन में एक विकार उत्पन्न हुआ, जिसने उसके हृदय में आशा का संचार कर दिया। उसके साथ कुछ छुटेरे पोर्चुगीज आए थे। कुछ ऐसे ही विदेशी वहाँ अराकान में थे, जिन्हें वहाँ के राजा ने पकड़ कर गुलाम बना लिया था। उसने इन सब बदमाशों का एक संगठन किया और यह षड्यन्त्र रचा कि एकाएक राजा के महल पर आक्रमण करके उसे मार डाला जाय और फिर लौटकर बंगाल में अपने भाग्य की परीक्षा की जाय। परन्तु राजा को किसी तरह उसके षड्यन्त्र का पता लग गया और राजा ने शुजा को पकड़ कर सकुटुम्ब कत्ल कर डालने का हुक्म दिया।

शुजा को जब यह सूचना मिली तो वह भागा। वह पेगू को भाग जाना चाहता था। पर मार्ग दुर्गम पर्वतीय था। वह आठ पहर ही में

पकड़ लिया गया। उसने युद्ध किया—पर उसे बाँधकर राजधानी में लाया गया। सुलतान बड़ी ही वीरतापूर्वक लड़ा, पर उन्होंने उसे पत्थर मार-मार कर लोहू लुहान कर दिया। शुजा की बेगम और लड़कियों को भी कैद कर लिया गया। उनके साथ बहुत निर्दयता की गई। सुलतान शुजा का कत्ल कर दिया गया। उसकी बड़ी लड़की से राजा ने विवाह कर लिया। सुलतान बाकी ने अवसर पाकर फिर एक षड्यन्त्र रचा, जो खुल गया। इसपर राजा ने क्रुद्ध होकर इस समूचे राज-परिवार को तलवार के घाट उतार दिया। यहाँ तक शुजा की वह लड़की—जिसके साथ राजा ने विवाह कर लिया था और जब गर्भवती थी, निर्दयतापूर्वक कत्ल कर दी गई और उसके भाइयों तथा सुलतान बाकी के सिर कुल्हाड़ों से काट डाले गए।

७६ :

आखिरी शिकार

अपने सब भाइयों पर विजय प्राप्त करके अन्त में औरङ्गजेब का ध्यान मारवाड़ीन राजा के अभागे पुत्र सुलेमान शिकोह की ओर गया। उसने बदख्शाँ के राजा पर परवाना भेजा कि शाहजादे को शाही दुर्ग में भेज दे। पर बूढ़ा राजा सम्राट्‌ का उसके शत्रु को सौंपने को राजी न हुआ। फलतः औरङ्गजेब ने राजा पर चढ़ाई का इरादा किया। इसपर राजा का युवक पुत्र अपने पिता के राज्य को खतरे से बचाने के लिए शाहजादे को औरङ्गजेब को सौंप देने को राजी हो गया। जब शाहजादे को यह समाचार मिला तो वह बर्फीले पहाड़ पार कर लद्दाख पहुँचने की चेष्टा करने लगा। परन्तु उसे पकड़ लिया गया। आत्म-रक्षा के लिए युद्ध करके वह घायल भी हुआ। उसे अन्त में औरङ्गजेब को सौंप दिया गया।

वह शाहजादा कैदी के रूप में अपने भयानक चाचा के सामने दीवानेख़ास में लाया गया। सभी खास-खास अमीर उमरा दरबार में हाज़िर थे। दरबार से बाहर ही कैदी की बेड़ियाँ निकाल दी गईं। परन्तु हथकड़ियाँ जिन पर सोने का मुलम्मा किया हुआ था, हाथों में पड़ी थीं। उस सुन्दर सजीले शाहजादे को इस अवस्था में देखकर दरबारियों की आँखों से आँसू बहने लगे। झरोखे में बहुत-सी बेगमात भी इस मार्मिक दृश्य को देखने के लिए आ बैठी थीं।

बादशाह ने शाहजादे की हालत पर अफ़सोस प्रकट किया, और कहा—"ज़रा इधर नज़र करो, और इत्मीनान रक्खो कि तुम को ज़रर ही पहुँचाया जायगा, बल्कि तुम्हारे साथ मिहरबानी की जायगी। तुम्हारा बाप तो सिर्फ़ इसलिए क़त्ल हुआ कि वह काफ़िर और ला-मज़हब हो गया था।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने बादशाह को बंदगी की और आदाब बजाया और कहा—"अगर हुज़ूर की मन्शा यह हो कि मुझे पोस्त पिलाए जाया करें, तो बेहतर है कि मुझे अभी क़त्ल करा डाला जाय।"

बादशाह ने कहा—"नहीं, तुमको पोस्त हर्गिज़ नहीं पिलाए जाएँगे, इत्मीनान रक्खो।"

इस पर सुलेमान शिकोह ने बादशाह को फिर उसी प्रकार सलाम किया। बादशाह ने कहा—"तुम क्या उस हाथी की बाबत कुछ बता सकते हो—जिसपर अशर्फ़ियाँ लदी थीं और जो लूट लिया गया था?"

"हुज़ूर, मैं कुछ अर्ज़ नहीं कर सकता—कि उसका क्या हुआ। लेकिन उस हाथी पर दो लाख रुपयों की अशर्फ़ियाँ थीं।"

इसके बाद बादशाह के संकेत से वह दीवाने आम में से लाया गया, जहाँ से वह दूसरे दिन ग्वालियर के दुर्ग में भेज दिया गया। जहाँ वह एक साल तक पोस्त पी-पी कर, अन्त में मर गया।

विहंगम दृष्टि

औरङ्गजेब का सारा शासन काल २५-२६ वर्ष के दो समान भागों में बँट जाता है। पहला अर्द्धांश उत्तर भारत में और दूसरा अर्द्धांश दक्षिण भारत में। पहला काल उत्तर भारत का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काल है। इस काल में सम्पूर्ण सार्वजनिक व सैनिक कार्यवाहियों का केन्द्र उत्तर भारत ही रहा। परन्तु अपने शासन के उत्तरार्ध में औरङ्गजेब अपने कुटुम्बियों, अमीरों, दरबारियों, बड़े-बड़े हाकिमों और सारी सेना के साथ दक्षिण में पड़ा रहा, और राज्य की सारी शक्तियाँ दक्षिण में जुट गईं। इसका यह परिणाम हुआ कि उत्तरी भारत की शासन-व्यवस्था गड़बड़ा गई, जिससे प्रजा में दरिद्रता व्याप गई और राज-कर्मचारी भ्रष्टाचारी हो गए। यह परिस्थिति पूरे पच्चीस वर्ष तक रही। साम्राज्य का ढाँचा बिखर गया और उसमें अराजकता के लक्षण दीखने लगे।

यह एक मार्के की बात है कि औरङ्गजेब के शासन के पूर्वार्ध में जो महत्वपूर्ण घटनाएँ पड़ी वे उत्तरी भारत के किसी एक ही स्थान में केन्द्रित न थीं। इस काल में साम्राज्य का सारी झंडा अवुल से लेकर कामरूप की पहाड़ियों तक और तिब्बत से बीजापुर तक फहराने लगा।

शासन काल के दूसरे वर्ष तेरह मई १६५९ में औरङ्गजेब बड़ी धूमधाम से दिल्ली के तख्ते-ताऊस पर बैठा और इस अवसर पर राज्य भर में उत्सव मनाया गया। शासन काल के पाँचवें वर्ष यह कश्मीर गया, लेकिन जब तक शाहजहाँ किला कैद में रहा, औरङ्गजेब आगरे नहीं गया। न उसने वहाँ दखल किया। १६६७ फरवरी में जब शाहजहाँ की मृत्यु हुई, तब वह आगरे गया। राज्यकाल के इक्कीसवें वर्ष में उसने अपने राज्याभिषेक की तिथि का उत्सव मनाने और भेंट लेने की

रस्म को बन्द कर दिया। शासन काल के बारहवें वर्ष में उसने हिन्दू मन्दिर तोड़ने की आज्ञाएँ प्रचारित कीं। इस बीच में राव करण और मेवाड़ का राणा जसवन्तराव विद्रोही हुए। राज्यारोहण के दूसरे वर्ष ही उसने बहुत से करों को माफ कर दिया, लेकिन साथ ही साम्राज्य में कट्टर इस्लाम की स्थापना के लिए कुछ आज्ञाएँ प्रचलित कीं। कुछ प्राचीन रस्म बन्द किए। शाही सिक्कों पर जो कृष्ण की मोहर लगती थी, वह बन्द कर दी और नारीज का त्योहार भी बन्द कर दिया। नशीली चीजों का सेवन, जुआ खेलने और शराब पीने की भी मनाही कर दी। जेलहज मई १६५६ को साम्राज्य भर में भाँग की भी पैदावार रोक दी गई। पुरानी मसजिदों की मरम्मत की गई और इमामों, मुअज्जिनों और खतीबों के वजीफे मुकर्रर किए। इक्कीसवें साल उसने दरबार में गाने-बजाने की पूरी मनाही कर दी। साथ ही जन्मतिथि पर तुलादान करने की परिपाटी भी रोक दी। दरबारियों को हिन्दू तरीके से प्रणाम करना रोक दिया गया। शाही नगाड़ा जो अब तक दिन भर बजता था, अब सिर्फ तीन घंटे बजने लगा। बड़े-बड़े राजाओं को राज सौंपने के वक्त बादशाह अपने हाथ से जो तिलक करता था, वह रोक दिया और झरोखे में बैठकर दर्शन देने की प्रथा भी बन्द कर दी। नर्तकी और वेश्याओं को विवाह करने को मजबूर किया और सती प्रथा को भी बन्द करने की आज्ञा दी। छोटे बच्चों को गुलाम बनाकर बेचना और हरम में नौकरी करने के लिए उन्हें हीजड़े बनाने की भी सख्त मनाही कर दी गई। कट्टर इस्लामी धर्म के विरोधी फकीरों में मियाँ मीर के शागिर्द शाह मुहम्मद बदख्शी और सूफी फकीर सरमद, मुहम्मद ताहिर और एक पुर्तगाली पादरी को धर्मभ्रष्ट होने के अपराध में कत्ल कर दिया। बोहराओं के धर्मगुरु सैय्यद कुतुबुद्दीन को, जो अहमदाबाद में रहते थे, उनके सात सौ शिष्यों सहित कत्ल करा दिया गया। राज्याभिषेक के बाद ही सैय्यद मीर इब्राहीम को साढ़े सैंतीस लाख रुपया देकर मक्का मदीना सैयद बाँटने के लिए भेज दिया।

आमेर से भागते वक्त दारा अपने हरम की औरतों और लड़कियों को मय उस्ताद खान के जवाहरात के—जो आमेर के किले में छोड़ गया था, अपने कब्जे में कर लिया और दारा की खानिंदानी लौंडी को अपने हरम में दाखिल करके उसका नाम उदयपुरी बेगम मशहूर कर दिया। साथ ही किले के सब हाथी घोड़ों और कपड़ों पर अपना कब्जा कर लिया।

मुहम्मद सुलतान को कैद करके ग्वालियर भेज दिया गया। मुतमाद नाम के एक हिजड़े को आमेर के किले का अफसर बना दिया। जिसने कैदी शाहजहाँ के साथ बड़ी सख्ती और निर्दयता का व्यवहार किया। उन दिनों पिता पुत्र में जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसमें औरंगजेब ने अपनी स्वार्थपरता और नम्रता का पूरा दिखावा करते हुए, और अपने पिता को शासन के अयोग्य और अशक्त कहते हुए अपने कामों का समर्थन किया। उसने बादशाह को लिखा कि जब तक हुकूमत की बागडोर आपके हाथ में थी, मैंने बिना आपके हुक्म के कोई काम नहीं किया। आपकी बीमारी में दारा ने राजकाज अपने हाथ में ले लिया और इस्लाम के खिलाफ कार्यवाहियाँ कीं। मेरा इरादा विद्रोही बनकर आगरे में आने का नहीं था। मैं तो सिर्फ दारा के इस्लाम विरोधी कामों और कुफ्र से लड़कपन को पाकसाफ करना चाहता था। बादशाह बनने में मेरा अपना कुछ भी स्वार्थ न था। बादशाह के लिए यह मुनासिब नहीं कि वह अपने ऐशोआराम में लगा रहे। उसका फर्ज है कि वह आम लोगों की भलाई में अपना सारा समय लगाए।

शाहजहाँ औरंगजेब की इस दशा और दुर्भेदनी को समझता था, और उसने यह भी समझ लिया था कि अब उसका कोई चारा नहीं चल सकता। अन्त में हार मानकर बूढ़े शाहजहाँ को दुर्भाग्य के सामने सिर झुकाना पड़ा। एक के बाद एक दुखदायी चोट उसपर पड़ी। दारा, मुराद और सुलेमान कत्ल किए गए। शुजा को मेवों के देश में जाकर जुल्फाओं का शिकार बनना पड़ा। अन्त में उसने ईश्वर का

लगा लिया। बंगाल का सैय्यद मुहम्मद, जो उसका गुरु, शिक्षक और विद्वान् पुरुष था, अन्त तक बादशाह की सेवा में रहा और उसके साथ शाहजादी जहाँआरा भी, जिसने अपने पिता के लिए सब सुखों को तिलाञ्जलि दे दी—उसके साथ रही। अन्त में चौहत्तर साल की उम्र में—जबकि आगरे में बहुत कड़ी सर्दी पड़ रही थी, मृत्यु उसके निकट आई और उसने परमात्मा को उसकी कृपाओं का धन्यवाद दिया और अपने आपको उसके हवाले कर दिया। मरने से पहले उसने एक वसीयत लिखी और अपने कुटुम्बियों और नौकरों को इनाम दिए। उस वक्त उसके पास उसकी दो बेगमें अकबराबादी महल और फतहपुरी महल, बेटी जहाँआरा और दूसरी स्त्रियाँ थीं जो रो रही थीं। अन्त तक बादशाह के होश-हवास ठीक रहे और वह स्त्रियों को तसल्ली देता रहा। अपनी बेगम मुमताज महल की यादगार ताज की ओर मुतम्मन बुर्ज में लेटा हुआ वह टकटकी लगा कर देखता रहा। उसने कलमा पढ़ा और प्रार्थना की कि ऐ खुदा इस दुनिया में मेरी मदद कर, और उस दुनिया में दोजख की आग से बचा। जब सुबह समय तथा सात बजे सूरज अस्त हो रहा था, इस बड़े बादशाह ने अपनी आखिरी साँस ली।

जिस दिन शाहजहाँ को कैद किया गया था, उसी दिन मुतम्मन बुर्ज के नीचे सीढ़ियों का दरवाजा ईंटों से चुनकर बन्द कर दिया गया था। वह दरवाजा इस समय तोड़कर उसी राह से उसका जनाजा ताजमहल पहुँचा दिया गया, और उसकी बेगम मुमताज महल के पास ही उसे दफ्ना दिया गया।

शाहजहाँ की मृत्यु की सूचना पाकर जब औरङ्गजेब आगरा पहुँचा तो अपनी बदनसीब बहन जहाँआरा से मिला। जहाँआरा ने एक थाल भर कर हीरे उसके नजर किए और कहा कि बादशाह तुम्हारे अपराधों को क्षमा कर गया है और क्षमा-पत्र पर हस्ताक्षर कर गया है। इसपर औरङ्गजेब लज्जित हुआ और अपनी बहन के आराम से रहने का पूरा पूरा बन्दोबस्त कर गया।

इस बीच सीमाओं पर निरन्तर युद्ध होते रहे। अफगानिस्तान से युद्ध हो रहा था। मीरजुमला कूचबिहार और आसाम में फँसा रहा, अन्त में उसको कामयाबी हासिल हुई और ब्रह्मपुत्र के उत्तरी तट से लेकर बलिंग नदी के दक्षिण तट के पश्चिम भाग तक का आसाम प्रदेश मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। यह मीरजुमला की आखिरी फतह थी। इसके बाद ही मार्च १६६३ को वह महान् राजनीतिक सेनापति मर गया।

मीरजुमला के समान उस युग में दूसरा सेनानायक राजपुरुष मुगल राज्य में न था, जिसने कठिनाइयों पर कठिनाइयाँ सहन करते हुए अपना अनुशासन कायम रखा। यह बीस मन हीरों का मालिक—और बंगाल जैसे धनी प्रदेश का सूबेदार होते हुए भी मृत्यु के समय तक सामान्य सैनिकों की तरह युद्ध की कठिनाइयों को उठाता और कठिन परिश्रम करता रहा। उसके आदेश बड़े-कड़े होते थे और वह सदैव सतर्क रहता था। एक शब्द में कहा जा सकता है कि औरंगजेब का निर्माण मीरजुमला ने ही किया। इस प्रकार निरन्तर पच्चीस वर्ष तक कामरूप से लेकर आसाम के अन्तिम छोर तक उत्तर भारत बराबर संघर्ष और हलचलों का केन्द्र रहा।

औरंगजेब कट्टर मुसलमान था और इस्लाम के अतिरिक्त किसी भी धर्म या जाति के प्रति उदारता प्रकट करना वह पाप समझता था। उसने अपने राज्य में इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बियों को सब राजनैतिक अधिकारों से वंचित करना प्रारम्भ कर दिया। इसका अभिप्राय यह था कि कोई भी अन्य धर्मावलम्बी किसी भी मुस्लिम राज्य का नागरिक नहीं हो सकता।

इस्लाम धर्म के अनुसार प्रत्येक मुस्लिम शासक खुदा का प्रतिनिधि होता है, जिसका प्रधान उद्देश्य इस्लाम को फैलाना है। उसे जिहाद करने का हक है, जिसका मतलब यह है कि जब पवित्र माह समाप्त हो जाय, तब उन सब आदमियों को जो ईश्वर के साथ और देवताओं के

नाम भी छोड़ते हैं, जहाँ मिलें मार डाले जायँ, या गुलाम बना लिए जायँ, कोई भी अन्य धर्मावलम्बी इस्लामी राज्य में एक दलित समाज के आदमी की तरह रह सकता है कि जिसकी स्थिति एक गुलाम से कुछ ही अच्छी रहती है। ईश्वर के द्वारा दिए गए जीवन और धन का भोग करने के लिए इस्लामी शासक जो उसे जिन्दा रहने देते हैं, उसके बदले में उसका फ़र्ज़ हो जाता है कि वह सब नागरिक अधिकार को त्याग दे और कर के रूप में धन दे जो जज़िया कहाता है। उसे न तो सेना में भरती होने का अधिकार है, न धन संग्रह करने का। उसे जिम्मी कहा जाता है। वह न घोड़े पर चढ़ सकता है, न हथियार बाँध सकता है, न महीन कपड़ा पहिन सकता है। जिम्मी को अदालत में गवाही देने का भी हक़ नहीं है। उसका यह कर्तव्य है कि वह इस्लाम के प्रत्येक सदस्य के साथ सम्मानपूर्वक दीन भाव से रहे। उसे मार डालने, लूट लेने की आज्ञा पैग़म्बर ने मुसलमान को दी है।

मुग़लों के पहले सभी मुसलमान सुलतानों ने ऐसी ही कट्टर मुस्लिम मान्यताओं से काफ़ी अत्याचार और खून खराबी से भरे हुए शासन किए। परन्तु अकबर ने सब से पहले यह धार्मिक द्वेष दूर किया और हिन्दुओं से न केवल राजनैतिक सहयोग स्थापित किए, बल्कि उनके साथ बेटी-व्यवहार के सम्बन्ध भी स्थापित किए। परन्तु औरङ्गज़ेब ने फिर से उसी धर्मान्धता का प्रचार किया और हिन्दू धर्म पर धीरे धीरे आक्रमण करने आरम्भ किए। सन् १६४४ में जब वह गुजरात का सूबेदार था, उसने अहमदाबाद के सरकार ही बने हुए चिन्तामणि के प्रसिद्ध मन्दिर को गो-हत्या करके भ्रष्ट कर दिया। बाद में उसे मसजिद बनवा दिया। गुजरात के और मन्दिरों को भी उसने ढहा दिया। अपने राज्य के पहले ही वर्ष में उसने बनारस में एक नए मन्दिर बनाने की आज्ञा नहीं दी। साथ ही उसने कटक से लेकर मेदिनीपुर तक के सब छोटे-बड़े मन्दिरों की मरम्मत बन्द कर दी।

सन् १६६९ के अप्रैल में उसने एक आम हुक्म दिया कि हिन्दुओं

की सब पाठशालाएँ और मन्दिर गिरा दिए जायँ और उनकी धार्मिक प्रथाएँ बन्द कर दी जायँ। इसी समय उसने गुजरात का सोमनाथ मन्दिर, बनारस का विश्वनाथ मन्दिर और मथुरा का केशव राय का मन्दिर ढहाया। मथुरा हिन्दुओं का एक अच्छा धर्म केन्द्र था, विशेषकर वैष्णवों का बहुत प्रसिद्ध केन्द्र बन चुका था। दुर्भाग्य से यह शहर देहली और आगरा के बीच आने वाली सड़क पर था, इसलिए इस पर औरङ्गजेब की उससे क्रूर दृष्टि पड़ी और उसने अब्दुल नबी नाम के कट्टर मुसलमान को मथुरा का फौजदार नियुक्त किया, जिसने वहाँ के केशव राय के मन्दिर को ढहा दिया और मथुरा शहर का नाम बदल कर इस्लामाबाद रख दिया।

इसी समय उसने एक महकमा कायम करके साम्राज्य भर के सारे सूबों, परगनों और शहरों में मोहतसिब नियुक्त कर दिए, जिनका काम हिन्दुओं के तीर्थों और मन्दिरों को तहस-नहस करना ही था।

१६८० में उसने आमेर रियासत के सब मन्दिर तुड़वा डाले, और गुजरात के हिन्दुओं से जो जमीनें वजीफे के रूप में मिली थीं, सब बन्द कर दीं। १६७६ में औरङ्गजेब ने साम्राज्य भर के गैरमुस्लिमों पर जजिया कर लगा दिया। स्त्रियों, चौदह वर्ष से कम उम्र के बच्चों और गुलामों को इस कर से छूट दी गई। मठाधीशों और महन्तों को भी यह कर चुकाना पड़ता था। यह कर तीन दरों में लिया जाता था जो बारह, चौबीस और अड़तालीस दरहम प्रति वर्ष थीं। शिवाजी मराठा और उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने इस कर के खिलाफ बहुत कुछ कहा-सुनी की। दिल्ली और आसपास की प्रजा ने भी प्रार्थना की, परन्तु औरङ्गजेब ने उस पर ध्यान नहीं दिया। इस कर से बहुत बड़ी रकम वसूल होती थी। अकेले गुजरात से ही पाँच लाख रुपये आते थे। इस कर से बचने और अपमानों से छुटकारा पाने के लिए लाख बड़ा बड़ मुसलमान होने लगे। इतने पर भी औरङ्गजेब खुश नहीं हुआ। उसने मुसलमान सौदागरों पर से चुङ्गी कर बिल्कुल उठा लिया, लेकिन

हिन्दू सौदागरों पर पाँच प्रतिशत चुंगी कर बढ़ा दिया। जो लोग मुसलमान हो जाते थे, उन्हें इनाम मिलते थे। जमीन-जायदाद मिलती थी, ऊँचे पद मिलते थे, करों से छुटकारा मिल जाता था, विवाह-प्रस्त जायदाद पर उनका अधिकार मान लिया जाता था। १६७१ में बादशाह ने यह हुक्म दिया कि राज के सब कर वसूल करने वाले सब मुसलमान ही हों और हाकिमों और ताल्लुकेदारों को आज्ञा दी कि वे हिन्दू पेशकारों और दीवानों को निकाल कर मुसलमानों को भरती करें। यहाँ तक कि कानून को मुसलमान बनने के लिए एक प्रसिद्ध कहावत बन गई।

मुसलमान होने के लिए हाथियों पर बैठा कर गाजे-बाजे के साथ जुलूस निकाले जाते थे और उन्हें दैनिक तनख्वाहें दी जाती थीं। मार्च १६६९ में उसने हुक्म दिया कि राजपूतों के सिवा और कोई हिन्दू हाथी, घोड़े और पालकी पर न चढ़ने पाए, न हथियार बाँधे। इसी समय उसने साम्राज्य भर में तीर्थों में भरने वाले धार्मिक मेलों को कड़ाई बन्द कर दिया। होली और दीवाली के त्योहार भी सार्वजनिक रूप से नहीं मनाए जाते थे।

इन सब बातों का यह परिणाम हुआ कि हिन्दुओं में विद्रोह की भावना बढ़ती गई। १६६९ में मथुरा में भयानक विद्रोह उठ खड़ा हुआ। इस विद्रोह का नेतृत्व तिलपट के जाट गोकुला ने किया। मथुरा का हाकिम अब्दुल नबी इस विद्रोह में मार डाला गया। गोकुला ने शाहाबाद का परगना लूट लिया। अन्त में गोकुला को दबाने के लिए बड़ी भारी सेना भेजी गई, जिसका नेता इतना अच्छी खाँ था। उसने बड़ा जबर्दस्त दमन किया और गोकुला को सपरिवार कैद कर लिया। लेकिन इसके थोड़े दिन बाद ही राजाराम के नेतृत्व में जाटों ने फिर मथुरा में भारी विद्रोह खड़ा किया। सन् १६७२ में सतनामी सम्प्रदाय के साधुओं ने, जिनका केन्द्र नारनौल था, विद्रोह किया।

यह झगड़ा बहुत शीघ्र एक भारी युद्ध में परिवर्तित हो गया। इसमें

पाँच हजार सतनामी साधुओं ने भाग लिया, जिसका नेतृत्व एक बूढ़ी औरत ने किया। उन्होंने मारनौल के फौजदार को मार भगाया और शहर पर कब्जा कर लिया, मारनौल को लूट लिया और जिले में अपना शासन कर लिया। मस्जिदों को ढहा दिया। इस विद्रोह को दबाने के लिए औरंगजेब को काफी सेना भेजनी पड़ी।

इसी समय पंजाब में सिखों ने सिर उठाया। इस समय सिख लोग गुरु को राजा के समान मानने लगे थे। गुरुओं के दरबार लगते थे और वे दरबारियों और मन्त्रियों से घिरे रहते थे। ये मन्त्री मसन्द कहलाते थे जो कि पठान बादशाह के खिताब 'मसनदे आला' का बिगड़ा हुआ नाम था। जब जहाँगीर ने गुरु अर्जुन पर दो लाख रुपया जुर्माना किया था और जुर्माना न देने पर उन्हें लाहौर में तपती हुई रेती पर बैठने को बाध्य किया था, जिससे उनकी मृत्यु हो गई थी। इसके बाद उनके पुत्र हरगोविन्द ने सिख सम्प्रदाय को सैनिक रूप दिया और एक छोटी-सी सेना बना ली, जिससे बादशाही सेना की एक दो बार झड़प भी हुई। बादशाह ने उसके बाद गुरु तेग बहादुर को दिल्ली में बुलाकर उसका सिर काट लिया और इसके बाद ही गुरु गोविन्द सिंह ने शाही सेना के साथ युद्ध छेड़ दिया।

गुरु गोविन्द ने निरन्तर लड़ाई जारी रखी और बहुत ही शीघ्र औरंगजेब के लिए वे एक कट्टर शत्रु के रूप में खड़ा हो गये। गुरु गोविन्द की मृत्यु के बाद सिखों के छोटे-छोटे दल बन गए और वे डाकुओं के समूह की भाँति फिरते और लूटपाट करते थे। औरंगजेब की धर्मान्धता का यह परिणाम हुआ कि राजपूतों की वीर जाति उसका शत्रु बन गई।

सन् १६७८ के अन्त में जमरूद में जसवन्त सिंह की मृत्यु हुई, उसी समय औरंगजेब ने मारवाड़ को मुगल साम्राज्य में मिला लिया। इस पर दुर्गादास ने बादशाह से लोहा लिया। बादशाह को उससे लड़ने के लिए स्वयं अजमेर जाना पड़ा, जहाँ राठौरों से बड़ा भारी

युद्ध हुआ। बहुत से राजपूत कट मरे और जो बच रहे वे पहाड़ों में छिप गए। किन्तु इसी समय मेवाड़ के राणा राजसिंह ने औरंगजेब को चुनौती दी और औरंगजेब ने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। इस लड़ाई में बड़ी-बड़ी दिक्कतों का सामना करना पड़ा और औरंगजेब घिर गया। इसमें सबसे अधिक अपमान औरंगजेब के छोटे पुत्र मुहम्मद अकबर खाँ को सहना पड़ा जिसकी उम्र छब्बीस साल की थी। निरन्तर हार खाने पर वह झिझक जाता था। अन्त में उसने राजपूतों से मिलकर औरंगजेब के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया, जिसे दबाने में औरंगजेब को बहुत अधिक प्रयास करना पड़ा।

मुगल राज्यकाल में मारवाड़ का एक विशेष सैनिक महत्व था। मुगल राजधानी से समृद्ध उद्योग-धन्धे वाले नगर अहमदाबाद और खम्भात के काम-धन्धे वाले बन्दरगाह को जाने वाला सबसे सीधा और नजदीक का व्यापारी मार्ग मारवाड़ की सीमा पर होकर जाता था। यह स्वाभाविक था कि औरंगजेब के दिल में यह भावना पैदा हो कि यदि मारवाड़ राज्य मुगल साम्राज्य में मिला लिया जाय तो न केवल राजपूताने के ठीक बीचोबीच एक सैनिक और व्यापारिक महत्वपूर्ण लम्बे प्रदेश की—जिस पर मुसलमानों का एकाधिपत्य होगा, स्थापना हो जायगी, अपितु उदयपुर के गौरवपूर्ण राणाओं को बगल से घेर लेने के लिए बड़ी भारी सुविधा मिल जायगी।

इसी से महाराज जसवन्त सिंह के मरते ही औरंगजेब मारवाड़ राज्य को प्राप्त करने के लिए तुरन्त स्वयं अजमेर को चल दिया। इस घटना और खबर से राजाओं में बड़ी गड़बड़ी पैदा हो गई। उनमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वे इस सशक्त मुगल सेना का सामना करें। इसी समय औरंगजेब ने हिन्दुओं पर जजिया कर भी लगा दिया था, जो पिछले सौ साल से बन्द था। ये झगड़े हो ही रहे थे कि अमरूद से लौटते समय जसवन्त सिंह की दो विधवा रानियों ने लाहौर में दो पुत्रों को जन्म दिया। एक तो कुछ दिन बाद मर गया, दूसरे

अजीत सिंह को लेकर जसवन्त सिंह का कुटुम्ब दिल्ली पहुँचा। अजीत सिंह के अधिकारों के सम्बन्ध में औरङ्गजेब से बहुत बातें हुईं, परन्तु कुछ निर्णय नहीं हुआ और रानी वीरतापूर्वक बालक राजा को लेकर अपने गुटीयर सिपाहियों के साथ मारवाड़ करके निकल गई और उदयपुर के महाराणा की शरण ली। बादशाह यह सुन कर बहुत गुस्से में आया और बड़ी भारी सेना लेकर अजमेर पहुँचा। वहाँ का मुगल हाकिम फौजदार तहव्वुर खाँ था। पुष्कर में राजपूतों से उसकी लड़ाई हुई। राजपूत हार कर पहाड़ों में छिप गए। कहने को बादशाह जीत गया, किन्तु वास्तविक बात यह थी कि राठौरों ने निरन्तर तीस वर्षों तक स्वतन्त्रता का यह युद्ध चलाया और अन्त में अजीत सिंह को जोधपुर का अधिपति बना कर बैठाया।

उदयपुर के राणाओं ने जो राठौरों को सहायता दी उसके एवज में औरङ्गजेब ने मेवाड़ को एकदम तहस नहस कर दिया। लगातार कई वर्ष तक लड़ाई करने के बाद महाराणा से सन्धि हो गई और इस प्रकार से तब औरङ्गजेब अपनी दृष्टि से विजयी हो चुका था। उसके पुत्र अकबर ने राजपूतों से मिल कर विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। परन्तु उस वक्त उसको सफलता नहीं मिली और उसे दूर दक्षिण में जाकर शिवाजी के अयोग्य पुत्र शम्भुजी की शरण लेनी पड़ी। यह एक ऐसी भयानक बात थी कि जो औरङ्गजेब को दक्षिण खींच ले गई, वहाँ उसे पच्चीस वर्ष तक निरन्तर घोड़े की पीठ पर रहना पड़ा और वहीं की मिट्टी में उसे दफ़न होना पड़ा। जिस अमूल्य तख्तेताऊस के लिए उसने अपने बाप को कैद किया, भाइयों को कत्ल किया, उसपर आराम से बैठना उसे नसीब नहीं हुआ। उसके शासन के इस पिछले पच्चीस वर्षों में उत्तर भारत की सारी ही शासन व्यवस्थाएँ बिगड़ गईं, क्योंकि उस समय राज्य की सारी शक्तियाँ दक्षिण में आ लगी थीं। बादशाह स्वयं अपने कुटुम्बियों, दरबारियों, हाकिमों और सारी सेना के साथ दक्षिण चला गया था। इस प्रकार

अनिच्छापूर्वक देशनिकाले के दिनों में दक्षिण में पड़े हुए अधिकारी और सैनिक अपने घरों को लौट आने के लिए बेचैन हो गए। यहाँ तक कि एक अफसर दिल्ली आने के लिए एक वर्ष की छुट्टी लेने के लिए बादशाह को एक लाख रुपया भेंट करने को तैयार हो गया। राजपूतों ने भी शिकायत की कि हम इस प्रकार जिन्दगी भर दक्षिण में पड़े रहे तो हमारे वंश ही नष्ट हो जायेंगे। इधर उत्तरी भारत का शासन-प्रबन्ध ढीला होकर धीरे धीरे बिगड़ता गया, प्रजा गरीब होती गई, लोगों में आचार भ्रष्टता और अकर्मण्यता बढ़ गई। इसके अतिरिक्त राजपूतों में, सिखों में और दूसरी जातियों में जो विद्रोह और अशान्ति के बीज बादशाह बो गया था, उनका पूरा विकास हुआ और साम्राज्य के सारे उत्तरी भाग में एक प्रकार की अराजकता फैल गई। यह परिस्थिति पच्चीस वर्ष तक बनी रही। यह काल थोड़ा न था। इतने काल में तो भारतीय समाज की एक पूरी की पूरी पीढ़ी निकल गई।

दक्षिण में शिवाजी ने औरङ्गजेब की गैरहाजिरी का लाभ उठा कर अपने राज्य का पूरा विस्तार कर लिया था, और अपनी शक्तियाँ बहुत बढ़ा ली थीं। वह दक्षिण का एकछत्र सर्वज्येष्ठ और समर्थ राजा बन बैठा था। अफ़ज़ल खाँ को मारने से और दो बार सूरत को लूटने से उसकी धाक जम गई थी। बीजापुर और गोलकुण्डा के राजा उससे भय खाते थे। दक्षिण में अकेले उसी की तूती बोल रही थी। शिवाजी को परास्त करने के लिए औरंगजेब ने जो उद्योग किए थे, उनमें एक बार राजा जयसिंह की सहायता से उसे इतनी ही सफलता प्राप्त हो गई थी कि शिवाजी ने साम्राज्य के प्रति राजभक्त बने रहने की स्वीकृति दे दी थी और आगरे भी चला गया था। परन्तु वो चरम श्रेणी के चमड़ी व्यक्तियों का मेल सम्भव न था। शिवाजी आगरे से लौट कर आया तो उसने पूरे वेग से दक्षिण में मुगलों का संहार आरम्भ कर दिया, और अपने राज्य का अधिक-से-अधिक विस्तार करके दक्षिण की

सब मुस्लिम शक्तियों को दलित करके वह दक्षिण का सबसे बड़ा मुख्य पति राजा बन चुका था। उसके पास अस्सी हजार तक सैनिक लड़ने के लिए तैयार रहते थे। यद्यपि औरंगजेब उत्तर में बड़े झंझटों में फँसा था, फिर भी वह शिवाजी की तरफ से बेखबर न था। उसने शिवाजी को घेर करने के लिए कुछ भी कसर न छोड़ी थी। परन्तु उसका कुछ भी बस न चला और शिवाजी अपने उद्देश्य में सफल होता चला गया। अन्त में शिवाजी की मृत्यु हुई और उसके बाद उसका अयोग्य पुत्र शम्भुजी राजा बना दिया गया। शम्भुजी में पिता के कोई गुण न थे। वह लापरवाह, दुराचारी, मूर्ख और अकर्मण्य व्यक्ति था। यद्यपि लड़ाइयों के जो बीज शिवाजी के मृत्युकाल में फैले हुए थे, उनके कारण शम्भुजी को गद्दी पर बैठते ही लड़ाइयों में फँसना पड़ा, परन्तु उसके दुर्भाग्य से उसी समय औरङ्गजेब का पुत्र अकबर उसकी शरण आ गया जिसके कारण बादशाह औरङ्गजेब एकदम बौखला उठा और एक बड़ी भारी सेना लेकर दक्षिण को चला आया। यहाँ आकर उसने गोलकुण्डा और बीजापुर के राज्यों को तहस-नहस कर दिया। इस समय गोलकुण्डा की गद्दी पर अब्दुल हसन, एक कमजोर और आलसी आदमी था जो न कभी दरबार करता था, न गोलकुण्डा के किले से बाहर आने का साहस ही करता था। उसके हिन्दू मन्त्री मादन्ना और आकन्ना राज्य के सर्वेसर्वा थे। सुल्तान अब्दुल हसन अपने जनानखाने में पड़ा हुआ अनगिनत रखैलियों और नर्तकियों के साथ जीवन बिताता था। उन दिनों हैदराबाद दुराचार और विलास का केन्द्र बन गया था। यहाँ बीस हजार वेश्याएँ थीं, जो हर शुक्रवार को सार्वजनिक चौक में नृत्य करती थीं। अनगिनत शराबखानों में प्रतिदिन बारह सौ बड़ी-बड़ी पलासें ताड़ी की खाली हो जाती थीं। इस प्रकार इस सुल्तान की पौने तीन करोड़ रुपयों की वार्षिक आय ऐश आराम में खर्च हो जाती थी।

दक्षिण में आकर औरङ्गजेब लगातार लड़ाइयों और संघर्षों में

लगा रहा। उसे बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। महा मारी और अकाल से उसका लश्कर तबाह हो गया। चारों ओर लाशों के ढेर लग गए। अन्त में गोलकुण्डा को उसने फतह किया। गोल कुण्डा को जीतने पर वहाँ के किले से उसको सोने-चाँदी के बर्तनों, रत्नों और बहुत सामान के अतिरिक्त सात करोड़ रुपए नकद भी मिले। जीते हुए राज्य की आमदनी दो करोड़ सत्ताइस लाख थी।

बीजापुर राज्य भी उसने विजय किया। बादशाह ने बीजापुर के सुल्तान को 'खाँ' का खिताब दिया और एक लाख रुपया सालाना पेंशन भी नियत कर दी। धूमधाम के साथ उसने अपने रथों पर बैठ कर सोने चाँदी की मोहरें लुटाते हुए बीजापुर में प्रवेश किया और अपनी विजय की सूचना वहाँ की मशहूर जगह 'मलिक मैदान' पर खुदवा दी।

शिवाजी के मरने पर मराठा राज्य में बहुत झगड़े झंझट उठ खड़े हुए थे। शिवाजी का बड़ा लड़का बहुत ही अयोग्य था। इसलिए दरबारियों ने शिवाजी के छोटे लड़के राजाराम को—जिसकी उम्र दस वर्ष की थी, सिंहासन पर बैठा दिया। परन्तु इससे मराठे सरदारों में आपस में फूट पड़ गई और सेनापतियों ने शम्भुजी का ही राजा मान लिया। शम्भुजी ने जब उसके विद्रोही शाहजादे अकबर को शरण दी तो बादशाह का गुस्सा और बढ़ गया। वह शाहजादा एक अजात गाँव में बैठा हुआ मेना की मसनदों की सजावट कर रहा था। इस समय उसके पास दो हजार घुड़सवार थे। उधर शम्भुजी दिन-पर-दिन आलसी और बेपरवाह होता जाता था। उसने सब राजकाज अपने मंत्री कवि कलश पर छोड़ दिया था, जो इलाहाबाद का एक कनौजिया ब्राह्मण था। जब औरंगजेब ने चारों ओर से उस पर चढ़ाई की, तब उसे बहुत सी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। परन्तु शम्भुजी के दुराचार और अस्थिर चित्तवृत्ति के कारण उसके बहुत से आदमी उसे छोड़-छोड़ कर मुगलों से जा मिले। इससे उसका संगठन टूट गया। बादशाह

चढ़ाई पर चढ़ाई करता जा रहा था कि इसी समय शाही लश्कर में प्लेग फूट निकला—जिससे एक लाख आदमी मर गए।

जिस समय शाहज़ादा अकबर ने चार सौ हुड़तवार सैनिकों का एक दस्ता, जिनमें अधिकांश राजपूत थे, और बारबरदारी के पचास ऊँट लेकर शम्भुजी की शरण ली, उस समय शम्भुजी के सरदार भीतरी विद्रोह कर रहे थे। शम्भुजी ने अपने विरोधियों के नेताओं को कैद कर लिया। फिर भी व्यवस्था बिगड़ रही थी। एक बार भी षड्यन्त्र चल रहा था कि शम्भुजी को कत्ल कर दिया जाय और राजा राम को अकबर के संरक्षण में गद्दी पर बैठा दिया जाय। यह षड्यन्त्र फूट गया और शम्भुजी ने सब विद्रोहियों को निर्दयतापूर्वक मृत्युदण्ड दिया। इसी समय कवि कलश उसके मुँह चढ़ गया और शम्भुजी दिनोदिन निरंकुश होकर सुरा और सुन्दरियों में अपने दिन व्यतीत करने लगा।

यहाँ इस प्रकार दुर्व्यवस्था हो रही थी, औरङ्गजेब ने शम्भुजी पर सब ओर से चढ़ाई करने का निश्चय कर लिया। उधर इसी अवसर में शम्भुजी को पुर्तगालियों से भी उलझना पड़ा। इससे उसकी शक्तियाँ और भी क्षीण हो गईं। शाहज़ादा अकबर तो अपने मतलब को हल करने की फिक्र में था परन्तु शम्भुजी से उसे कोई सहायता नहीं मिल रही थी। शम्भुजी की अयोग्यता और दुराचार से शरण उसके दरबारी, सरदार पहले ही से उसके विरोधी हो गए थे और जो कसर रह गई थी उसे अब औरङ्गजेब की रिश्वतों ने पूरा कर दिया था। परिणाम यह हुआ कि औरङ्गजेब को बराबर सफलता मिलती चली गई। शम्भु जी फिर भी सावधान नहीं हुआ, न उसने औरङ्गजेब के इस बढ़ते हुए खतरे का कोई उपाय किया। उसके सैनिक मुगल प्रदेशों पर लूट मार करते रहे, परन्तु इसका सैनिक परिस्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। न इन छोटी मोटी बातों की तरफ़ औरङ्गजेब ने ध्यान दिया। उस मराठा राजा के दिमाग में औरङ्गजेब

और बन्धुओं को पकड़ कर कैद कर लिया गया। शम्भुजी के साथ साथ पुत्र शाहूजी को राजा की उपाधि देकर और सात हजारी का मनसब देकर कैद में रखा।

इस प्रकार आदिलशाह, कुतुबशाह और शम्भुजी इन तीनों ही दक्षिण के राज्यों का खात्मा हो गया और वे राज्य मुगल राज्य में मिला लिए गए। इस प्रकार १६७९ के अन्त में ऐसा प्रतीत होने लगा कि औरंगजेब ने सब कुछ प्राप्त कर लिया, पर वास्तविकता यह थी कि वह सब कुछ खो बैठा था।

मुगल साम्राज्य इतना विस्तार में फैल गया था कि इस काल में एक व्यक्ति के द्वारा एक केन्द्र से उस पर शासन होना सम्भव नहीं था। सभी दिशाओं से इसके शत्रुओं ने सिर उठाया और उसने उन्हें दबाया, परन्तु उसका कुचलना सम्भव न था। उत्तरी और मध्य भारत के सब प्रदेशों में अराजकता फैली थी। शासन प्रबन्ध ढीला था भ्रष्टाचार का बोलबाला था। दक्षिण के इस अनन्त युद्ध ने मुगल राज्य का वह अटूट खजाना बिल्कुल खाली कर दिया था जो तीन पीढ़ियों में संचित किया गया था और जिसकी समृद्धि का बोलबाला संसार भर में था।

शम्भुजी की मृत्यु के बाद मराठा संगठन का स्वरूप ही बदल गया। अब वे लूट-मार करनेवाली जाति का विद्रोही मात्र न रहे, मुगल साम्राज्य के एकमात्र प्रबल संगठित शत्रु और दक्षिणी भारत की राजनीति की महत्वपूर्ण शक्ति बन गए। सारे भारतीय प्रायद्वीप में बम्बई से मद्रास तक फैला हुआ सर्वव्यापी यह शत्रु वायु के समान किसी भी पकड़ में न आने वाला था, और मालवा, मध्य प्रदेश, बुन्देलखण्ड तक के मुगल विद्रोही गुट उसके मित्र थे, इसलिए अब औरंगजेब का दिल्ली लौट जाना सम्भव ही न रहा। उसके जीवन के आखरी दिनों में एक ही दुखद घटना की पुनरावृत्ति होती रही—कि बहुत-सा समय, धन और सैनिकों की बरबादी के बाद वह एक पहाड़ी

पिसा जीवता और कुछ ही महीनों बाद मौका पाकर मराठे उसे छीन लेते और बादशाह को फिर चढ़ाई करनी पड़ती। चढ़ी हुई नदियों, दलदल से भरे हुए रास्तों, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ियों व पगडण्डियों में चलने से मुगल सैनिक हतोत्साह हो गए। बहुधा मजदूर भाग खड़े होते। बारबरदारी के जानवर भूख और थकावट से मर जाते और शाही सैनिक हमेशा भूखे रहते, खाने पीने की कमी ही रहती, कभी समाप्त न होने वाले शाही फरमानों से अधिकारीगण थक गए और यह आवश्यक हो गया कि औरंगजेब खुद ही प्रत्येक चढ़ाई का संचालन करे। अब वह अड़ाती वर्ष का बूढ़ा था और मृत्यु उसे चारों ओर से घेरती हुई चली आ रही थी। उसका अर्द्धशताब्दी का शासन बिल्कुल असफल रहा, वह उसे छीज गया था। शाही कोष खाली हो गया था, साम्राज्य दिवालिया था, तीन तीन साल की तनख्वाहें चढ़ी हुई थीं और भूखों मरने वाले सिपाही विद्रोह पर आमादा थे। शाही खजाने का खर्चा बंगाल से मुर्शिदकुली खाँ के द्वारा भेजी जाने वाली रकम से किसी तरह चलाया जाता था, जिसकी बड़ी उत्कण्ठा से इन्तजारी की जाती थी। खेतों में न बीज थे न कोई फसल। वहाँ मनुष्यों और पशुओं की हड्डियाँ बिखरी दीख पड़ती थीं। सारा प्रदेश ऐसा वीरान दीखता था कि तीन-चार दिन निरन्तर यात्रा करने पर ही कहीं आग या दीपक दीख पड़ता था।

अकबर का स्थापित किया हुआ और शाहजहाँ द्वारा समृद्ध किया हुआ संसारप्रसिद्ध मुगल साम्राज्य इस बड़े बादशाह के हाथों सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में मृत्यु के मुख में पहुँच चुका था। उसकी फौज में हर साल कुल मिलाकर एक लाख आदमी मर जाते थे और मरने वाले पशुओं, बारबरदारी के ऊँट बैलों की संख्या तीन लाख से भी ऊपर पहुँच जाती थी। १७०२ से १७०४ तक दो ही वर्षों में दक्षिण में अकाल और महामारी से बीस लाख आदमी मर गए।

अब पूरे राज्य में मराठों का अमल था। उन्होंने सारे रास्ते रोके

हुए थे। अन्न की कीमत बहुत बढ़ गई थी और शाही पड़ाव में लोग भूखों मरते थे। शाही लश्कर के पीछे पचास-साठ हजार मराठे लुटेरों का दल चलता रहता था, जो मौका पाते ही खाने और खाद्य सामग्री को लूट लेता था। उन्हें अब मुगलों का डर न था। मुगल ही उनसे डरने लगे थे। उनके पास तोपें, बन्दूकें, तीर, तलवारें सब कुछ था। सामान ढोने के लिए हाथी और ऊँट भी थे। और इस प्रकार वे मराठा लुटेरे एक सुगठित सैनिक संगठन में सुसज्जित हो गए थे। अन्त में औरंगजेब तीस जनवरी १७०६ को पूरे तेईस वर्ष बाद अहमदनगर लौटा। इस वर्ष उसकी उम्र नब्बे को पार कर चली थी। उसने देखा कि उसके जीवन भर के प्रयत्नों का परिणाम राजनैतिक क्षेत्रों में उलटा ही हुआ। साम्राज्य में अराजकता ही फैल पड़ी। उसके सारे संगी-साथी, अमीर उमराव एक-एक करके मर गए थे। एक कमजोर सत्तरवाँ ही जिन्दा था जो उम्र में बादशाह से दो-चार साल छोटा था। उसका दिल बिल्कुल सूना हो गया था। जब वह शाही दरबारियों पर नजर डालता था तो उसे अपने चारों ओर अनुभवहीन, ऐशपसन्द, जिम्मेदारी से घबड़ाने वाले थोड़ी उम्र के नौजवान ही नजर आते थे, जो निरन्तर दरबार में षड्यन्त्र करते रहते थे। सिर्फ दो ही आदमी उसके लश्कर में, एक उसकी बेटी जीनत उन्निसाँ जो अब बूढ़ी हो चली थी और दूसरी उसकी बेगम उदयपुरी महल—कामबख्श की माँ, जो पशु की तरह मूर्ख और शक्की थी। कामबख्श सनकी, अस्थिर और स्वेच्छाचारी था। उसने अपने बाप की सब आकांक्षाओं का उल्लंघन किया था। मराठों के उपद्रव बहुत बढ़ गए थे। औरंगजेब की आपत्तियाँ बढ़ती जा रही थीं। शाही लश्कर की हालत लकड़बूसा थी। मोहम्मद आजम अपने प्रतिद्वन्द्वियों को रास्ते से हटाकर बादशाह होने की फिक्र में था। अमीरे आजम अलग खाँ भी विद्रोहियों में सम्मिलित हो गया था। उसके सब बेटे आपस में लड़ रहे थे। बादशाह की बक-बक का मजाक के घेरे होते थे। उसने

अपने पास से सब बेटों को विदा कर दिया। अपनी बदीबत की और मृत्यु का मुकाबिला करने की तैयारी की। बीस फरवरी १७०७ शुक्रवार प्रातःकाल बादशाह खजानगाह से निकला, सुबह की नमाज पढ़ी और हाथ में माला लेकर कलमा पढ़ने लगा। धीरे-धीरे उस पर बेहोशी छाने लगी, साँस रुकने लगी, फिर भी आठ बजे तक—जब तक उसका दम नहीं निकल गया, उसकी उँगलियाँ निरन्तर माला फेरती रहीं और होठ कलमा का उच्चारण करते रहे।

अन्त में उसे शेख जैनुद्दीन की समाधि की चारदीवारी में दफन के लिए दौलताबाद के पास खुलदाबाद भेज दिया गया। वहाँ इसकी हड्डियाँ एक साधारण पुरानी टूटी-फूटी कब्र के नीचे दबी हुई हैं, जिस पर न कोई संगमरमर का चबूतरा है, न शानदार गुम्बद।

॥ समाप्त ॥